

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178831

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No.

Accession No.

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.



मूल्य—तीन रुपया

प्रकाशक



द्वितीय संस्करण, माघे १९५६

मुद्रक —

राष्ट्रभाषा मुद्रणालय,
लहरताग, बनारस—४

दो शब्द

इस पुस्तक में सब कथानक पृथ्वीराज रासो के आधार पर वर्णित हैं। केवल कथानक ही नहीं, भाषा, भाव और वर्णन-शैली भी रासो ही की है। मैंने केवल उसे अपने ढङ्ग पर प्रस्तुत करने मात्र का प्रयत्न किया है। जहाँ तहाँ कुछ पंक्तियाँ भी मेरी हैं।

अब बहुत विवाद के बाद यह भली भाँति प्रमाणित हो चुका है कि रासो वास्तव में चन्द्र कवि का बनाया हुआ प्राचीन ग्रन्थ नहीं है। ऐतिहासिक-तथ्यों पर उसमें वर्णित घटनाएँ भी सही नहीं उतरतीं। परन्तु रासो का वर्णन सत्य हो या असत्य, मैं तो उसके प्रसाद-गुण पर मोहित हूँ। इस ग्रन्थ में वीर और शृङ्गार रस का जो प्रबल प्रवाह बहाया गया है, उस की समता अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। मैं तो उस महात्मा कवि को नमस्कार करता हूँ, जिसने अपना नाम गोपन करके अपनी कवित्व सामर्थ्य का सम्पूर्ण श्रेय चन्द्र कवि को प्रदान किया है।

रासो जैसे काव्यों में प्रायः ऐतिहासिक तथ्य कम होते ही हैं। मेरा यह कहना है कि पाठक इस छोटी सी पुस्तक को ऐतिहासिक भावना से नहीं, तत्कालीन राजपूतों के जीवन के रेखा-चित्र की भाँति देखें और इसका रसास्वादन करें।



प्राचीन महाराज्यों की राजधानी महानगरी दिल्ली आज भी अपने भाग्य पर इतराती है। न-जाने इसने कब से कितने नर-नाहरों के प्राणों का संहार किया है। कितनी बार यह महामन्दोदरी विधवा हुई, और फिर से बरी गई। यह अक्षय-यौवना महावेश्या जैसे तब थी, वैसे ही आज भी पृथ्वी की महाशक्तियों की मनमोहिनी बनी है। न-जाने कब से महाराज्यों के प्राण-पतङ्ग इस प्रलय-दीप-शिखा पर कूदकर भस्म हुए, और भविष्य में होते रहेंगे।

आज जो कोई भी चाँदनी चौक से घण्टाघर के नीचे खड़ा होकर काँच के सामन चमचमाती सड़कों और बिजली की अनगिनत दीपावलियों से जगमगाती उस महानगरी को रात में देखता है, आपा खो देता है। जब दिल्ली के छैल-छबीले युवक माँग-पट्टी से लैस होकर; चूड़ीदार चुस्त पायजामा कसे, जर्क-बर्क महीन मलमल की पोशाक डाटे, हाथ में लपलपाता पतला सा बेंत लिए, पान कचरते, इतराते, दोस्तों के साथ मठोली मारते, बाज़ार की सान्ध्य शोभा देखते, खोंचे-

वाले के इर्द-गिर्द बैठ कचालू के चटपटे पत्ते चाटते और फिर चावड़ी बाज़ार के हरे-भरे कोठों पर आँखें सेकते, अपना यौवन धन्य और जीवन सफल करते हुए निकलते हैं, तब हठात् दिल्ली का प्रकृत रूप देखने का मिलता है। बड़े-बड़े मुसलमान व्यापारी तनजेब से अपना सुकुमार शरीर ढके, अपनी भीमकाय दूकानों में मसनद पर पड़े-पड़े ललकती दिल्ली की रङ्गीली भाषा में अपने को वाशिदगान-देहली कहकर परिचय देते हैं, तब हृदय में कुछ और रङ्ग उभरने लगता है। और, जब लोहे का दुश्मना टैट खर्च करके, लाल किले के हृदय को विदीर्ण कर उसके प्रांगण में कालवली के आस से बची हुई सङ्गमरमर की उन धवल अट्टालिकाओं को, जहाँ सात करोड़ मूल्य के तख्त पर बैठकर प्रबल प्रतापी मुगलों ने तलवार के बल पर शासन किया था, और जहाँ कदाचित् बिना आज्ञा के वायु का भी प्रवेश न था, किसी जादूगर की माया से स्तंभित, साप-ग्रसित सी स्तब्ध और मुनसान सन्नाटों में खड़ी देखते हैं, तो आतङ्क छाती में घूँसा मारकर कहता है कि कह, इस जगत का स्वामी कौन है, इन सम्पदाओं का भोक्ता कौन है ?

आज से एक हजार वर्ष पूर्व दिल्ली का कुछ और ही रङ्ग था। पृथ्वी की सम्पदाएँ किस प्रकार वीर-वर भांगा करते हैं, और नर नाहर किस भाँति जिया करते हैं, यह बात आज के गुलाम और नामर्द हिन्दू-भूल गए हैं, परन्तु उस समय जगत में वीरता ही सार थी, वीरता का राज्य और उसकी प्रतिष्ठा थी। राजकवि, राजपुरोहित, राजसेवक भी दो दो तलवार बाँधते और उनके जौहर परख सकते थे, तब कहाँ थे वे चाँदी की मूठ के लपलपाते बेंत, बसली के जूते, नज़ाकत, लताफत ? लोग मर्द के बच्चे थे, और सदैव लाल हंगली खेला करते थे। उन दिनों मृत्यु वीरों के लिए एक उल्लास की वस्तु थी। वे वीर योद्धा शान्ति के दिनों में रस भरे हुए पके, आम की भाँति लोकोत्तर सम्पदा और भोगों को एक ही चुस्की में चूसते और फिर गुठली को अनायास ही

फेंककर लोहे की धार का तीखा रस पी जाते थे । जीवन और मृत्यु, इहलोक और परलोक उनके लिए प्रकृत विनोद था ।

उस समय दिल्ली पर प्रबल प्रतापी नौलाख अश्वारोही श्रेष्ठ नरवरों के अधिपति, संभरीनाथ चौहान कुल-कमल-दिवाकर-महाराज पृथ्वीराज अबाध शासन करते थे । गज़नी के शाह को बारम्बार बाँधकर छोड़ देने के कारण उनका यश देशान्तरों में विस्तार पा गया था । आज जहाँ कुतुबमीनार सिर ऊँचा किए खड़ा मीलों तक फैले हुए खंडहरों पर विपाद-पूर्ण दृष्टि डाल रहा है, वहाँ उस समय महानगरी दिल्ली बसी हुई थी, जिसकी शोभा इन्द्रपुरी के समान थी । आज जहाँ संसार के सप्ताश्रयों का एक आश्चर्य लौह-स्तम्भ है, वहाँ महाराज का सतरुंडा राजमहल था, जहाँ सदा ही चहल-पहल और आमोद प्रमोद रहता था । प्रतापी पृथ्वीराज के पराक्रम से विजित राजा लोग सदैव महलों की पौर पर हाज़िर रहते थे । जिस दुर्धर्प योद्धा के कारण ८० लाख अश्वों का अधिपति कन्नौज-पति जयचन्द थर-थर काँपता था, और गज़नी पति शहाबुद्दीन को जिसके सामन्त बारम्बार बाँध लाते, तथा वह जिसे हँसकर आदर-पूर्वक छोड़ देता था, उस पृथ्वीराज की विभूति और राजश्री का कहाँ तक बखान किया जाय ।

राजमहल के खास महलों में फर्श पर बहुमूल्य, मुलायम ग़िलम-ग़लीचे और गाव तकियों की भरमार थी । चाँदनी-चाँदोबे सब ज़रदोज़ी के थे । दीवारों पर कच्ची सजावट की जगह सच्चे माणिक, मोती, हीरा, पुखराज, पन्ना और नीलम आदि रत्न जड़े थे ।



आज भी निगमबोध को दिल्ली का बच्चा-बच्चा जानता है। आज वहाँ श्मशान-घाट है। अमीर, गरीब हिन्दू इसी पुण्य स्थान पर महा यात्रा करता है। दो-चार चिताएँ वहाँ सदैव ही धधकती रहती हैं। इधर कुछ दिनों से कुछ मनचले रस्सों के पक्के घाट और छोटे-छोटे बार्गीचिं निगमबोध के इधर-उधर बन गए हैं। आशा है, एक हजार वर्ष बाद शायद फिर निगमबोध का यमुना-तट पल्लवित हो। पर उस समय निगमबोध की महिमा ही कुछ और थी। वहाँ की शोभा अकथनीय थी। वहाँ बड़ा भारी राजोद्यान था, जहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की क्यारियों में भौँति-भौँति के तरु, गुल्म, लता लहलहा रहे थे। शीतल, मन्द, सुगंध बग़ार वहाँ सदा ही बहा करती थी। केसर, कुंकुम जाती, मालती, गुलाब, चम्पा, चमेली, कुन्द, कदम्ब आदि के मधु की सोंर्ध सुगंध से वायु मण्डल सुवासित रहता था। अनार, दाख, पिण्डखजूर, लीची, नारियल आदि नाना प्रकार के फलमय वृक्ष मतवालों की भौँति झुक-झुककर झोंका लिया करते थे।

वसन्त की बहार थी, और महाराज की आज्ञा से वसन्त-पञ्चमी के दिन वसन्तोत्सव मनाने की इस रमणीय उद्यान में बड़ी भारी तैयारी हो रही थी। प्रधान ने ढेरों सामग्री वसन्तोत्सव के मनाने को संग्रह की थी। मनोअबीर-गुलाल एकत्रित किया गया था। केसर, कस्तूरी, चन्दन, अगर, कपूर की सुगन्ध, हरे-हरे तरु, लता-पल्लव और बंदनवारों तथा विविध प्रकार के पुष्पों से यथाविधि सभा-मण्डप सजाया गया था। उसके बीच श्रीगोपाललालजी का सिंहासन स्थापित किया गया था। वसन्त-पूजा का

समय आया, ढोल, डफ, नगाड़े, शंख, वीणा, शहनाई, मोरचङ्ग, झालर घण्टा, विजयघण्ट आदिनाना प्रकार के आनन्द-वाद्य बजने लगे। पूजन हो चुकने पर कुछ देर रोशनचौकी की बजौटी होती रही। इसके बाद उत्तमोत्तम गायक गण और नाट्य विद्या में निपुण नट लोगों ने अपने-अपने कौतुक दिखाए। गायकों ने गायन और नर्तकों ने नाचना आरम्भ किया। फिर नट लोगों ने श्रीकृष्ण के लीला-विहार का अभिनय किया। अन्त में सबको इनाम देकर विदा किया गया।

इसके बाद दरबार खास का जमाव हुआ। वीचोर्वाच महाराज पृथ्वीराज का उच्च रत्न-सिंहासन था, उनके सिर पर रत्न जटित छत्र आच्छादित था, और अगल-बगल दुरते हुए मोरछल ऐसे मालूम होते थे, मानो साक्षात् मधु-मास ही राजा पर छत्र-छाया किए हो। पृथ्वीराज के वाम पार्श्व में गोइन्दराय, निडदुर और सलख प्रमार थे, और दाहनी में सोपेश्वर के सगे भाई कान्ह चौहान थे, जिनकी दृष्टि में शनैश्चर का वास था। वह जिसे क्रोध से देखते, वही भस्म हो जाता। इससे उनकी आँखों पर ८० लाख के मूल्य की रत्न जटिल पट्टी बँधी थी, जो रण-क्षेत्र और सेजों पर ही खुलती थी। गद्दी के पीछे साक्षात् ब्रह्मा के समान विद्वान् गुरुराम पुरोहित का आसन था, और सम्मुख कवि चन्द विराजमान था, जिसे अदृष्ट दर्शन और सरस्वती सिद्धि का वरदान प्राप्त था, और जोबरदाई कहाता था। दरबार में चंद पुंडीर, चामुंडराय, लखन बघेला आदि सामन्त लोग यथास्थान अपने आसन पर यथामर्यादा बैठे थे।

राजपरिच्छद और समस्त दरबारियों की पोशाक वसन्ती थी। वहाँ वसन्ती रङ्ग छोड़ और रङ्ग न था। उत्तम अबीर-गुलाल की बौछार हो रही थी। सङ्गीत और नृत्य-कला में अति निपुण, हाव-भाव, कटाक्ष और अन्यान्य स्त्रियोचित कला-चातुर्य में चित्र-रेखा को भी चुटकियों में चलानेवाली एक अनुपम रूपवती वेश्या ताल के तारतम्य से बँधी हुई

लय में ऊँची-नीची चल फिर और आड़ी-सीधी लौट-फेर करती हुई, समयोचित स्वर से अच्छे-अच्छे राग-रागिनियों में मनोहर गीत गाती और बात-बात पर भाव बताती हुई राजा पृथ्वीराज-सहित समस्त उपस्थित सभासदों का चित्त चुरा रही थी ।

इसी समय द्वारपाल ने निवेदन किया—“पृथ्वीनाथ, कनौज से एक ब्राह्मण आया है, और द्वार पर दर्शनार्थ उपस्थित है ।” राजा ने सौ स्वर्ण मुद्रा और एक घोड़ा खासा देकर वेश्या को विदा किया, और ब्राह्मण को सम्मुख आने का आदेश दिया । ब्राह्मण ने आकर राजा को आशीर्वाद दिया, और कहा—

“हे भारत के सामर्थ्यवान् चौहानराज आपकी जय हो । मैं कनौज से आपके पास चला आ रहा हूँ । कनौज-पति की राजदुलारी संयोगित अब तेरह वर्ष की हुई है । कनौजराज अब राजसूय-यज्ञ किया चाहते हैं, और उसी में अपनी सुकुमारी पुत्री का स्वयम्बर भी । परन्तु राजन्, मैंने गणित करके देख लिया है, वह असाधारण राज-नन्दिनी आपके लिए उत्पन्न हुई है । आप सावधान हो जायँ, और उसके वरण की तैयारी करें ।” पृथ्वीराज और सामन्त-गण आश्चर्य-चकित होकर ब्राह्मण की ओर देखने लगे । ब्राह्मण ने कहा—“महाराज, यह मैंने सत्य ही कहा कि वह आपके लिये अवतरित हुई है । मैं त्रिकाल का शाता हूँ । वह रम्भा अप्सरा का अवतार है । रम्भा ने परम तेजस्वी सुमन्त ऋषि का तप भ्रष्ट करने की चेष्टा की थी, इससे सुमन्त के पिता ने उसे शाप दिया, जिससे उसे मानवीय शरीर धारण करना पड़ा । इस समय गङ्गा के तट पर उसका महल है, जिसमें ऊँचे-ऊँचे स्वर्ण कलश लगे हैं । वह उसी में पिता की आज्ञा से अपनी वयवाली सौ बालाओं के साथ रहकर विहार करती है । हे महाराज, उस अनिन्द्य सुन्दरी-सी बाला न जन्मी है, न जन्मेगी ।”

ब्राह्मण का ऐसा वर्णन सुनकर पृथ्वीराज मानो भाव-समुद्र में

झूबने-उतराने लगे । उनका संकेत पाकर चन्द्र कवि बोले—“हे त्रिकालदर्शी महात्मा, उस बाला का नख-शिख तो कुछ वर्णन करो, भला वह ऐसी असाधारण कैसी है ?”

ब्राह्मण ने कहा—“उस चन्द्र-वदनी, मृगलोचनी बाला के उज्ज्वल ललाट पर श्याम भ्रू-भाग ऐसा सुशोभित होता है, मानो गङ्गा की धारा में भुजङ्ग तैर रहे हैं । उसकी कीर के समान नासिका, अनार के समान दन्त-पंक्ति, पतली-सी कमर, श्रीफल से उरोज और चम्पा के समान सुन्दर अङ्ग-रङ्ग अजब छटा दिखाते हैं । ऐसी वह सुन्दर संयोगिता है, जो आपको प्राप्त करने के लिये नित्य शिव की आराधना करती है । हे राजन् उसके शरीर से शैशव के हास और यौवन के प्रकाश की इस प्रकार शोभा हो रही है, जैसे वसन्त-ऋतु में पुराने पत्ते झड़ने और नवीन कोंपल फूटने से वृक्ष की शोभा होती है । उसके अङ्ग की शोभा इस समय संध्या-समय के चन्द्रमा के समान है । जैसे मकर की संक्रान्ति से दिन बढ़कर रात्रि को ढबाने लगता है, पावस-ऋतु में बड़ी हुई नदियों का जल समुद्र के हृदय में हलचल मचाने लगता है, वैसे ही संयोगिता का यौवन उसके बालपन को परास्त करके उपद्रव कर रहा है । इस समय उसकी शरीर-छवि शीत काल की दुपहरी हो रही है, जिसमें घाम और छाँह दोनों ही के पाने की इच्छा होती है । सत्य बात तो यह है कि उसके स्वभाव में अब लङ्कपन की झलक केवल प्रतिपदा के चन्द्र के समान रह गई है । हे राजन्, वह सर्वाङ्ग सुन्दरी संयोगिता इस समय वसन्त-ऋतु की फुलवारी बन रही है । जैसे वसन्त के आगम से दिन में कुछ पक्कापन आने लगता है, वैसे ही संयोगिता कुछ संकोच रहित प्रतिदिन निबर होती जाती है । उसका मधुर आलाप भौंरे की गूँज के समान प्यारा लगता है । वसन्त में जैसे शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर धीरे-धीरे बहती है, वैसे ही उसके सुकुमार शरीर में लज्जा की मात्रा बढ़ती जाती है । वसन्त में जैसे

नवपुष्प और फल के भार से तरु-वृन्द नीचे झुकने लगते हैं, वैसे ही यौवन के जोर से उसकी सब बातों में भारीपन का आभास आता जाता है। उसके सुदार उदर पर रोम-राजि काम किसान की बोई हुई-सी जम रही है। हे राजन्, इसी राजनन्दिनी के स्वयम्बर को महाराज जयचन्द ने आकाश और पाताल को मन्त्र बल से तथा शेष आठ दिशाओं को अपने यवन-सैनिकों के बल से जीतने की तैयारी की है। हे वीरपुंगव, मैं कहाँ तक उसका वर्णन करूँ ? उसका अङ्ग-रङ्ग श्रीखंड, पंकज एवं कुंकुम के समान सलोना है। उसकी पिंडलियाँ स्वर्ग-रज के समान झलकती हैं, और जंघायें तो कदली-खम्भ तथा हाथी की सूँड़ की सुदारता को मात करती हैं। उसकी उँगलियों का अग्रभाग कनेर की-सी कली जान पड़ता है। उसके अर्धतुम्बाकार पीन नितम्ब, मुट्ठी-भर चीते की-सी कमर, उस पर सरती हुई सर्पिणी-सी वेणी, राजीव-लोचन, पिपीलिका की पलटन-सी रोम-राजि, हंस-शिशु की-सी चाल, नारङ्गी से युगल यौवन, त्रिवली-युक्त कल-कंठ, बिम्ब-से अरुण-अधर, स्वर्ग के खम्भे पर चढ़ती हुई सर्पिणी-सी उसकी वेणी देखने ही योग्य है।”

पृथ्वीराज ने जब इस प्रकार संयोगिता का वर्णन सुना, तो उन्होंने आपा खो दिया। उनके सब व्यवसाय, नाच-रङ्ग भूल गए। उन्हें सब ओर संयोगिता ही संयोगिता देख पड़ने लगी। उन्होंने अत्यन्त विकल होकर कहा—“हे ब्राह्मण, तुम कृपा कर संयोगिता को मेरी ओर से प्रबोध करो। मैं तुम्हें असंख्य धन-रत्न दूँगा।” इतना कह उन्होंने ब्राह्मण, को असाधारण स्वर्ण, रत्न और हाथी आदि देकर विदा किया।



कन्नौज-राजकन्या संयोगिता को तेरहवाँ वर्ष लगा था। वह राज-प्रासाद के पार्श्ववाले छोटे से उद्यान में एक छोटे से हिंडोले में बैठी भूल रही थी। जब वह भूलने के लिए, पृथ्वी पर पादाघात करके मिचकी मारती, उस समय उसके सुकोमल लम्बे बालों से गुथी बेनी उसके पीन नितम्बस्थलों को स्पर्श करती हुई ऐसी सुशोभित होती थी, मानो उसका यौवन-काल आया जानकर उसके जीवन की बागडोर कामदेव अपने हाथ से साध रहा हो। वह पूर्णचन्द्रमा के समान निर्मल, दीप्तिमान मुखारविन्दवाली, कुलक्षणां से हान, मुलक्षणां से लक्षित, लक्ष्मी के समान शीलवती बाला दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही थी। उसका बत्तीसों राजसी लक्षणां-युक्त नैसर्गिक सौंदर्य मानो मकरकेतु की रङ्गशाला थी। उसके नित नव उन्नत उरोज उस रङ्गशाला की छतरी, गोख कलश आदि के समान थे। उसका सुन्दर स्वरूप उस रङ्गशाला की चित्रसारी और छवि का लावण्य साक्षात् दीपक की ज्वालि के समान था। वह अपनी समवयस्का बालाओं के बीच तारागणों में चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रही थी।

वह पिता की एकमात्र दुलारी कन्या थी, और पिता के असाधारण दुलार ने उसे हठी बना दिया था। वह सोलह शृङ्गार और बारह आभूषणों से सुसज्जित थी। उस समय वह ऐसी भासती थी, मानो सहस्र कामदेव उसके शरीर में प्रकट हो रहे हैं। राजकुमारी के पास कर्नाटकी दासी हाथ बाँधे खड़ी थी। राजकुमारी ने हँसकर कहा 'आखिर, तुमने

उन चौहानराज पृथ्वीराज का क्या बिगाड़ा था कि उन्होंने तुम्हें ऐसा अमानुषीय दण्ड दिया, क्या चौहानराज ऐसे निष्ठुर हैं ?”

“नहीं राजकुमारी”, कर्नाटकी ने बद्धांजलि होकर कहा—
“मेरा अपराध ऐसा ही गुरुतर था । महाराज ने मुझे दीवार में जीवित चुनवाने का आदेश दिया, और मुझे वह शिरोधार्य करना था परन्तु प्राण-भय से मैं बच कर निकल भागी, और आपके पिता की शरण में आई ।”

राजकुमारी ने फिर हँसकर कहा—“अच्छा, तुम चौहानराज का कुछ वर्णन तो करो । और, वह अद्भुतनगरी दिल्ली कैसी है, इसका भी कुछ बखान करो ।”

दासी ने कहा—“राजकुमारी, दिल्ली की शोभा की होड़ इन्द्रपुरी भी नहीं कर सकती, और महाराज पृथ्वीराज के प्रसाद के समान प्रासाद पृथ्वी पर और कहाँ है ! पर दिल्ली की भूमि बड़ी विलक्षण है, वह किसी ऋषि द्वारा शापित है, इसलिए उस पर कोई एकच्छत्र राज्य नहीं कर सकता । पहले इस भूमि के लिए पाँडवों ने अठारह अक्षौहिणी सेना का विध्वंस किया, पर फिर वे भी न रहे । काल-चक्र से तोमर राज हुए, और वे भी किल्ली-दिल्ली कर चल बसे, अब चौहान हैं, अब देखो, यह कब तक हैं ।”

राजकुमारी ने उत्सुकता से कहा—“तुम्हारा वर्णन कौतूहल प्रद है, तनिक और विस्तार से कहो । हाँ, यह दिल्ली पति कैसे हैं ?”

दासी ने कहा—“दिल्ली का राजा नङ्गपाल तोमरवंशी था । जब वह ७७ वर्ष का हुआ, तब उसने राज-पाट अपने दौहित्र अजमेरराज सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज को दे तपस्या के लिए बद्रिकाश्रम को प्रस्थान किया । वही समर्थ पृथ्वीराज इस समय पृथ्वीतल के राजों में अद्वितीय बलशाली और कीर्तिमान् पुरुष हैं । इस समय पृथ्वी पर उनका यश शरद-ऋतु की चारु चाँदनी सा फैल रहा है । वह असाधारण वीर्यवान्

और बलवान् नर श्रेष्ठ हैं। उन्होंने कई बार यवनराज को बन्दी किया है। वह अर्जुन के समान अचूक धनुर्धर हैं। वह चन्द्रमा के समान तेजवान् हैं, और एक बाण से सात तवे फोड़ते हैं। वह राजा बलि के समान गुणवान् और लज्जाशील हैं। धर्मराज की तरह सात्विक, अर्जुन के समान धनुर्धर, दुर्योधन की भौंति मानी और सूर्य के समान तेजवान् तथा चन्द्रमा के समान शीतल, सुखद हैं। विक्रम में विक्रमादित्य के समान, दान-सम्मान में इन्द्र एवं कल्पतरु के समान और काम-क्रीड़ा में रमापाति विष्णु के समान शक्तिमान् हैं।”

दासी का यह वर्णन सुनकर संयोगिता चित्र-लिखित-सी रह गई। वह एकटक दासी की ओर देखती रही। फिर बोली, “कहो, कहो, और भी वर्णन करो।” दासी ने आँखों में आँसू भरकर कहा—“इस अधम दासी को उन नर-श्रेष्ठ ने दासी न समझकर हिरे का हार बनाया था, जगत् का कौन-सा सुख मुझे न प्राप्त हुआ, पर हाय ! मैं गुरुतर अपराध कर बैठी, जिसका वर्णन करना आपके सम्मुख किसी भौंति भी योग्य नहीं।” इसके बाद उसने आँसू पोंछ कर कहा—

“कुमारी, उनके एक-एक गुण में समता करने वाले अनेक राजा हो गए हैं, परन्तु उनकी समानता का न कोई आज लों हुआ, न है। वह राजों में विक्रम के समान, सत्य में राम के समान, बाहु-बल में सहस्र-बाहु के समान हैं। चन्द्रमा के समान शीतल, हरिश्चन्द्र के समान सत्यव्रती, भीष्म के समान योद्धा हैं। वह दूढ़ा दैत्य के आंशिक अवतार हैं, और इस भूतल पर इन्द्र के समान उपमा के योग्य हैं। वह स्त्री धन्य है, जो उन नर-नाहर के हृदय-स्पर्श का मुखानुभव कर नारी-जन्म कृतार्थ करे।”

यह कहकर दासी चुप हो गई। राजनन्दिनी संयोगिता ने पृथ्वीराज की कल्पित मूर्ति का आँख बन्द कर चिन्तन किया, और फिर यह प्रण किया कि जैसे सीता ने राम के लिए, नल ने दमयन्ती के लिए, पार्वती ने शिव के लिये, क्विमणी ने कृष्ण के लिये प्रण किया था, उसी प्रकार

पृथ्वीराज के लिये मेरा ध्रुव प्रण है । मैं पृथ्वीराज ही को वरूँगी, इस जन्म में तो क्या, यदि दूसरा जन्म धारण करना पड़े, तब भी । संयोगिता वहाँ से उठकर पाठिका के पास चली गई ।

पाठिका मदन ब्राह्मणी ने कहा—“राजकुमारी, आज तो विनय-मङ्गल का पाठ होगा ।” राजनंदिनी ने सहज हास्य से कहा—“उसमें क्या है देवी ?” “उसे पढ़कर स्त्री सुलक्षणा होती है, और मुग्धा तथा प्रौढ़ावस्था में भी नवोद्गा की भोंति पति की प्यारी बनी रहती है ।”

राजकन्या विषय का रहस्य कुछ भी न समझ पाठ पढ़ने लगी ।

पाठिका ने पढ़ाया—

“हे सुकुमारी कुमारी स्त्री को चाहिए कि प्रातः ही शय्या से उठकर पति के मुख का दर्शन करे, और फिर प्रीति-पूर्वक उसके चरण-स्पर्श करे । विनय-पूर्वक उसकी स्तुति करे, फिर दर्पण में अपना मुख देखे । तब शौचादि से निवृत्त होकर नख-शिख्य सँवार स्नानकर नाना प्रकार के पाक पड़र्स भोजन बनाकर पति को परसे, और देवता के समान आदर और प्रेम से जिमावे, फिर सुन्दर वस्त्राभूषणों से अलंकृत होकर अधीनता-पूर्वक पति की आज्ञा का पालन करने को प्रस्तुत रहे । हे कुमारी, कोई स्त्री कैसी भी रूपवती क्यों न हो, जो हठ-पूर्वक पति के प्रति मान करती है, उससे उसके पति का मन फट जाता है । इसलिये पति से हठ और मान न करे, और धैर्य-पूर्वक पति की इच्छा की अनुगामिनी बनी रहे । जैसे पवन हिम को स्पर्श करके शीतल और चन्दन को स्पर्श करके सुगन्धित हो जाता है, उसी प्रकार शिक्षा का भी मूर्ख पर बुरा और बुद्धिमान् पर अच्छा प्रभाव पड़ता है । हे कुमारी, जैसे युक्ति के बिना कर्म शुभ नहीं होता, उसी भोंति स्नेह-हीन स्त्री का जीना वृथा है । बिना विनय के जीवन का सुख नहीं मिलता । हे राजकुमारी, अभिमान से स्नेह भङ्ग होता है, सज्जन भी दुर्जन देख पड़ते हैं, जुड़ा हुआ नाता टूट जाता है, और आत्मिक गुणों का हास

होता है, इसलिये स्त्री के लिए मान मदिरा के समान मद है। मान ही स्त्री जीवन के दुखों का मूल है। इसलिए हे सुकुमारी, तू मान को त्याग कर शीलवती बनी रहना। जैसे पाले से बड़े-बड़े सुपालित पौदे सुरक्षा जाते हैं, उसी प्रकार मान करने से स्नेह की लता अनायास ही सूख जाती है, जो स्त्री के जीवन का अवलम्बन है। हे पुत्री, जीवन में विनय दीपक के समान है, जिस प्रकार दीपक बिना घर, प्राण बिना देह और बुद्धि बिना उपभोग शुभ नहीं, उसी प्रकार विनय बिना स्त्री शुभ नहीं। जैसे जीवन का सार आत्मा है, वैसे ही सुख का सार विनय है। हे प्यारी राजकुमारी, विनय ही से दो तन एक प्राण हो जाते हैं।” राजकुमारी ने प्रश्न किया---“पति को किस भाँति वश में किया जा सकता है?”

पाटिका ने कहा—“विनय से। ज्यों-ज्यों विनय का अभ्यास बढ़ता जायगा, दाम्पत्य सुख भी बढ़ता जायगा। विनय के जल से स्नेह की बेल को गींच, उसमें अमृत-फल उत्पन्न होगा। विनय से बढ़कर वशीकरण और नहीं है। हे प्यारी पुत्री, इस विनय-मङ्गल को गाँठ बाँध, इससे तेरा कल्याण होगा।”

इतना कहकर पाटिका वहाँ से उठकर अपने पति के पास जाकर बोली—“हे स्वामन्, आप की आज्ञानुसार आज मैंने राजनन्दिनी को विनय-मङ्गल का पाठ पढ़ाया है। अब आप कहिए कि आपने राज-कन्या की क्या गणना की? यह असाधारण राजनन्दिनी किस पति को वरेगी?” ब्राह्मण ने कहा—“प्रिये, यह छत्रधारियों के समस्त सुलक्ष्णों से युक्त कुमारी संयोगिता सुलतान शहाबुद्दीन को बारम्बार बन्दी बनाने वाले चौहान पृथ्वीराज के साथ ब्याही जायगी। इसके लिये जयचन्द यज्ञ करेगा। इसी के लिये द्वापर में रुक्मिणी के विवाह के समान इस समय भी सहस्रों छत्रधारियों का क्षय होगा, और अन्त में इसके पति और पिता दोनों ही का वैभव भ्रष्ट होगा।”

यह सुनकर पाठिका भयभीत हो स्तम्भित-सी रह गई। उसने कहा—
“हे स्वामी, क्या यह अटल भावी है ?”

ब्राह्मण ने कहा—“हाँ, देखो, यह राजनन्दिनी की गणना है—
मङ्गल, बुध, शुक्र, शनि और चन्द्रमा ये ग्रह चौथे स्थान में गोचर में
पड़े हैं। गुरु और केतु केन्द्र में तथा राहु अष्टम है। जन्म से पञ्चम
राहु और केतु होने से यह स्पष्ट है कि उसका जन्म महा रक्त-पात के
लिए ही हुआ है।”

इतना कह ब्राह्मण कुल काल चुप रहकर आकाश की ओर देखने
लगा। फिर उसने कहा—“प्रिय, अदृष्ट प्रवल है। मैं दिल्ली जाकर
संभरीनाथ चौहान को इस भावी वधू की सूचना दे चुका हूँ, और तुम
राजवाला के मन में चौहान का यश वर्णन करके स्नेह का उदय करो,
जिससे जो भविष्य में होनी है, वह सम्पन्न हो।” इतना कहकर ब्राह्मण
गम्भीरता-पूर्वक कुल लकीरें खींचने और गणित करने लगा। पाठिका
उठकर चली गई।



४

कन्नौज-पति ने राजसूय-यज्ञ की तैयारियाँ प्रारम्भ कीं। राजसूय-यज्ञ
में सभी काम राजा लोग करते हैं, इसलिए अधीन राजों पर परवाने
और अन्यों पर सेनाएँ भेजी गईं। राजप्रासाद में आगन्तुकों के सत्कार
के प्रबन्ध होने लगे। दान-पूजन की सामग्री जुटाई जाने लगी। ढाई
लाख मन स्वर्ण, १५० मन मोती, ढाई करोड़ मन चाँदी, असंख्य
मन अन्य धातु, अनगिनत हाथी, घोड़े, कपूर, केसर, कस्तूरी, अम्बर

अगर आदि सुगन्ध द्रव्य, जरकसी और पाटाम्बर के अमूल्य वस्त्र और नाना प्रकार की आडम्बर की वस्तुएँ संगृहीत की गईं, और राजप्रासाद के विशाल प्राङ्गण में यज्ञ-मंडप की रचना की जाने लगी।

चारों तरफ से भेजे हुए दूतों ने सूचनाएँ दीं—“महाराज, भारत-वर्ष के हिन्दू तथा यवन राजाओं ने सिर झुकाकर श्रीमान का आदेश स्वीकार किया है।” यह सुनकर जयचन्द की चमकें चढ़ गईं। उन्होंने मन्त्री को आदेश दिया—“मन्त्री, ऐसा प्रबन्ध करो, जिसमें मेरी अपकीर्ति न हो। मैंने मन्त्र बल से आकाश-पाताल के देवताओं को जीत लिया है, और शस्त्र बल से दशों दिशाओं के दिग्पालों को। इस समय पृथ्वी-भर के सब शासक मेरा महत्व स्वीकार करते हैं, इसलिए मैं इस यज्ञ का अनुष्ठान करता हूँ, क्योंकि काल बली है, सभी दृष्ट-अदृष्ट पदार्थ एक दिन काल-कवलित होंगे, केवल कीर्ति स्थिर रहेगी।”

कुछ रुककर उन्होंने कहा—“हे सुमन्त, मेरे पिता ने समस्त देश पर विजय प्राप्त करके दिग्विजयी पद-प्राप्त किया था, इसलिए इस समय समस्त हिन्दू राजाओं में समर्थ मेरे मौसेरे भाई पृथ्वीराज के पास दिल्ली में स्वयं जाकर और दूत भेजकर कहला दो कि वह दिल्ली से लगाकर सोरों तक की आधी भूमि मुझे दे दें। उनसे यह भी कहला दो कि यद्यपि मातृपक्ष से हम तुम दोनों भाई बराबर हैं, परन्तु कमुध्वज वंश का राज्य अनादि है। चौहानों की आदि राजधानी संभर है, इसलिए तुम अजमेर में राज्य करते रहो, पर हमारे सार्वभौम राजसत्ता के विचार से और भाईचारे के हिसाब से दिल्ली की आधी भूमि हमें दे दो।” मन्त्री ने शान्त भाव से राजा का वक्तव्य सुनकर विनीत और शिष्ट भाव से कहा—“महाराज का आदेश पालन करने को यह दास सदैव प्रस्तुत है, परन्तु सेवक के तुच्छ विचार में यज्ञ करना उचित नहीं। आगे जैसी श्रीमान् की इच्छा।”

मन्त्री का ऐसा मत सुनकर राजा ने चारणों को संकेत किया। चारणों ने राठौर-राजवंश की विरदावली बखानते हुए कहा—“महाराज, जिस राजवंश ने यज्ञ न किया, उसका राजभोग पूरा नहीं समझा जा सकता। हे राजन्, कमुध्वज-वंश के आदि पुरुष कमुध्वज सूर ने बड़ा भारी राजसूय-यज्ञ किया था, इससे इन्हें सूर-पद प्राप्त हुआ था। उनके बाद वाहननरिंद हुए, जिनका रथ अन्तरिक्ष में चलकर स्वर्ग-यत्न पहुँचा। उनके बाद पुरु सूर हुए, जो चक्रवर्ती राजा थे। उनके बाद सत्सिन्धु सूर, नीलराज आदि नामी राजा हुए हैं। राजा नल भी आप ही के पूर्व पुरुष हैं। हे राजन्, छह चक्रवर्ती राजा इसी कमुध्वज-वंश में हुए हैं, जिनमें राजा जामूतवाहन भी हैं, जिन्होंने शीश पर चक्र धारण कर संसार में अमर यज्ञ पाया। सो हे महाराज, आप भी प्रताप में उनसे कम नहीं। यज्ञ में अनगिनत हाथी, घोड़े, वस्त्र, रत्न, मणि, मोती दान देने से अनन्त पुण्य होता है। दानी तो राजा बलि थे, जिन्होंने शरीर भी दे डाला। हे नर-श्रेष्ठ, आप यज्ञ अवश्य कीजिए।”

चारणों के ऐसे वचन सुनकर जयचन्द ने गर्व से गर्दन ऊँची करके पुनः प्रधान को आज्ञा दी कि अब आप शीघ्र ही यज्ञ का सब प्रबन्ध कीजिए और षोडश उपचार जुटाइए। मन्त्री ने फिर हाथ बाँध कर कहा—“महाराज, मेरी विनय पर ध्यान दीजिए। न वह समय है, न अर्जुन-भीम के समान प्रतापी पुरुष ही हैं। कलिकाल में यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकता।”

इस पर राजा ने कुपित होकर कहा—“मन्त्री, मैंने तुम्हारी हर सेखवन सुनी, अब तुम मेरी आज्ञा का पालन करो।।”

मन्त्री खिन्न मन हो वहाँ से उठकर चले गए।



वसन्त यौवन पर था। वृक्षों के पुराने पत्ते झड़ चुके थे, और नवीन कोपलें फूल रही थीं। नई-नई बेलों में फूल फूलते, और उनके पराग से निशाएँ सुगन्धित होतीं। पुष्प-गुच्छों पर भ्रमर-पुञ्ज छत्राकर भूमते, कोयल कृकती, पंक्षी कलरव करते, सुहागिनी सुख सेज पर मौज मारती और विरहिणी बेहाल होती थीं।

पृथ्वीराज के लिए सब रस मानो सूख गए थे। उन्हें कहीं भी चैन न था। ब्राह्मण द्वारा वर्णित संयोगिता की मूर्ति, तीव्र मद्य की भाँति, उनके शरीर को निढाल कर चुकी थी। एक दिन प्रहर रात्रि गए पृथ्वीराज महलों से निकल यमुना-तट पर विचरने चले गए। कुछ दूर जा कर देखा, एक अति उत्तम बाड़ा बना हुआ है। उसमें जगह-जगह सुन्दर वृक्षों के कुछ फूलों और फलों के भार से झुककर धरती छू रहे हैं। रस के लोभी भ्रमर उनका गुण गान करके अपने उदर पोषण की व्यर्थ चेष्टा कर रहे हैं। चहबच्चों में निर्मल जल भरा है, और उन पर धानी रङ्ग का छत्र तना हुआ है, जिस पर नाना प्रकार के बेल-बूटे, गोख, भौंकी-भरोखे बनाती हुई बेलें लड़ी हुई हैं। यह अद्भुत व्यापार देख पृथ्वीराज ने घोंड़े को एड़ लगाई, और घोंड़ा एक ही उड़ान में कोट लौंघकर बाग में हाँ रहा। घोंड़े की टाप का शब्द सुनकर बगीचे के रक्त प्रहरी सम्मुख आए। यह देख पृथ्वीराज ने अपनी कमान में पच्चीस टंकी बाण चढ़ाया। इतने ही में एक यक्ष ने आकर कहा—“मैं जानता हूँ, तुम प्रतापी पृथ्वीराज हो, चुपचाप वृक्ष के नीचे छिपकर कौतुक देखो, आज यहाँ यक्षराज का विहार होगा।”

पूर्णाहुति

पृथ्वीराज ने सेवक से, संकेत से कहा—“इस बाग में समस्त सुसामग्री अभी प्रस्तुत की जाय ।” बात-की-बात में केशर, कस्तूरी, चूना, पान, पानी, शर्बत, केतकी, कमल, केवड़ा, कुसुम, जुही, माला, जातक, चम्पक, पौडरी आदि के पुष्प और अतर, दाड़िम, दाख, केले, अखरोट, नासपाती, नारियल, पिंडखजूर आदि फल, मक्खन, मिश्रफाज, मिष्ठान्न सभी उपस्थित हो गए ।

थोड़ी देर में गन्धर्व अपनी नाटक-मण्डली-सहित यक्षराज के सारा उपस्थित हुए ।

प्रथम उन्होंने उस सुगन्धित, शीतल जल से मुख प्रक्षालन किया फिर पान के बीड़े चवाए, और नृत्य-गायन में मग्न हो गए । नाटक समाप्त होने पर सब ने स्वादिष्ट मिष्ठान्न आदि का भोग लगाया । रस पीकर, स्वस्थ होकर गन्धर्वराज ने कहा—“अहा ! आज किसने हमारा ऐसा सत्कार किया ?” यक्ष बोला—“यह सब सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज की तरफ से है ।” गन्धर्वराज ने पृथ्वीराज को सम्मुख आने की आज्ञा दी । सम्मुख आने पर उन्हें छुआ और कहा—“हे राजा, हम तुम्हें प्रसन्न हैं, और तुम्हें सर्व-सिद्धि मन्त्र देते हैं । इसी के बल पर तू रम्य की प्रतिच्छाया संयोगिता का नियत काल तक स्वच्छन्द उपभोग व सकेगा ।” गन्धर्वराज यह कह कर अन्तर्धान हो गए, और पृथ्वीराज आनन्द में मग्न राजप्रसाद में आकर सो गए ।

६

बुद्धिमान सुमन्त बड़ी द्विविधा में पड़े । वह पृथ्वीराज की सामर्थ्य को जानते थे । यह कैसे सम्भव हो सकता है कि पृथ्वीराज ऐसा प्रस्ता

स्वीकार करेंगे। वह जयचन्द्र के सच्चे शुभचिन्तक थे। सुमन्त ने दिल्ली को प्रस्थान किया, और नियत समय पर पहुँच कर आने की इत्तिला महाराज को करवाई। पृथ्वीराज ने राज्योचित शिष्टाचार से उनका सत्कार किया। खान-पान, वसन, सुगन्ध उनके डेरे पर पहुँचाई गई। दिल्ली पहुँचने के छः दिन बाद उन्होंने दरबार में आकर पृथ्वीराज को प्रणाम किया, और जयचन्द्र का पत्र उन्हें देकर कहा—“महाराज, जैसे हिरण्यनाभ और दत्तप्रजापति के यज्ञ में कुबेर पर्यन्त सब यज्ञ, किन्नर आदि प्रस्तुत थे, वैसे ही इस समय मनुष्य-मात्र जयचन्द्र की सेवा में अपना सौभाग्य मानते हैं। अस्तु। इस समय मेरी प्रार्थना है कि जिस इन्द्रप्रस्थ के लिये पहले बड़े-बड़े गन्धर्व जूझ मरे, जिसके लिये दुर्योधन का निधन हुआ, उसका आधा हिस्सा कन्नौजराज को दे दीजिए।”

इतना कहकर सुमन्त मन्त्री चुप हो गए। उस समय दरबार में गौड़नारायण गहलौत, सलख प्रमार, काका कान्ह, निदुराय, गुरुराम पुरोहित और कवि चन्द्र, ये सात अति विश्वासी सरदार उपस्थित थे। अभी गौड़ नारायण सुमन्त के वक्तव्य पर विचार ही कर रही थी कि यज्ञ का निमन्त्रण लेकर कन्नौज के दूत भी पहुँच गए। सूचना होते ही पृथ्वीराज ने उसी समय उन्हें सम्मुख बुलाकर कहा—“कहो, किसी अभिप्राय से आए हो?” दूतों ने उत्तर दिया—“राजन्, महाराजधिराज कन्नौजपति ने राजसूय-यज्ञ का आरम्भ किया है, उनका निमन्त्रण पाकर देश-देश के नरेश कन्नौज में एकत्र होकर यज्ञ में सेवा कर रहे हैं। हम लोग अब आपकी सेवा में आए हैं, सो यह आज्ञा-पत्र लीजिए, और कन्नौज चलकर कन्नौज राज द्वारा नियत किए हुए दरबार के पद पर छड़ी लेकर काम कीजिए।” यह सुनकर पृथ्वीराज सन्न रह गए, जैसे पिंजरे में फँस कर सिंह। परन्तु गौड़नारायण ने कहा—

“भला, ऐसा कौन कलिकाल में जन्मा है, जो यज्ञ करने का साहस

करे ! सतयुग में बलि ने यज्ञ किया, सो बाँधे गए । त्रेता में रघु ने यज्ञ किया, जिसमें कुबेर उनके सहायक थे । द्वापर में युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, परन्तु श्रीकृष्ण और अर्जुन की सहायता से । अब ज्ञात होता है, कन्नौज-पति को गर्व हो गया है, वह समझते हैं, पृथ्वी पर क्षत्रिय रह ही नहीं गए । परन्तु यह वसुमती निर्बीज नहीं होती । क्या जयचन्द दिल्लीपति पृथ्वीराज को नहीं जानते, जिसके रुंड पर मुंड रहते यज्ञ करने की इच्छा केवल कल्पना ही कही जा सकती है ।”

यह सुनकर दूत चुपचाप वहाँ से चल दिए, और कन्नौजपति को अक्षरशः सब विवरण सुना दिया । सुमन्त मन्त्री भी विफल-मनोरथ कन्नौज आ पहुँचे ।

दूतों की बात सुनकर जयचन्द क्रोध से भभक उठा । उसने सुमन्त को बुलाकर कहा—“पृथ्वीराज की धृष्टता तुमने देखी, और सुन भी ली । अब क्या करना चाहिए, सो विचारो ।” उसने सेनापति बालुकाराय और खुरासानखों को भी बुलाकर परामर्श किया । अन्त में यह निर्णय हुआ कि यदि इस समय चौहान पर चढ़ाई होती है, तो यज्ञ का मुहूर्त निकल जाएगा । अतः अभी द्वापरपाल के स्थान पर पृथ्वीराज की स्वर्ण-प्रतिमा स्थापित करके यज्ञ का कार्य प्रारम्भ किया जाय, और तिथि तथा स्वयम्बर का शुभ मुहूर्त शोधकर सब प्रबन्ध किया जाय । सुमन्त और सेनापतियों ने विनम्र भाव से आज्ञा का पालन किया ।



राजसूय-यज्ञ के प्रारम्भ होने और पृथ्वीराज की स्वर्ण प्रतिमा द्वार पर रखने का समाचार आग की भोंति सर्वत्र फैल गया। यथा समय दूतों ने यह समाचार पृथ्वीराज को भी दिया, जिसे सुनकर पृथ्वीराज क्रोध से थर-थर काँपने लगे।

उन्होंने सामन्तों को बुलाकर पूछा—“अब क्या करना उचित है ?”

सामन्तों ने एक स्वर से कहा—राजन्, अब जीवन का मोह छोड़कर मरने पर कमर बाँधिए।”

पृथ्वीराज ने गम्भीर स्वर से कहा—“क्षत्रिय को मरने से भय नहीं, परन्तु विचारने की बात यह है कि मेरे रहते जयचन्द ने यज्ञ करने का साहस किया है, यदि मैं यज्ञ विध्वंस करता हूँ, तो देवताओं का द्वेषी होना पड़ेगा, और जो प्रजा पर चढ़ाई करता हूँ, तो इससे अभिप्राय सिद्ध नहीं होगा।”

उस समय गुरुराम पुरोहित, जैत प्रमार, निदुरराय, जामराय यादव, भोंहा चन्देल, कैमास, चन्दपुडीर और काका कान्ह वहाँ उपस्थित थे। कान्ह ने कहा—“मेरी राय है कि कन्नौज पर चढ़ाई करके यज्ञ विध्वंस करना चाहिए, और कन्नौज तथा जयचन्द का राज महल लूट लेना चाहिए।” चन्दपुडीर ने कहा—“राजमन्त्री कैमास से भी तो पूछिए क्या कहते हैं।”

इस पर राजा का संकेत पाकर कैमास ने कहा—“हम इस समय जयचन्द की प्रबल सेना का मुकाबला करने की सामर्थ्य नहीं रखते

हमें युक्ति से काम लेना चाहिए और खोखन्दकपुर पर चढ़ाई करके बालुकाराय को मार डालना चाहिए। बालुकाराय जयचन्द का भाई है, उसके मरने से एक वर्ष अशौच रहने से यज्ञ-कार्य रुक जायगा।” यह सम्मति सभी ने पसन्द की। गुरुराम पुरोहित ने मुहूर्त शोधकर कहा—

“कल रविवार पुष्य नक्षत्र की साइट उत्तम है।”

सब सामन्तों पर रण-रङ्ग चढ़ गया। बड़े-बड़े बलिष्ठ घोड़ों पर शस्त्र सजित शूरमा जमकर बैठे। पृथ्वीराज खुरासान के प्रसिद्ध अश्व शृंगारपाद पर सवार हुए, जिसकी पूँछ का गुच्छा चव्वर की भाँति छहराता था, और चलते समय धरती धमकती और सुमों से बिजली की चमक पैदा होती थी। ज्यों ही पृथ्वीराज ने घोड़े की बाग उठाई कि बन्दी जनों ने बिरदावली अलापी, जिसे सुनकर शूरों को रणोन्माद चढ़ गया। निदुरराय अनी का अधिपति बनाकर आगे खाना किया गया। बाकी समस्त सेना महावीर कान्ह की कमान में पीछे-पीछे चली। सेना के अग्रभाग में सेनापति कान्ह और उनके पीछे बलभद्रराय तथा उनके पीछे पृथ्वीराज थे।

सेना के कन्नौज-राज्य में पैर रखते ही चारों ओर हाहाकार मच गया। गाँव फूँक डाले गए, नगर लूट लिए गए। जमीन्दार पकड़कर बाँधे और मार डाले गए। इस जघन्य आतङ्क से घबराकर प्रजा-वर्ग ने बालुकाराय के द्वार पर पुकार की दुहाई दी, गुहार की—“हे महाराज, चौहान ने देश को चौपट कर दिया। लखपति साहूकार लङ्गोटी लगाए डोलते हैं। गाँव-के गाँव भस्म हो गए हैं!”

यह सुनकर बालुकाराय वीर मणिधर सूर्य की भाँति फुफकार कर उठा, और सेना लेकर प्रजा को अभय-दान देता रण-क्षेत्र में चला।

उधर से चौहान-सेनामोर्चा दवाती चली आती थी। जब चौहान-सेना बिलकुल बगमेल में आ गई, तो इधर से बालुकाराय के भी

निशान उठे। यह देखते ही कान्ह ने अपनी सेना को व्यूहबद्ध होने की आज्ञा दी, और क्षण ही भर में दोनों दल भिड़ गए। मध्य सेना में स्थित होकर बालुकाराय ने ललकार कर कहा— 'पङ्गराज की रत्नमयी भूमि को जो लुटेरे लूटने आए हैं उन्हें बड़वाग्नि बनकर भस्म कर दो।'

यह सुनते ही बालुकाराय की सेना ने चन्द्रमंडल व्यूह बनाया, और नाचते हुए मोर के पंखों की भाँति चारों ओर से चौहान सेना को घेर लिया। गहरी मार छिड़ गई। जोशीले जवान बढ़-बढ़कर हाथ मारते और सिर भुट्टे की भाँति कट-कटकर गिर रहे थे। जिस हाथी के गुर्ज का भरपूर हाथ बैठता, तो पहाड़ी भरने की भाँति रुधिर की धारा बह चलती थी। मारामार होते-होते बालुकाराय ने पृथ्वीराज को आ दवाया। परन्तु पृथ्वीराज ने बालुकाराय के हाथी को ऐसा हाथ मारा कि वह भहराकर गिर पड़ा। बालुकाराय के गिरते ही सेना के पैर उखड़ गए। चौहान-सेना चढ़-चढ़कर मारने लगी। चौहान-सेना के हरावल में कान्ह और कैमास, दाहिने गोइंदराय और बाएँ निहुराय थे। दोनों ओर के योद्धाओं के चोत्कार, जयध्वनि हर-हर महादेव की पुकार और रण-वाद्यों की ध्वनि पर कान नहीं दिया जाता था। बिना सूँड़ के हाथी दौड़ते चिघाड़ते भयानक प्रतीत होते थे। कटार के पार होते ही कितनों का कलेजा और आँतें निकल पड़ी थीं। छुरी, बिछुआ, कटार, बोंक, बगुरदा आदि की बख्तर पर गिरकर खड़खड़ाहट और खोपड़ी पर गुर्ज के गिरने का भयानक शब्द आतङ्क पैदा करता था। गुर्ज पड़ते ही खोपड़ी खुल जाती, और भेजा निकल पड़ता। कंधे पर खङ्ग का हाथ पड़ते ही हाड़ काटकर कमर तक पार कर जाता। कटे हुए सिर जमीन पर फुफक रहे थे। कोई बकास्ता, कोई हुँकास्ता, कोई ललकारता, तो कोई प्रचारता था, कोई हाहाकार करता, कोई पानी की पुकार करता था, फिर भी कोई

वीर हटता न था। इसी बीच में कान्ह चौहान और बालुकाराय की चार आँखें हो गईं। कान्ह ने बालुकाराय का सिर खट से काट लिया। परन्तु उसका कभ्यन्ध तलवार खींचकर कान्ह पर झपटा। कान्ह ने उसे सेल से ठेलकर घोड़े पर से ढकेल दिया।

बालुकाराय के मरने पर कन्धारखों ने मोर्चा लिया। खूब लोहा बजा, परन्तु अन्त में पृथ्वीराज विजयी हुआ, और पङ्क-सेना खेत छोड़ बैठी। इस युद्ध में पृथ्वीराज के ७०० और बालुकाराय के ५ हजार वीर काम आए।

इसके बाद पृथ्वीराज की सेना खोखन्दपुर लूटने को बढ़ी। चारों तरफ हाहाकार मच गया। महिलाएँ और नागरिक धीरज छोड़ बैठे। निदान खोखन्दपुर लूटकर भस्म कर दिया गया। इस प्रकार कन्नौज-राज्य में हाहाकार मचा कर पृथ्वीराज विजय-गर्वित हो दिल्ली को लौट गए।



८

माघ-बढ़ी पञ्चमी से यज्ञ आरम्भ होकर त्रयोदशी तक एक सप्ताह हो चुका था। समस्त कन्नौज-नगर कुसुम की भाँति फूल रहा था। राजमहल के प्रत्येक द्वार, महाराव, गोंख और झरोखे पर जड़ाऊ बन्दनवार झलझला रहे थे। महल के आँगन में यज्ञ-मण्डप स्थापित था, जिसके खम्भे स्वर्ण से मढ़े हुए थे। ललित ललाम तरु-लता आच्छादित उत्तुङ्ग मण्डप पर रङ्ग-विरङ्गे ध्वजा-केतु और पताकाएँ फहरा रही थीं, कमल पुष्पों के लटकन तथा कुसुम के तोरण लटक रहे थे।

ऐसे मण्डप के बीच में बैठे हुए जयचन्द अपने भाग्य को धन्य मानते हुए फूले नहीं समाते थे। कहीं कोकिल-कण्ठी नायिका मङ्गल-गीत अलापतीं कहीं गवैये लोग राग-रागिनियों को गा रहे थे। कहीं मधुर स्वरवाले बाजे बजते थे, और कहीं धानुक-मण्डली भीम स्वर में बाजे बजा रही थी। उस मण्डप में विविध भौंति की रोशनी हो रही थी। एक तरफ नाना प्रकार के नाच-रङ्ग, नाटक, रास इत्यादि हो रहे थे, आगन्तुक और अधिकारी यथास्थान स्थिति थे। इसी समय बालुकाराय की स्त्री और बच्चे बाल खोले, सिर पर धूल बखेरे, फटे वस्त्र पहने, हाहाकार करते और पछाड़ खाते यज्ञ-मण्डप में जा गिरे। उनका उच्च आर्तनाद सुनकर सभी मङ्गल-कृत्य बन्द हो गए। यज्ञ की आहुतियाँ वहीं रुक गईं, रास-रङ्ग पर सन्नाटा छा गया।

बालुकाराय की स्त्री ने उच्च स्वर से कहा—“महाराज, चौहानराज ने आपके भाई बालुकाराय को मार डाला, खोखन्दपुर को उजाड़ दिया, और सारा प्रदेश लूट-पाट और जलाकर विध्वंस कर दिया।”

यह सुनते ही जयचन्द के हृदय में आग लग गई। वह यज्ञ छोड़ उठ खड़े हुए, और दाँतों से होठ काट, लाल आँखें कर उच्च स्वर से बोले—“पूर्व दिशा का देवता इन्द्र है, अग्निकोण का अग्नि, दक्षिण का यम, नैऋत्य का राक्षस, पश्चिम का वरुण और वायव्य का वायु है, उत्तर का कुबेर और ईशान का ईशान है, आकाश में ब्रह्म और पाताल में शेष है। पृथ्वीराज इनमें से किसी की भी शरण जाकर मेरे हाथ से जीवित नहीं बच सकता। यदि आज मैं अपना दल सजा पृथ्वीराज को उसके बहनोई और सहायक समरसिंह-सहित बाँध न लाऊँ, तो मैं अपने पिता का पुत्र नहीं। मैं इन दोनों शत्रुओं को कोल्हू में तिल की भौंति पेरूँगा।”

इतना कहकर उसने सुमंत्र मन्त्री को अपनी चतुरङ्गिणी सेना सजाने की आज्ञा दी।

यह आज्ञा सुनते ही सर्वत्र सन्नाटा छा गया। सब समारोह रुक गए। जो स्थान इन्द्र-भवन बन रहा था, वह श्मशान के समान हो गया। क्रोध में भरे हुए राजा रनिवाम में चले गए, तब महारानी जाह्नवी ने कहा—‘खैर, जो हुआ, सो हुआ, अब मेरी बात मानो, इस समय सब राजा उपस्थित हैं। पहले संयोगिता का स्वयंम्बर कर लो तब पृथ्वीराज से मोर्चा लेना।’

जयचन्द ने सब बातों पर विचारकर कान्ह कमध्वज को आज्ञा दी कि वह तारखाँ की कुमुक सेना लेकर पृथ्वीराज को पकड़ लाए। राजा की आज्ञा पा कान्ह कमध्वज ६० हजार सेना ले दिल्ली पर चढ़ दौड़े। इधर जयचन्द ने स्वयंवर की ठानी।



६

संयोगिता ने जब सुना, महाराज क्रोध में फुफकार रहे हैं, यज्ञ-कृत्य और उत्सव स्थगित कर दिए गए हैं, सेनाएँ सज रही हैं, तब उसने धाय से पूछा—“पिताजी आज किस पर कुपित हो रहे हैं?” धाय ने उत्तर दिया—“पृथ्वीराज पर, जिसने रङ्ग में भङ्ग कर सारा आनन्द किरकिरा कर दिया है।”

संयोगिता ने कहा—“तब पिता जी ने उस वीर-पुंगव को स्वर्ण-प्रतिमा बनाकर द्वारपाल के स्थान पर क्यों स्थापित की? क्या तेजस्वी पुरुष कहीं अपमान सहन कर सकते हैं?” इसके बाद उसने मन-ही-मन कहा—“जब तक इस तन-पिंजर में प्राण-पखेरू हैं, मैं सम्भरी-

नाथ को छोड़ और किसी को भी न वरूँगी। चाहे इधर की धरती उधर हो जाय।”

कन्या का विचार जब उसकी माता को प्रकट हुआ, तो उसने भयभीत होकर राजा से निवेदन किया कि देवों, कन्या ने क्या हठ ठानी है। राजा ने दूतियों को कन्या का मन जाँचने को भेजा, और भी बहुत युवतियाँ समझाने को नियुक्त की। उनमें से एक दूती साम, दाम, दण्ड, भेद के सब अङ्गों में दक्ष थी। समयानुसार, विचारमय चतुरता-पूर्वक उचित वचन उच्चारण करनेवाली, मनोहारिणी, मेनका के समान सुन्दरी थी। वह अपने हाव-भाव और कला चातुरी से मुनियों के मन को मोहनेवाली थी। उसकी चञ्चलता चतुरों के चित्त में चुभती थी, मधुर कलकंठ धीरे पुरुषों का धैर्य हरण करनेवाला और मन को प्रसन्न करनेवाला था। वह नाना प्रकार के फरफन्द, दण्डफन्द एवं छरछन्द करके मूर्च्छित काम को जगानेवाली थी। व्रती मुनियों के मन को डिगाना उसके बाएँ हाथ का खेल था। ऐसी चतुरा चरी संयोगिता के चित्त से अचल व्रत को चलायमान करने के लिये चुपचाप चलकर रनिवास में आ पहुँची।

दूती को देखकर संयोगिता ने पूछा—“कहां, मेरे पिता की क्या इच्छा है, और तुम मेरे पास क्यों आई हो?” दूती ने प्रसन्न भाव से कहा—“आपके पिता ने स्वयम्बर रचा है, जिसमें देश-देश के राजा लोग पङ्क-दरवार में हाजिर हुए हैं। सां हे कुमारी, उनमें से किस भाग्यवान के गले में जयमाल डालोगी? यह तो अपने मन की कहो।”

यह सुनकर संयोगिता तो कुछ न बोली, पर उसकी सैन पाकर उसकी सखी दूतिका से बोली—“ऐ बहन, तुम भी कैसी बेसमझी की बातें करती हो। मद के मतवाले को धर्म-गुण कहना, बाँझ के सामने पुत्र-सुख सुनाना, और बहरे के आगे ज्ञान बखानना कहाँ की

बुद्धिमानी है। राजकुमारी अब वयःप्राप्त है, उसके सामने ऐसी छिछोरी बातें न करो।” अब संयोगिता बोली—“जो राजा मेरे पिता का लोहा खाकर उनके बंधुआ बन चुके हैं, वे मेरे वर बनने योग्य क्योंकर कहे जा सकते हैं? अरी तू दासी है, कुलीनों को लीक का क्या जाने। मुन, जो लोग मेरे माता-पिता को माता-पिता-सम मानते हैं, वे धर्म के नाते मेरे भाई न हुए? या तो मेरा पाणि-ग्रहण पृथ्वीराज के साथ होगा, या मैं गङ्गा में निमग्न हो जाऊँगी।”

दूती यह खरी बात सुनकर फिर वहाँ न ठहरी। उसने राजा से जाकर कहा—“उन तिलों में तेल नहीं। राजकुमारी प्राण देगी, पर प्रण न देगी।” राजा यह सुनकर विकल हो गए। उन्होंने क्रोध में आकर संयोगिता को बहुत खरी-खांटी सुनाई। अन्त में अछूता-पछुताकर धाय को बुलाकर कहा—“तू जाकर बेटी को समझा, और उसका हट दूर कर।”

जब धाय संयोगिता के पास पहुँची, तब उसका अभिप्राय जानकर संयोगिता ने कहा—“मैं तुम गुरुजनों के सम्मुख कहती लजाती हूँ पर कुसमय पाकर कहना पड़ता है। मैंने पृथ्वीराज से पाणि-ग्रहण करना विचारा है।” दाई ने कहा—“बेटा, कैसी बौरी हुई हो, जिससे माता-पिता वरजते हैं, जिसके खरे-खोटे की परख नहीं, उससे सहसा सम्बन्ध स्वीकार कैसा? अच्छी भाँति समझकर कहो।” संयोगिता बोली—“समझना क्या है, चन्दन की परख तो उसकी सुझध है। जिस चौहान की चर्चा चहुँओर चरचराते से चल रही है, उसका परिचय क्या?” एक सहचरी ने अवसर पाकर कहा—“तुम राजकुमारी हो, और वह लुहार कुल में उत्पन्न है, यह भी तो सोचो।” संयोगिता ने कहा—“वह लुहार है? जिसने शङ्करगढ़ खड़ा फुकावा दिया, जिसकी तलवार ने ८० लाख तलवारों के धनी पिता का यज्ञ विध्वंस कर दिया, जिसने सोडसी के युद्ध में महावीर भोला भीम का सिर भुट्टा-सा उड़ा दिया,

जिसने अपने शत्रुओं को अपनी की आग की भाँति सर्वत्र भस्म कर दिया है; जिससे अजमेर में धुआँ हुआ, मंडोवर में लपटें निकलीं, मोरारी आदि जिसमें लिपटकर झुलस गए, और कालिंजर तथा रणथंभोर के अजेय दुर्ग जिसमें भस्म के ढेर हो गए, और अब वही अग्नि गोरी के घड़े को पका रही है।” संयोगिता इतना कहकर चुप हो गई। आवेश में उसके हाँठ फड़कने लगे, मुख लाल हो गया, बदन थरथराने लगा, तब एक सखी ने उहँडता से कहा—“समस्त महाराष्ट्र, नीमच, बरार, कर्नाटक कोकन और आधा मालवा जिसने अपनी यशस्विनी भुजाओं से जीता, और शहाबुद्दीन को जिसने अनायास ही पकड़-पकड़कर छोड़ दिया, वही पृथ्वीराज हमारी राजकुमारी के वर होनेयोग्य है, पङ्गराज के दास अन्य राजा लोग नहीं।”

संयोगिता कुछ देर चुप बैठी रही, फिर कहा—“क्या मैं किसी के सिमाने से या आग्रह से उस नर-श्रेष्ठ को भूल जाऊँगी, कभी नहीं।” इतना कहते-कहते उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली। क्रोध और आवेश में उसके लाल-लाल नेत्रों से जो आँसू गिरे, वे ऐसे भले लगे, जैसे चन्द्रमा को अमृत-कुण्ड में धोने से उसकी कालिमा धुल चली हो।

यह दशा देख धाय और सहचरियाँ तो चुप हो गईं, पर संयोगिता ने सखियों को लक्ष्य करके कहा—“मनुष्य-जीवन में बात ही सब कुछ है। यदि बात गई, तो जीना किस काम का। इसलिए तुम लोग मुझे ऐसा उपाय बताओ, जिसमें मेरी बात न बिगड़े।”

एक प्रौढ़ा सहचरी बोली—“चढ़ती जवानी में मन-वाञ्छित पीतम से मिलना ही सलाह की बात है। यौवन के ढल जाने पर फिर संसार का सुख कहाँ?”

यह सुनकर संयोगिता ने कुपित होकर कहा—“चलो, चुप रहो,

ऐसी बातें उससे करो, जो तुम्हारे बराबर की हो, मैं तो तुम्हारा लिहाज करती हूँ, और तुम ऐसी बातें करती हो ?”

सहचरी ने कहा—“यहाँ लिहाज की बात नहीं है, मैं सच कहती हूँ, यह जवानी ग्राम की मञ्जरी-सी है। चित्त की चोप-रूपी कोप एवं चतुरता की लहलही ललामी के बीच से उत्पन्न चढ़ती हुई जवानी कमल के पुष्प के समान है, जिस पर कंदर्प की कोमल प्रभा पड़ती और रस-लोभी प्रेमियों की भौर-भीर उड़ती फिरती है। सो हे सुन्दरी, बसन्त-ऋतु के समान तेरी जवानी के आलम का यही समय संसार-मुख उपभोग करने का है।”

संयोगिता ने ठण्डी साँस ग्रीचकर कहा—“यह सब कुछ है, परन्तु इस शरीर में साँस रहते मैं अपने पृथ्वीराज को छोड़ और दूसरे को न वलूंगी ! न वलूंगी !! मैंने तो मरना निश्चय कर लिया है, अब तक केवल मंभरीनाथ की आस पर ही साँस है।”

सहचरी फिर बोली—“अरी राजकुमारी, तेरे अङ्ग-अङ्ग में अनङ्ग की अवाई से अरविन्द की-सी अरुणाई आ गई है। चक्रवाक से यौवन उठ रहे हैं, और भुजङ्ग-सी वेणी लटक रही है, तेरे सचिक्कण सटकारे कारे-कारे कच चंचरीकों की कतार का मात करते हैं। तेरे पैर के तलुओं से रसाल-पल्लवों की-सी लाली झलकती है। इस प्रकार तू बसन्त की नवेली बन रही है। तेरा चतुरता से पूर्ण मधुर वचन तो कदापि मधुर मद से कम नहीं है, पर हे सुकुमारी, तू पञ्जराज के घर जन्म लेकर पृथ्वीराज के घर जाना चाहती है, भला सोच तो, इसमें कितना विनाश और कितना खून-खराबी होगा।”

संयोगिता ने झुंझला कर कहा—“चाहे जो हो, मुझे तो अह-निश, सोते-जागते, उठते-बैठते एकमात्र प्राणेश्वर पृथ्वीराज ही प्राणाधार हैं। तुम सब सखी मेरी बात गाँठ बाँध रखो कि जीती

जाऊँगी, तो जोगिनीपति पृथ्वीराज के साथ, नहीं तो इस घर से मरी निकलूँगी।”

इतना कहकर संयोगिता वहाँ से रोती हुई उठकर अपने शयन-कक्ष में चली गई। सखियाँ और धाय विमूढ़ बैठी सोचती रहीं।



१०

कान्हू की कमान में ६० हजार राठौरों ने दिल्ली की सीमा दाबते ही धरती हिला डाली। गाँव लूटकर जला दिए, आबाल-वृद्ध जो मिला, तलवार के घाट उतार दिया। नगर को लूटकर उजाड़ दिया। जब यह उत्तुङ्ग सेना दिल्ली के चारों ओर उपद्रव मचाने लगी, तो पृथ्वीराज ने आकुल होकर सामन्तों से सम्मति लेने की सभा बुलाई। देर तक परामर्श होता रहा। अभी निर्णय न हो पाया था कि हौंसी के दुर्ग-रक्षक नरवाहन नागवंशी का दूत सभा में आ उपस्थित हुआ। उसने निवेदन किया, “महाराज, ग़ज़नी-पति शहाबुद्दीन की माता ७०० बेगमों और भारी सेना के साथ मक्का यात्रा के बहाने हमारी सरहद में घुस आई थी। स्वयं खुरासानख़ाँ सेना संचालन कर रहे थे। हौंसी से थोड़ी ही दूर पर आसीपुर से शाही राज्य की सरहद है, अतः शाह का इरादा इसी बहाने हौंसी पर अधिकार करने का था, इसलिए उन्हें रोकना ही ठीक समझा गया। महाबली पञ्जूनराय नागौर में थे, और सब सरदार श्रीमान के साथ थे। रामराय रघुवंशी की राय तो तरह दे जाने की थी, परन्तु चामुण्डराय ने बाधा देना ही ठीक समझा, अन्ततः युद्ध हुआ, शाही सेना

हारी, महाराज के प्रताप से हमारी विजय हुई। बेगमों के डेरे और शाही लश्कर लूटकर विध्वंस कर दिए। इस हार की सूचना पाकर ग़ज़नी के शाह बड़ी भारी सेना हॉंसी पर ले चढ़े, जिसकी पहली टुकड़ी का अधिपति बलोची पहाड़ी, दूसरी का तातारख़ाँ और तीसरी का खुरसानख़ाँ था। चौथी का संचालन स्वयं शाह कर रहे थे। शाही सेना में हब्शी, रूसी, ख़िलजी, इलच, खुरेस, बुखारी, सैयद सैलानी, शेख़, चग़ताई, पीर, तुर्क, बलोच, सभी जाति के सैनिक थे। इस सेना ने हॉंसी का कठिन घेरा डाल दिया। परन्तु चामुण्डराय ने तत्काल मोर्चेबन्दी की, और कुछ समय तक दोनों ओर से बड़ा भारी लोहा बरसा, पर जब देखा, दुर्ग में बन्द रहना अनुचित है, तब अचलेश खींची, गोइन्दराय, मदनसिंह, नरवाहन, नरसिंह समरसी, दोनों भाई भट्ट भग, मोरी, देवकरन, साजुखासुर, भीनपुरण्डार, जैतप्रमार, वग़री, चमुण्डराय आदि ने सलाह कर रामराय ख़ुवंशी की कमान में कील-काँटे से दुरुस्त हो फाटक खोल दिया, और पिल पड़े। भारी मार हुई। रक्त की नदी बह चली। लोथों के ढेर लग गए। अन्त में शाही सेना के पैर उखड़ गए। महाराज के प्रताप से हॉंसी का क़िला वेदाग बच गया। आधी शाही सेना खेत रही, और १०० हाथी मारे गए। हमारा नुक़सान साधारण हुआ। परन्तु शाह फिर भारी सेना लेकर चढ़ आया। इस बार शाह के साथ तीन लाख सेना थी—रुमी, हेरवी, परेवी, भक्वर, समरकन्दी, कासकन्दी, बलोच, तुर्की, मकरा आदि सभी जाति के यवन सैनिक थे। अराकान के पहाड़ी दैत्य भी थे, जिनके सिर पर बहुत कम बाल और रङ्ग धुमला होता है। जिनके मुँह घोड़े के-से और कान सूँप के-से थे, वे दो-दो दुम्बे रोज खाते थे। वे लोग मल्ल-युद्ध में पर्वत के समान अचल थे, उनके घनुष पर कई टंच की प्रत्यंचा चढ़ती थी, और प्रत्येक के पास १००-

१०० तीरवाले दो-दो तरकस थे। शाह ने पहले ही पड़ाव से समस्त सेना के आठ भाग करके चारों तरफ फैला दिए और ५० हजार सेना-सहित स्वयं दुर्ग पर आक्रमण किया।

“शाह ने कहला भेजा कि या तो लोहा लो, या दुर्ग खाली कर दो। पञ्जूनराय कुरम्भ बोला—‘भाई, हम तो केवल मरना जानते हैं,’ निदान चामुण्डराय, जैतसी, रामराय, बग्गरी आदि सामन्तों ने कमर कसी, परन्तु जब शाह की टिड्डी-दल के समान सेना ने मार की तो सबके छक्के छूट गए। सब किले की खिड़की से खेत छोड़ भागे। केवल वीर-वर देवराय बग्गरी ने मोर्चा नहीं छोड़ा। नागौर से जो सामन्त आए, उन्होंने भी भागने में सहायता दी। उन्होंने दक्षिण-पार्श्व पर धावा किया, जिससे किलेवालों को निकल भागने का अवकाश मिल गया। महाराज, यह सामन्त खेत छोड़नेवाले न थे, पर होनहार प्रबल हैं। प्रातःकाल शाह ने भयानक आक्रमण किया, देवराय बग्गरी के साथ कल्हन, कमध्वज, साँखला शूर और अचलेश खींची भी थे। तातारखाँ ने बड़े वेग से हल्ला बोला। किले पर चारों तरफ से आग बरसने लगी। इधर से भी प्राणों पर जूझकर लोहा लिया गया। बारह दिन तक अकेला बग्गरी वीर दुर्ग की रक्षा करता रहा। अन्त में शाह ने हारकर अपनी सेना के दो विभाग किए। एक रात को युद्ध करता, दूसरा दिन को। अन्त में हाथियों को आगे करके शत्रु दुर्ग में धँस पड़े। अब तक एक हजार योद्धा और साँखला शूर एवं अल्हनकुमार काम आ चुके थे। अब सिरोही चलने लगी, और शत्रुओं के कूट कटकर अम्बार लग गए। जब दो योद्धा एक साथ वार करके एक ही साथ कटते, तो परस्पर गले मिले-से रह जाते थे। गीध और चील बड़े-बड़े माँस के लोथड़ों को उठाकर आकाश में ले जाते और वहाँ लड़ मरते थे। जवानों के सहजोर सीने में कटार क्या लगती थी, मानो प्राण-पखेरू के लिये माया-मोहमय पिंजड़े से निकलने को

स्वर्ग का रास्ता बनाया जाता था। इसी मारामारी में देवराज बग्गरी खेत रहे, तो अम्सराएँ अस्तम्भित रह गईं, और सूर्य के रथ का चक्का रुक गया। देवाङ्गनाएँ सोचती ही रह गईं, और शिवजी ने उसका मुण्ड अपने मुण्डमाल में पिरो लिया। उस वीर के शरीर में चवालीस घाव तलवार के गहरे लगे, और शरीर से जब मुण्ड अलग जा छिटका, तब रुण्ड ने कटार से वार किए, और तिल-तिल हाँकर कटने तक शत्रुओं के सहस्रों वीरों का नाश किया। महाराज, इस प्रकार वह भूनिबराय के पुत्र वीरवर बग्गरीराय स्वर्गवासी हुए, और भी सभी वीर धराशायी हुए। अन्त में अलीलखों ने किले पर शाही निशान रोप दिया। केवल सौ राजपूत जीवित बचे हैं, वे दिल्ली आ रहे हैं।”

हाँसी-युद्ध का इस प्रकार वर्णन करके ज्यों ही दूत चुप हुआ कि द्वारपाल ने सूचना दी कि हाँसीपुर से भागे हुए सामन्त ड्याँदियों पर हाजिर हैं। पृथ्वीराज ने उन्हें सामने बुलाया, और सादर गले मिलकर कहा—“भाइयो, मन में ग्लानि न करो, बीती बात को विसारो, आगे का प्रबन्ध करो, आप ही लोगों का मुझे भरोसा है।” इस पर सामन्तगण बोले—“पृथ्वीनाथ, जिस क्षत्रिय की धरती जीते-जी छीन ली गई, उसका जीवन व्यर्थ है, अब हम प्राण देने को प्रस्तुत हैं।”

इसी समय कन्नौज से एक दूत आ पहुँचा। पृथ्वीराज ने उससे पूछा—“कहो, वहाँ का क्या समाचार है।” दूत ने कहा—“महाराज, सुनिए। कन्नौजराज जयचन्द के स्वयम्बर में हजारों राजा उपस्थित थे। आपकी स्वर्ण-प्रतिमा छड़ी लिए हुए द्वारपाल के स्थान पर स्थापित थी। मुहूर्त आने पर संयोगिता भी जयमाल हाथ में लिए सभा में सखियों—सहित आई। कन्नौज का राजकवि आगे-आगे एक एक राजा का नाम, ग्राम, कीर्ति बखान करने लगा। इसी तरह होते-

होते जब आपकी मूर्ति के पास आकर कवि ने आपका यश बखान किया, तो संयोगिता ने उसी के गले में जयमाल डाल दी। यह देखकर जयचन्द ने कहा—“नहीं बेटी, चूक गई, फिर से फेरी की जाय।” निदान ऐसा ही किया गया, पर फिर भी संयोगिता ने किसी राजा की ओर आँख उठाकर नहीं देखा, और स्वर्ण-प्रतिमा पर जयमाल डाल दी, परन्तु पङ्गराज ने फिर भी न माना, और तीसरी फेरी कराई। इस बार कवि ने चतुराई से बढ़-बढ़कर सब राजों की तारीफ की, और आपका केवल नाम मात्र ही उल्लेख कर दिया, फिर भी संयोगिता ने आप ही की स्वर्ण प्रतिमा को जयमाल पहनाई।

“यह हाल देख जयचन्द क्रोध से काँपता हुआ उठा, और छूर्ता में घूँसा मार कर महल में चला गया, और शयनागार में बदनवास होकर पड़ रहा, तब बुद्धिमान् मन्त्री ने अवसर जानकर कहा—‘राजन्, होनहार प्रबल होती है, इसी के बल दक्ष का यज्ञ ध्वंस हुआ, इसी के बल पाञ्चाल का यज्ञ विगड़ा, इसी के बल नृग राजा को नरक मिला, सो महाराज, बुद्धिमानी यही है कि बीती को बिसार दो, और आगे की सुधारो।’

“राजा यह सुनकर भी कुछ न बोला, और संयोगिता को गङ्गा किनारे के महलों में रहने की आज्ञा दी। जहाँ वह सौ सखियों और दासियों-सहित रहती है। व्रत, जप, पूजन और देवार्चन करती है, और अहर्निश आपके ध्यान में मग्न रहती है। हे महाराज, उसके पास उसकी गुरुआनी मदन पाठिका भी है। उसने उसे योग-साधना से आपका ध्यान करना सिखाया है। उसने बताया है कि सुन, यह प्राण-पञ्ची की भाँति स्थिर है, इसे ब्रह्माण्ड के कमल-चक्र के बीच में स्थिर करके पृथ्वीराज का ध्यान कर। उस कमल-चक्र के आठ दल हैं। पूर्व दिशा का दल श्वेत है, उस पर प्राण स्थिर करने से शान्त रस की भावना उत्पन्न होती है। आग्नेय का दल लाल है, उस

पर प्राण स्थिर होने से आलस्य और निद्रा आती है। दक्षिण दिशा का दल अग्नि-शिखा के समान है, वह क्रोध को उत्पन्न करता है, नैर्ऋत्य का नीला है, उस पर चित्त जाने से भय उत्पन्न होता है। पश्चिम दिशा का दल श्याम है, उससे हास्य एवं अन्य आमोद-प्रमोद की उपज होती है, वायव्य कोण के दल का रङ्ग आकाश के समान है, उस पर चित्त जाने से उच्चाट एवं चिन्ता पैदा होती है। उत्तर दिशा का पीला है, उसमें नाना भौंति के भोग-विलास और शृंगार-बनाव की वासना बसती है। ईशान का दल गौर वर्ण है, वहाँ लज्जा और शङ्का बसती है, अस्तु। इन सबको छोड़कर इनके गोचर स्थान अर्थात् मध्य में ध्यान रखकर उपासना करने से सर्वसिद्धि होती है, और कुत्सित प्रपञ्चों का नाश होता है।

“सो महाराज, राजवाला संयोगिता आपकी प्राप्ति के लिए इस प्रकार योग सिद्ध करती है, और अन्न-जल त्याग केवल दूध और गङ्गा-जल पर जीवन रखती है।”

यह समाचार सुन और चारों तरफ विपत्तियों के बादल घुमड़ते देख पृथ्वीराज तड़प उठे। उन्होंने एक लम्बी साँस खींची, जिसमें संयोगिता की स्मृति ओत-प्रोत थी, पर अवसर उपयुक्त न समझ उन्होंने सामन्तों से कहा—“हे वीरवरो, अब कहो, क्या करना चाहिए?”

सब मन्त्रियों और सामन्तों ने परस्पर विचार करके निश्चय किया कि सर्वप्रथम चित्तौड़-अधिपति राजर्षि रावल समरसिंह जी को सहाय्यार्थ लिखा जाय। कैमास मन्त्री दस सामन्तों-सहित दिल्ली की रक्षा करें। दस सामन्त अपने पराक्रम से पङ्ग-सेना का अवरोध करें और शेष योद्धाओं को लेकर पृथ्वीराज हॉसो-दुर्ग का उद्धार करने को कूच करें।



पृथ्वीराज ने दम बाँधकर कूच किया, सामन्त-मण्डली से घिरे हुए पृथ्वीराज वीर-दर्प से देदीप्यमान हो रहे थे। उनका प्रसिद्ध धनुष उनके हाथ में था। रतनारे नेत्रों का तेज असह्य था। उनकी भौंहों को स्पर्श करनेवाली मूछें इन्दु की कलाँ जैसी जान पड़ती थीं। सेना के बीच वह तारागणों में चन्द्रमा के समान शोभित थे। लश्कर के हाथी गिरि-कजल से और उनके गंडस्थलों से भरते हुए मद-पनार पावस के भरने से जान पड़ते थे। रण-वाद्यों का शब्द बादल की गरज से कम न था। कहीं जोंगड़ा और कहीं कालिङ्गड़ा अलापते, कहीं नकीव पदवी कलापते, कहीं वन्दी विरद गाते, और कहीं कवि कवित्त सुनाते ऐसे प्रतीत होते थे, जैसे पावस में मोर और पपीहे बोल रहे हों। घुड़सवारों के नेजों की अनी इतनी घनी थी कि बीच से परिंदा पर भी नहीं मार सकता था। कहाँ तक कहा जाय, उस चौहान सेना के आतंक से दसों दिग्पाल शंकित हो उठे, और कमठ की पीठ सटपटा उठी।

रावलजी उधर कूच दर-कूच करते हुए ६ दिन में हाँसी के मैदान में जा पहुँचे थे। उनके साथ उनके छोटे भाई अमरसिंह भी थे। तातारखों ने अमरसिंह का आना सुना, तो खुशी के मारे उसकी छाती फूल उठी। अमरसिंह उसे बहुत खलते थे अब अकेला पाकर उसे बहुत हर्ष हुआ, और उसने तत्काल खुरासानखों की सेना को हरावल में करके तुरन्त ही रावलजी पर हल्ला बोल दिया। इधर से नाहरराय और अमरसिंह ने जो बाग उठाई, तो घोड़ा पंत्ती की भाँति उड़ चला, और चपला के समान उनकी तलवार काट करती हुई रुण्ड-मुण्डों के ढेर करने लगी। सिपाही-सिपाही, सद्दार्-सद्दार् की ऐसी ठनी कि घनाघनी की मार में परस्पर लोहे की धार से भरती हुई अग्नि-बूँदे वर्षा की बहार दिखाने लगीं। यवन-सेना आध मील पीछे ठेल दी गई। इसी ठेलमठेल में खुरासानखों और अमरसिंह में ठन गई। बड़ी

देर तक बराबरी की चोटें चलीं, अन्त में खुरासानखाँ की एक चोट खाकर अमरसिंह दो हो गए ।

अमरसिंह के काम आते ही कसामसी और बड़ गई । रावलजी की आँखों से आँसू के स्थान पर आग की चिनगारियाँ छूट चलीं । उन्होंने गाजर की तरह शत्रु-सेना को काटते हुए खुरासानखाँ को ललकारा, और क्षण-भर में उसका सिर भुट्टा-सा उतार लिया । खुरासानखाँ को खपता देख तातारखाँ तैश में आ ५०० तातारी जवानों-सहित अमरसिंह पर बाज की तरह टूटा । इस समय राजदूत-सेना में २५ कबन्ध खड़े लड़ रहे थे । अमरसिंह ने हुंकार मारी । उस समय युद्ध का रङ्ग देखकर भूत, प्रेत, बैताल आकाश में नाचने लगे । इतने में पृथ्वीराज भी अपनी चतुरङ्गिणी सेना-सहित आ पहुँचे । अब तो गहरी ठनी । राजपूतों में रणोन्माद बढ़ रहा था । उधर मुसलमान भी मरने पर तुले थे । इस ठसाठसी में घोड़ों की ऐंठदार गर्दनें नवोढ़ा के घूँघट को मात करती थीं । बनैत वीर अपनी खपनी पैज पर ऐसे अटल थे, जैसे पनिहारिन सदा अपने सिर पर के घड़े पर सुरत रखती है । जब कभी टोप फट जाने पर खोपड़ी निकल पड़ती, तो ऐसा मालूम होता था, मानो राहु का पेट फाड़ चन्द्रमा निकला है । बख्तर पर खाली हाथ पड़ जाने से धार भरे हुए दुधारे केतकी के पुष्प की पङ्कड़ी-से नजर आते थे पर कायरों की बुरी दशा थी । बेचारे दूसरों को मरता देख आप हाथ मोड़ते, हाय-हाय करते और चक्कर खाकर गिर पड़ते थे ।

अमरसिंह और उनका स्वामी भक्त खवास दोनों ही पास-पास गिरे थे । अभी अमरसिंह में दम था । उनका खवास कौवे और गीधों से उन्हें बचाए हुए था । संध्या होते-होते उनका प्राण-पखेरू उड़ गया । खवास भी ठण्डा हो गया । दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविर को लौटी । आज यवन-दल के ६० प्रमुख सरदार मारे गए ।

प्रातःकाल होते ही दिनों दल फिर हुङ्कार करके झपटे । पृथ्वीराज और महाबली चामुण्डराय रण में बिखरे पड़ते थे । बाणों की सरसराहट तेगे की खटखटाहट से कान में शब्द नहीं पड़ता । बिजली-सी तलवारें चमक रही थीं, रक्त की धार नदी की भोंति बह चली । दिन-भर बिना विश्राम संग्राम चला । अन्त में यवन-दल परास्त होकर हटा । यवन-दल के बहुत सिपाही खेत रहे । चौहान-सेना के ३ सामन्त काम आए, यवन-सेना भाग गई । खेत साफ कराए जाने पर १३ सामन्त अशक्त घायल पाए गए । हांसी का दुर्गाध्यक्ष नरवाहन मृतप्राय पाया गया । किले पर राजपूत निशान रोप, घायलों की सुश्रूपा करा पृथ्वीराज समरसिंह-सहित दिल्ली आए । वहाँ समरसिंह का ५ दिन आतिथ्य कर उन्हें दान-भान के साथ बिदा किया ।



११

लगी बुरी होती है । वह लगी ही क्या, जिसमें आँख लगे । फिर बसन्त की बयार विरहामि को भड़काती ही है । इस प्रबल पराक्रम के युद्ध के बाद भी पृथ्वीराज को विश्राम कहाँ था । जब दो प्रहर होने पर भी उन्हें निद्रा न आई, तब उन्होंने कवि चन्द को बुलाया और कहा—

“हे मित्र, तुम जानते हो कि जयचन्द ने मेरी कितनी अप्रतिष्ठा की है । यह तिरस्कृत जीवन तो मुझे भार-स्वरूप प्रतीत होता है । तिस पर तुरा यह कि संयोगिता ने मुझे वरने का प्रण कर लिया है, सो अब तुम कहो, कैसे इस अपमान का बदला लिया जाय, और कैसे वह सुन्दरी हाथ लगे ?”

चन्द्र कवि ने कहा—“महाराज, शास्त्र की आज्ञा है कि किसी को कहीं आते-जाते टोकना-रोकना उचित नहीं, परन्तु आपने पूछा है, इससे कहता हूँ। आप भली-भाँति जयचन्द के बल को जानते हैं, और अपना बल भी प्रकट है। शत्रु से लोहा लेकर आए हैं, योद्धाओं ने कमर भी नहीं खोली है। फिर गौरी का भय अभी बना ही है, जयचन्द की सेना ने भी राज्य में हलचल मचा रखी है, सो महाराज, मेरी राय में बिना आगा पीछा देखे किसी सहजोर के सामने जा जुटना कौन-सी बुद्धिमानी है।”

पृथ्वीराज ने मानो बात सुनी ही नहीं। उन्होंने कहा—“हे कवि, कहो, कब चलेंगे। हाँ, कहो तो, उठ पाओगे, संयोगिता को बिना हरण किए अब मैं एक क्षण भी तो नहीं रह सकता।” कवि ने बहुत ऊँच-नीच समझाई। इसी प्रकार रात बीत गई, पर राजा ने हठ न छोड़ा। उन्होंने कहा—“इस ग्रीष्म में तो चले चलो यार, है क्या, यह ज़िदगी पानी-भरी खाल है, इसलिये दिल का अरमान निकाल डालना ही अच्छा है।”

अन्त में साच-विचारकर चंद कवि ने स्वीकारकर कहा—“परन्तु यह तभी हो सकता है, जब आप शूर-वीरों को ताक में रखकर छुन्न वेश धारण करें, और यह यात्रा बिल्कुल गुप्त रखें, परन्तु इतनी जल्दी न करें, स्वस्थ हो लें, अवसर पाते ही चलेंगे।”

कवि चन्द समझा बुझाकर चला गया और राजा भी सोए।

दूसरे दिन राजा रानी इच्छुनी के महल में जाकर प्रीति पूर्वक उससे मिले, और बोले—“प्रिये, मैं कन्नौज जाना चाहता हूँ। तुम्हारी क्या इच्छा है।” रानी यह सुनकर उदास हो गई। उसने कहा—“प्राणनाथ! काले-काले तमालों में लाले-लाले पत्ते निकल रहे हैं, डहडही कोपलों के बीच से रस भरी लहलही कलियाँ मुकुलित हो रही हैं, और शीतल-मंद सुगन्ध बया बह रही है। कामाग्नि की

उद्दीपक कलकंठ कोयलें कू-कू कलाप करके कहती हैं, हे संयोगि जनो, वसंत की रातों में मजे में सेजों पर मौज मारो, ये आम बौर रहे हैं, कदंब फूल रहे हैं, उन पर लदे हुए मकरंद को मदांध भौरे भूम-भूमकर पी रहे हैं। शक्ति प्रम है, वायु निर्दोष है, वृक्षों में नए पल्लव आए हैं। इसीलिये हे गार्थ, तनिक मेरी ओर देखिए कि बहते हुए पानी की भाँति जो दिन बीत गए, सो बीत गए। हे प्यारे, जब दोपहर में सूर्य तपता है, और जंगल में धुआँ-धार अंधौवा चलता है, तब भौरा अपनी सदा की संघातिनी कलियों को छोड़कर कमल कली पर कल्लोल करने लगता है। रस का लोभ उसे कमल कली में घँसने को कहता है, पर घँसने के भय से भौरी सहित ऊपर-ही-ऊपर भिभकता और भिन्नाया करता है, बलहीन भौरे तो यों ही रह जाते हैं, पर भोगी भौरा तो भौरी के साथ कली में घँस जाता है।

“स्वामिन्, जब कीट-पतङ्गों की इस वसन्त में यह दशा है, तब मनुष्यों का क्या कहना है। यह मनसिज का सखा वसन्त संयोगियों को सुख देता है, इसलिये इस वसन्त में मेरे साथ सुख भोगिए।”

इतना कह इच्छुनी के नेत्रों से आँसू बहने लगे। राजा का हृदय भी द्रवित हो गया और वह वसन्त-ऋतु-भर इच्छुनी रानी के साथ विनोद करता रहा। जब ग्रीष्म का प्रारम्भ हुआ, तब पृथ्वीराज ने संयोगिता को स्मरण कर फिर चलने की इच्छा से पुण्डरीनी रानी के निकट जाकर कन्नौज जाने के लिये पूछा।

पुण्डरीनी ने कहा—“स्वामी, इस गर्मीले ग्रीष्म में भी कोई घर से बाहर जाता है, चारों ओर धुआँ-धार धूल उड़ रही है, दिन काटे नहीं कटते, रात जाते देर नहीं लगती, रस नीरस हो रहे हैं, तनिक दिन चढ़ते ही आग की भाँर लू चलने लगती है, जिसके स्पर्श से मनुष्य उत्तापित हो जाता है, बड़े-बड़े तालों के जल सूख गए, मछलियाँ तड़प-तड़प कर दम तोड़ती हैं। पतझड़ होने से वृक्ष

दिगंबर-से खड़े हैं। सूर्य के दर्शन क्या होते हैं, साक्षात् अग्निदेव का कोप प्रतीत होता है। तन ऐसा तपता है कि सर्वाङ्ग में चन्दन-लेप से भी शांति नहीं मिलती। कामाग्नि से वेहाल हुए हाथी वन-वन डोलते हैं, पथिकों की वधूटियाँ देहरी पर खड़ी पतियों की बाट जोहती हैं। हे स्वामी, जब सब लोग बाहर से घर को आते हैं तब आप घर से बाहर कहाँ जाइएगा। एक तो गर्मी में वैसे ही तन सूखता है, अब वियोगाग्नि में जलकर मेरी क्या दशा होगी, यह तो विचारिए।” इतना कह रानी पावस की बेल के समान पृथ्वीराज के गले से लिपट गई। पृथ्वीराज ने ग्रीष्म-भर पुंडीरनी के महलों में रहने का निश्चय कर लिया। बात-की-बात में पावस का सामान सज गया। रानी सोलहो शृङ्गार किए सखियों-सहित रति-समान शोभित हुई। इस प्रकार ग्रीष्म-भर राजा पुंडीरनी के महलों में रहे।

ग्रीष्म का अवसान होते ही राजा इन्द्रावती के पास विदा माँगने गए। प्रिय पति के वियोग की बात सुनते ही रानी की आँखों से अश्रु-धारा बह चली। वह पृथ्वीराज के वक्ष पर सिर रखकर बोली—“प्यारे, देखिए तो, चारों दिशा से काले-काले मेघ घिरे आ रहे हैं, दादुर दम नहीं लेते, मोर शोर करते हैं और पपीहा पीऊ-पीऊ करता है, सरिताएँ उमंग से अपने पति समुद्र से मिलने जा रही हैं, रात-दिन दोनों सामान हैं, भला यह समय भी यात्रा का है। कीच और कूड़े से रास्ता ही नहीं देख पड़ता, लताएँ वृक्षां से भरपूर लिपटकर मानिनियों से कहती हैं, भरे भादों में प्यारे से इस भाँति लिपटकर गहरा रंग छानो। इस मूसलाधार वर्षा में दिगंबर भी देहरी से बाहर पैर नहीं देते। हे स्वामी, ऐसे पावस में वियोग कैसे सहा जायगा।”—रानी इन्द्रावती का यह वक्तव्य सुनकर राजा वहीं रह गए, और पावस का स्वाद लेने

लगे। जब शरद्-ऋतु आई तब राजा फिर तैयार होकर रानी हंसावती के महलों में गए, और कन्नौज जाने की इच्छा प्रकट की। तब रानी ने कहा—“स्वामिन्, मुझे उचित नहीं कि आपकी इच्छा में बाधा दूँ, परन्तु सोचिए तो, शरद्-ऋतु की चटक चौदनी चार दिन की है, गई सो फिर आने से रही। इस समय या तो वे कुमारी सुखी हैं, जो पिता के घर खेलती हैं, या वे सुहागिनें, जो पति का अधरामृत पान करती हैं। देखो, सोंधी सुगंध के श्वेत पुष्प खिल रहे हैं, और उज्ज्वल जुनैया सब रात जगमगाती है। प्यारे, इस चटक चौदनी में तो लज्जा भागी जाती है, और मन में उमंगें उठती हैं। पृथ्वी, आकाश दोनों में फूल फूल रहे हैं, चंद्रमा दर्पण की भाँति दमदमा रहा है, उन्हें देख कामज्वाला नस-नस को जलाए डालती है। इस समय चन्द्रमा अपनी सोलह कलाओं से १८ प्रकार की वनस्पतियों को अमृत से सिंचन करता है, इसलिये हे स्वामी, शरद् की निर्मल कामोद्दीपक रात्रि तो सुखद सेजों पर ही बिताने योग्य है।”

रानी के भाषण से विमोहित होकर राजा ने जाने का संकल्प त्याग दिया, और शरद् वहीं व्यतीत करने का निश्चय किया।

शरद् व्यतीत होते ही राजा ने कूरमी रानी के महलों में जाकर विदा माँगी। रानी ने सुनकर कहा—“स्वामिन्, इस हेमन्त-ऋतु में दिन छीज रहे हैं। दिवाकर का दर्प मंद पड़ गया है। असह्य शीत की रातें बढ़ गई हैं। यह समय तो प्यारी सुकुमारी के आलिंगन में रात्रि काटने का है। वियोगिनि तो इस शीत की रात में ऐसी जलती हैं, जैसे पाले से कुमुदिनी। हे स्वामी इस हेमन्त-ऋतु में ज्यों-ज्यों रात्रि बढ़ती है, त्यों-त्यों मदमाती स्त्रियों के कुच, जंघा और नितंब पीन होते जाते हैं, और ज्यों-ज्यों दिन क्षीण होता जाता है, त्यों-त्यों कमर पतली होती जाती है। हे स्वामी, गिरि-

कंदरा में समाधिस्थित योगियों को ही सुख है, या सुख शय्या पर भोगियों ही को। अन्य सुख तो सभी नागण्य हैं। सुनिए, यह स्त्री शरीर उत्तम तपोभूमि है, यह रोमावली वन-पुष्प के समान है, दोनों कुच करि-कुम्भ एवं पर्वत शिखर के समान हैं, जिनके बीच सरस शृङ्गार का स्रोत बहता है। एक ओर विरहव्यथा की धूनी भी धधकती है, बस स्वामी, यही तपस्या कीजिए, नहीं तो क्या अजब, यह धूनी तपोभूमि को ही न भस्म कर दे।” इतना कहकर रानी राजा लिपट गई, और राजा ने भी हँसकर रानी की बात मान ली।

जब शिशिर-ऋतु आई तो राजा सब तैयारी कर रानी हम्मीरनी के महल में बिदा माँगने आए। उसने कहा—“प्यारे, सुनो। यह यौवन गहन वन है, जिसमें स्नेह की जल-धारा बह रही। युग यौवन पर्वत-शिखर हैं, शृङ्गार बेल-बूटे हैं, और हे कन्त, आप इस वन के केसरी हैं, जो आप कहीं चले जायेंगे, तो काम-रूपी मत्त हाथी बड़ा उपद्रव मचाएगा, फिर उसका उपाय कैसे होगा।

“देखो, शीत कैसा कट रहा है, वायु का कितना वेग है। मधुर, अम्ल, तिक्त, लवण रस में स्वाद अधिक बढ़ गया है। हे स्वामी, यही तो ऋतु काम-क्रीड़ा की है।”

राजा उस नवोढ़ा का यह हठ देख वहीं रम गए। इस प्रकार राजा का एक वर्ष इसी भोंति व्यतीत हो गया। अब उन्हें फिर संयोगिता की सुधि आने लग गई। एक दिन उन्होंने चन्द कवि को बुलाकर कहा—“हे कवि, क्या तुम कह सकते हो कि कोई ऐसी भी ऋतु है, जिसमें स्त्री को पति की परवा नहीं होती।” यह सुन कर चन्द ने हँसकर कहा—“पृथ्वीनाथ, यदि अग्नि ताप को त्यागे तो पत्नी पति को त्यागे।” राजा ने कहा—“परन्तु अब मैं संयोगिता के बिना न रहूँगा। अब सब तैयारी तुम अपनी इच्छानुसार कर लो। मैं न बोलूँगा। तुम जैसा कहोगे, करूँगा।”

कवि ने कहा—“जैसी आज्ञा ।” और वह चल दिया । चुने हुए प्रमुख सामन्त, गुरुराम पुरोहित और कवि चन्द तथा पृथ्वीराज ने अति गोपनीय मन्त्रणा की । किसी को भी कानोंकान यात्रा का अभि-प्राय न सुनाया जाय, यह सोचा गया । गुरुराम के बहुत सोचने पर भी कोई अच्छी साइत न मिली । केवल चैत-वदी तृतीया रविवार की साइत थी, जिसमें पृथ्वीराज को ११ वाँ सूर्य, ११ वाँ चन्द्रमा, पाँचवाँ केतु और दिल्ली के आठवें स्थान पर सम्मुख मङ्गल पड़ता था । पुरोहित ने सब ग्रहों का योग कह सुनाया, और कुछ दिन और ठहरने की सलाह दी, पर पृथ्वीराज ने एक न सुनी ।

गुरुराम ने कहा—“तब जो इच्छा हो, सो कीजिए, पर राजमन्त्री जैतराम प्रमार और अन्य सामन्तों से भी तो पूछिये ।” तब कुछ सामन्तों और मन्त्री को बुलाकर राजा ने कहा—“छत्र भेष से चन्द कवि के साथ कन्नौज जाना चाहता हूँ । तुम लोग क्या कहते हो ?” यह सुनकर सलख प्रमार ने कहा—“महाराज, कहीं बदली से सूर्य और वस्त्र से अङ्गारा भी छिप सकता है । कवि, पण्डित, राजा, विद्वान, घुड़सवार ये कभी नहीं छिपते । यदि जाना ही है तो पूरी तैयारी से चला जाय, यों छुरीदा जाना ठीक नहीं, आगे जैसी महाराज की इच्छा ।”

तब गोइन्दराय गहलौत बोला—“आपका ऐसा कहना उचित है, परन्तु यहाँ शहाबुद्दीन भी तो हरदम घात लगाए बैठा रहता है, दिल्ली को सूनी छोड़ना भी तो ठीक नहीं ।” निदान, अन्त में यह राय ठहरी कि समस्त सेना-सहित रामराय रघुवन्शी दिल्ली की रक्षा करे, और भिन्नतन एकमन सौ सामन्तों सहित पृथ्वीराज कन्नौज को कूच करें ।

पृथ्वीराज ने सभा भङ्ग की, और सामन्तगण चुपचाप जाकर तैयारी करने लगे । राजा जाकर महलों में सो गए । उन्होंने स्वप्न देखा, सहसा सहस्रों बिजली के प्रकाश के समान देदीप्यमान एक

राक्षस आकर राजा को कुवाक्य कहने लगा । राजा ने उसके पहले वचन पर धनुष पर बाण सन्धाना, दूसरे पर खींचा, तीसरे पर गोशा ताना चौथे पर बाण छोड़ दिया । राक्षस मरकर गिर गया । तब भट राजा की आँख खुल गई । देखा, कुछ नहीं । तब तक नित्य नियमानुसार कवि चन्द भी आ पहुँचे । राजा ने स्वप्न का हाल कहा । कवि ने कहा, सब शुभ है । आप शत्रु को परास्त करके तरह सब सफल-मनोरथ होंगे, पर कुछ और भी है, जो मैं स्वयं कुछ कह नहीं सकता । पृथ्वीराज ने उठ कर गंगा-जल से स्नान किया, सन्ध्या-वन्दन कर उन्होंने दिव्य वस्त्र धारण किए, और शिवार्चन को तैयार हुए । उस समय वह एक सिद्ध पुरुष-से प्रतीत होते थे । पडङ्ग का पाठ करते हुए ब्राह्मण मण्डली के साथ पृथ्वीराज शिवालय में पहुँचे, और मस्तक नवाकर देर तक शिव का ध्यान करते रहे । इसके बाद दो हजार घड़े गङ्गा-जल, चार हजार घड़े यमुना-जल, एक हजार घड़े दूध, एक हजार घड़े दही, पाँच सौ घड़े शहद, पाँच सौ घड़े काश्मीरी कुंकुम, इस तरह नौ हजार घड़े से शिवजी को प्रथम स्थान करवाया, फिर केशर, कस्तूरी, कुंकुम आदि सुगन्ध-मिश्रित सौ घड़े गुलाब-जल से स्नान करवाया । तत्पश्चात् चन्दन, चावल, बेलपत्र चढ़ा मंदार, मालती, पञ्चजाती आदि अनेक जाति के फूलों की माला पहनाई । पान, सुपारी, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से विधिवत् पूजन किया, विनीत भाव से स्तुति की, प्रदोष की कथा सुनी, और नाना प्रकार के दान देकर ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया, फिर महलों में आकर अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होने लगे ।

अन्ततः कूच का भी समय आया । ग्यारह सौ सवारों को साथ लेकर पृथ्वीराज ने कन्नौज को कूच किया । वे ग्यारह सौ सवार एक लाख सिपाहियों का मुँह मोड़नेवाले थे । वे डील-डौल के जोरावर राजपूत सिपाही ऐसे हट्टे-कट्टे और मजबूत थे कि उनके बज्र से सीने पर

वज्र चाहे बिखर जाय, पर सीने पर ज़रब न आवे । वे योद्धा नौ लाख सेना के निष्कर्ष थे । पृथ्वीराज भी उस समय एक ही योद्धा थे । गजनी-पति शहाबुद्दीन को बाँध-बाँधकर छोड़ देने से उनका आतङ्क और भी बढ़ गया था । ऐसे अद्वितीय तेजस्वी दिल्ली-पति राजा पृथ्वीराज ग्यारह सौ सवार, सौ सामन्त, छः निजी शूरमा और कवि चन्द को साथ ले महल से निकले, और नगर के बाहर यमुना के तट पर पहला मुकाम किया ।

वहाँ डेरा डाल राजा ने गुरुराम पुरोहित और मधुशाह को दिल्ली की रक्षा करने की आज्ञा दी, और गुरुराम के भाई बिट्टलदेव को साथ लिया । यहाँ सब सामन्तों के दस-दस पाँच-पाँच भाई, बेटे भी आ जुड़े । वहीं पर कवि चन्द सबका अगुआ बना, और सब सामन्तों और सैनिकों ने अपने-अपने भेष बदलकर उसका अनुयायी होना स्वीकार किया । उसी समय अटाले के मालिक रणवीर परिहार को आज्ञा हुई कि वह पेशखेमा लेकर आगे बढ़े, और अमुक स्थान पर पड़ाव डाल भोजन-पानी का प्रबन्ध करे । फिर उन्होंने घुड़साल के दारोगा जगमल को हुबम दिया कि सब सामन्तों को बिल्हन खेत के घोड़े चुनकर दे । इस प्रकार प्रबन्ध कर राजा ने पहले पड़ाव में विश्राम किया ।

दूसरे दिन एक-एक पहर रहे तैयारी का डङ्का बजा, और कवि चन्द तथा सब शूर-सामन्तों-सहित पृथ्वीराज नाव से यमुना पार हुए । ज्यों ही पृथ्वीराज ने नाव पर पैर दिया कि सम्मुख छिद्रमय काला कलश दिखाई पड़ा । यह अपशकुन देख चन्द कवि का माथा ठनका । नाव से उतर कर पृथ्वीराज थोड़ी ही दूर चले थे कि सामने मौर बाँधे हुए दुलहा-दुलहिन मिले । सूर्योदय होते ही यह शकुन देख सब दङ्ग रह गए । राजा यहाँ घोड़े से उतर पड़े, और दो घड़ी के लिये सब कोई एक स्थान पर बैठ गए । जोगड़े लोग सिन्दूरिया राग

की अलापाचारी करने लगे। इसके बाद ज्यों ही राजा ने चलने की इच्छा करके रकाब में पैर दिया कि बाईं तरफ श्यामा ने शब्द किया, और वृक्ष से उतरकर पृथ्वी पर आ बैठी। यह देख सबके मन में संशय ने घर कर लिया। तब तक सामने एक काला मृग भी देख पड़ा, जिसे राजा ने बाण से मार गिराया, और दो घड़ी को फिर ठहर गए। जब फिर चलने की तैयारी की, तो सामने योगिनी के दर्शन हुए। उसके एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में खप्पर था। राजा ने उसके खप्पर में स्वर्ण डाला, और विनीत भाव से प्रणाम कर आगे बढ़े। सामंतों ने भी बाग उठाई, और पहर दिन चढ़ते-चढ़ते बत्तीस कोस पर, भूसाम गाँव में पड़ाव डाला।

ज्यों ही पृथ्वीराज पड़ाव के पास पहुँचे कि एक स्त्री सिर पर घड़ा रखे सामने मिली, और जयजयकार करती हुई दाहने से बाएँ को चली गई। कुछ चलकर बाईं ओर गरजता हुआ सिंह मिला। फिर मांस का लोथा लिए हुए चील्ह और बाईं ओर बोलता हुआ सारस का जोड़ा भी नज़र आया।

ये सब अच्छे बुरे शकुन देखकर सब सैनिक चर्चा करने लगे कि यह यात्रा कहाँ की हो रही है। एक ने कहा, तीर्थ स्थान को जा रहे हैं। दूसरे ने कहा किसी देवता के दर्शनों के लिए कूच है। तब नरनाह कान्ह ने जैतराव से कहा—“तुम राजा को रोको।” जैतराव ने कहा—“मैं तो पहले ही अपना सिर पीट चुका हूँ।” पञ्जूनराय ने कहा—“यह सब इस भटवा की करतूत है। देखना, कन्नौज में लाश-पर-लाश फड़केगी।” तब कान्ह ने कहा—“सुनो कूरम्म, सोच-विचार से क्या होगा, जो होनी है, वह होगी। हमें क्या, इस नश्वर शरीर का सदा तो रहना नहीं है। कीर्ति से युद्ध-स्थल में काम आवेंगे, तो स्वर्ग मिलेगा। राजा जाने और उसका काम। पर हों, होनी बुरी देख पड़ती है।” पड़ाव पर स्नान, भोजन, विश्राम करके

फिर कूच किया। यहाँ से सब सरदारों को काम और हुक्मत का हिस्सा बाँट दिया गया। सेना की चाल नियत कर दी गई। प्रत्येक सामंत के तावे सौ-सौ सैनिक, दस सामंतों पर एक-एक वीर और दो-दो वीरों पर एक-एक जितेंद्रिय शूर नियत किए गए। पृथ्वीराज स्वयं सब सेना के अगुआ हुए। आगे-आगे पृथ्वीराज सूर्य के समान और उनके पीछे सैनिक किरणों के समान चले। कवि चन्द के सिद्ध किए बावन वीर, चौंसठ योगिनी और बहुत-से भूत-प्रेत, वैताल भी नाना प्रकार के भयानक और बीभत्स शब्द करते, गाते-नाचते सेना के साथ चले। रात-भर में उन्होंने बीस कोस की मंजिल तय की, और सूर्योदय होते-होते कन्नौज-राज्य की सीमा जा दवाई। शेष रात्रि वहीं व्यतीत कर सूर्योदय होते ही सामंतों सहित पृथ्वीराज ने बाग उठाई। अभी दस कदम भी न गए होंगे कि सम्मुख एक देव के दर्शन हुए। वह देव सर्वांग में विभूति रमाए और जटा लटकाए था। साथ में बहुत से कुत्ते थे। उसके दोनों नेत्र अंगारे की भाँति दहक रहे थे। हृदय पर गुंजा की माला थी, वक्षःस्थल लाल, काला, पीला और नीले रंग का था। बाहु कुछ सिंदुरिए और शर्वती थे। कंबुवत ग्रीवा पीली थी, कान श्वेत थे, भौंहें भूरी थीं, और ललाट-पट से केसरिया रंग की आभा निकलती थी। इसी प्रकार उसके पैर भी चार रंग के थे। नखों से घन-श्याम नीलिमा दमदमा रही थी। यह अद्भुत वेश देख और सब तो चुप रहे, पर कवि चन्द ने आगे बढ़कर शीश नवाया। देव ने आशीर्वाद दिया। देखा, तो उसकी जिह्वा भी दो रंग की है, तब कवि चन्द ने विनम्र हो हाथ जोड़कर कहा—“हे भूत प्रेत वैतालों के स्वामी, आज कहाँ की यात्रा हुई है?” देव ने कहा—कमध्वज और चौहान-कुल का संग्राम होनेवाला है। पंगराज-कन्या संयोगिता साक्षात् कलह-प्रिय उत्पन्न हुई है। उसके हेतु पिता और गति दोनों ही के वंश का नाश होगा। मैं वहीं जा रहा हूँ। वहाँ बड़े-

बड़े शूरोँ के सिर कटेंगे, जिन्हें मैं शिव को समर्पण करूँगा, और उनके रुधिर से मेरी योगिनियाँ खप्पर भरेंगी।” इसके बाद उसने एक वाण पृथ्वीराज को देकर कहा—“यह वही वाण है, जिससे शिव ने त्रिपुर को मारा था। इसी के बल से तुम संयोगिता को हरण कर सकोगे।” यह कहकर वह देव चल दिया। पृथ्वीराज और चंद कवि सन्नाटे में खड़े रह गए।

यहाँ से फिर कूच हुआ। पहर रात गए सब सेना ने फिर मुकाम किया। दिल्ली से चले तीन दिन, तीन रात होने में तीन पहर की कसर थी। सब सामंतों ने विश्राम करने को कमर खोली। प्रभात होने से पूर्व ही पृथ्वीराज ने शय्या त्यागी, और चंद कवि को बुलाकर कहा—“अभी मैंने स्वप्न में देखा है कि पूर्व दिशा में एक प्रकाश का उदय हुआ। उसमें से कुसुम-जैसे लाल केशों वाली कामिनी मेरे सम्मुख आ उपस्थित हुई। उसके ललाट-पट पर रोली का तिलक और केशर की आड़ सुशोभित थी। कानों में कुंडल सूर्य के समान चमक रहे थे। उसके देदीप्यमान कपोलों पर सर्पिणी-सी लटें लटक रही थीं। कंबु-ग्रीवा और चंपक-कली के समान उँगलियों की अद्भुत बहार थी। उसके नवीन कमल-कली-से उरोजाँवाले वक्षःस्थल पर हिलता हुआ मोतियों का हार हरिद्वार में गंगा जी की बहार दिखा रहा था। उसकी सिंह के समान पतली कमर, सोने के खंभों की-सी सुटार जाँघें और नारंगी-सी एड़ी मन को लुभाने वाली थी। वह बाला मेरे पास आ खड़ी हुई। मैंने देखते ही पूछा—“तुम कौन हो?” उसने कहा—“मैं मंजुघापा अप्सरा हूँ। मैं पिता और पति दोनों के वंश का नाश करूँगी।” इतना कहकर वह हँस दी, बस मेरी आँखें खुल गईं।”

पृथ्वीराज इतना कह पाए थे कि और सामंत भी आ जुटे। कान्ह ने कहा—“चन्द, मैंने एक अद्भुत तेजस्वी ब्राह्मण को देखा। उसके सामने खड़े होते ही मेरी आँखों की पट्टी खुल गई। उसने मेरे सिर

पर हाथ रखकर कहा—“हे अद्वितीय यशस्वी योद्धा, अब मेरा-तेरा साक्षात् सूर्य-मंडल में होगा।”

भीमकाय लंगरीराय ने कहा—“मैंने भी अद्भुत कौतुक देखा है। एक धूम्राकार सहस्र भुजावाली मूर्ति, जिसके नेत्रों से आग की चिन-गारियों निकल रही थीं, और जिसकी हथेली सिंह के पंजे के समान थी। उसके चारों ओर डाकिनी शाकिनी शोर कर रही थीं। उसने मेरे सिर पर हाथ रख दिया।”

गोइंदराय ने कहा—“मैंने श्वेत वर्ण, सात सँड और हज़ार दाँतवाले हाथी पर सवार इन्द्र को देखा। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर कहा—“वत्स, मैं तुम्हें स्वर्ग में मिलूँगा।”

यह सब सुनकर कवि चन्द ने कहा—“मैंने सिंहवाहिनी भगवती को यह कहते सुना है कि वहाँ चौंसठ सामंत खेत रहेंगे, और संयोगिता पृथ्वीराज को मिलेगी, सो आप लोगों के स्वप्न सत्य हुआ चाहते हैं, आप लोग तैयार रहे।” तब सब सामंतों ने कहा—“हमें तैयार क्या होना है, हम तो तैयार होकर ही आए हैं।” निदान, इस तरह बातें करके वहाँ से कूच बोला, और पहर दिन चढ़े शंकरपुर में मुकाम किया। भोजन-प्रसाद हो चुकने पर पृथ्वीराज ने सब सामंतों को अपने पास बैठाया और कहा—“हम कहाँ जा रहे हैं, और क्यों आए हैं, यह तो तुमने जान ही लिया। तीज को वाईस कोस, चौथ को चौबीस कोस, पंचमी को छत्तीस और आज छुठ को अड़तीस कोस की मंजिल तय हो चुकी है। अब यहाँ से कन्नौज आठ कोस की दूरी पर है। जो बात बरसों से दिल में थी, उसे आज सबेरे देखेंगे। भाइयो, मैं कवि चन्द की छागर लेकर जयचन्द का दरबार देखने जा रहा हूँ। अब लाज तुम्हारे हाथ है।”

जैत प्रमार ने कहा—“राजन् नेह के नैन, सुगंध की चोरी और कुलटा के भाव स्वयं ही प्रकट हो जाते हैं।” राजा ने कहा—“चाहे जो हो, अब तो जयचंद के महलों को देखना ही होगा। तुम्हें जैसा जँचे,

करो ।” यह सुनकर सब चुप बैठे रहे । कान्ह, गोइंदराय, पज्जून, सलख, निड्डुर, चन्द पुंडीर, पहाड़राय, जामराय, सिंह प्रमार, अत्ताताई, बलभद्र, प्रसंगराय, कनकराय और रामराय के बीच में बैठे पृथ्वीराज ढीली निगाह से सबको देखने लगे । यह देख सब सामंतों ने कहा—
“पृथ्वीनाथ, कोई चिंता नहीं ।”

बस, फिर क्या था, खुशी-खुशी दरबार बरखास्त हुआ । सब सामंत डेरों पर विश्राम करने लगे । पृथ्वीराज भी शिविर में पड़े करवटें बदलने लगे । सब गङ्गा-किनारे घरती पर ही पड़ गए । इस प्रकार सात घड़ी रात व्यतीत कर फिर से कूच के नगाड़े बजे, और सब सामन्त लोग अपने-अपने अताने पताने से सजे । सबने अपने-अपने भेष बदले । आधी रात थी । सप्तमी बृहस्पति वार की सन्धि थी । जब पृथ्वीराज ने बाग उठाई, ग्यारह सौ सवार और सौ सामन्त अपनी-अपनी टुकड़ी को यथानियम अधिकृत कर व्यूह-बद्ध चलने लगे । सब सेना के आगे-आगे शहनाई और नफीरी के स्वर छिड़ते जाते थे । बीच में पृथ्वीराज और चन्द कवि थे । चन्द कवि इस समय गङ्गा की महिमा वर्णन कर रहे थे, और पृथ्वीराज कान देकर सुन रहे थे । सामन्तों के दिल उमड़े पड़ते थे । एक कहता, मैं तो भाई, पाताल का राज्य लूँगा । दूसरा कहता, मैं इन्द्रासन लूँगा । तीसरा कहता, मैं सूर्य-मण्डल का भेदन करूँगा । चौथा कहता, मैं उसे पारकर चिन्मय ब्रह्म में लीन हूँगा । सभी अपनी-अपनी धुन में ऐसे मस्त थे कि जाना था उत्तर को, और चल रहे थे पूर्व को । चलते-चलते देर हो गई, तारा चढ़ गया, हरिणी उग आई, दिशाओं में सफेदी झलकने लगी, वृक्षों के पत्ते हिलने लगे, रात छूट गई, पौ फट गई, तब भी कन्नौज के राजमहल के कलश नजर न पड़े । तब समझे कि मार्ग भूल गए ।

कुछ काल में अरुणोदय हुआ, तब जयचन्द के महलों के स्वर्ण-

कलश झिलमिलाते देख पड़ने लगे । तब सबने कहा—“वाह, कन्नौज तो उत्तर दिशा में है ।” निदान सबने उधर ही बाग मोड़ी ।

जब और भी निकट पहुँचे, तब कवि चन्द ने कहा—“हे पृथ्वी-नाथ, समस्त क्षत्रिय-वंश और क्षत्रधारियों में श्रेष्ठ, असंख्य सेना के स्वामी, अतुलित बाहु-बलवाले, धर्म-धुरंधर, पृथ्वी पर इन्द्र के समान यशस्वी, कमध्वज-कुल-कमल-दिवाकर कन्नौजराज जयचन्द के, जिनके सामने छत्तीसों वंश के क्षत्रिय सिर झुकाते हैं, और दरबार में छहो भापा, नवो रस और चौदह विद्या, चौंसठ कला देह धरकर विराजती हैं, महलों के कलश यही तो हैं ।”

यह सुनकर पृथ्वीराज स्तम्भित-से सोचते रहे । अब गङ्गा का कगार आ गया । कई मतवाले हाथियों के झुण्ड भूम रहे थे । कहीं गठीले युवक राजकुमार घाँड़े फेर रहे थे । कहीं भीमकाय पहलवान जोर कर रहे थे । कहीं दस-पौँच यार-दोस्त गप्पें लड़ा रहे थे । कहीं वेदपाठी ब्राह्मण स्नान कर ध्यान-मग्न बैठे थे । कहीं धनिक जन स्नानकर रत्न-स्वर्ण दान कर रहे थे । कहीं सिद्ध लोग समाधि में बैठे थे । कहीं औघड़ लोग अनाप-शनाप बक रहे थे । कहीं कवि कवित्त पढ़ रहे थे । कहीं कलकंठी महिलाएँ झुण्ड-की-झुण्ड मिलकर उच्च स्वर से मङ्गल-गीत गा रही थीं । यह देखते-भालते ये अलबेले यात्री बिलकुल नगर के उपकुल पर पहुँच गए । यहाँ सभी ने बाग रोकी । महाराज पृथ्वीराज क्षीरोदक पहन गङ्गा में स्नान और चन्द कवि गंगा की स्तुति करने लगे । उसी समय जयचन्द के महलों की कुछ दासियाँ गङ्गा-जल भरने आईं । उन्हें देख कवि चन्द ने हँसते हुए कहा—“राजन्, ‘गोरस-बेचन, हरि-मिलन, एक पन्थ दो काज ।’ आपके लिये यहाँ मुक्ति-तीर्थ पर भी काम-तीर्थ हाजिर है ।”

उन जड़ाऊ जेवर और रेशमी कपड़े पहने हुए गङ्गा के किनारे

पर आई हुई दासियों को देखकर ऐसा आभास होता था, मानो शिवजी के कामदेव को भस्म करने पर रति देवांगनाओं-सहित गङ्गा से फरियाद करने आई हो ।

भुँकोरकर भुँके से जल भरते समय ऐसा प्रतीत होता था, मानो राहु और चन्द्रमा लड़ रहे हों । स्नान करते समय उन सुन्दरियों के गुलाबी गाल और जड़ाऊ तिलकों की ऐसी शोभा होती थी, जैसे पूनो का चाँद शनैः-शनैः ऊपर को चढ़ रहा हो ।

पृथ्वीराज ने कहा—“राहु और चन्द्र, धनुष और मृग, राज और मृगराज परस्पर शत्रु होते हुए भी यहाँ मित्र-भाव से एकत्र हैं । आश्चर्य है !”

इस पर कवि चन्द्र ने दासियों पर दृष्टिपात करके कहा—“यह जयचन्द्र का प्रताप है । देखिये तां सही, इन चपला पनिहारियों के पैर की उँगलियाँ चम्पा की कली-सी जान पड़ती हैं । उनकी अनङ्गरङ्ग से भरी सुदार, सुकोमल पिडली, जङ्घा और पतली-सी कमर पर नीली साड़ी और उस पर केशरी चूनर, उसके भीतर मनाज की मौज-भरे युगल यौवन देखने वालों का देखते-ही-देखते वेमोल माल लेते हैं । यह देखिये, उस नटखट वाला का ऊँची बाँह करके पानी-भरा घड़ा सँभालते समय आँचल के अन्दर हृदय पर रुकता हुआ मांतियों की माला अजब बहार दिखा रही है, और इधर देखिए, इसके चिकने-चिकने कपोल तो सिंहलद्वीपी मांतियों की आभा का भी मात कर रहे हैं । इस नवाढ़ा ही को देखिए । इसके अर्ध अरुण ओष्ठ, कीर की-सी नासिका, मोती और अनार के-से दाँत कैसे फवते हैं, और इस बाला का किञ्चित लजा से लोचन के कोण को सिकोड़ना और हँस-हँसकर गर्दन मरोड़ना तो और भी गजब ढाता है । लीजिए, इस रसवती के कमल-पुष्प-से उत्फुल्ल मुख पर जड़ाऊ आड़ की बहार ही देखिए ।”

पृथ्वीराज ने हँसकर कहा—“वाह कवि, खूब चूके ! क्या जय-चन्द की दासियों के सिर पर केश हैं ही नहीं । उनका वर्णन उड़ा ही गए ।” चन्द ने कहा—“मुनिए, पृथ्वीनाथ यह नख-शिख-वर्णन है, इन आप्त की पुतलियों की काली-काली वेणी तो स्वर्ण-गम्भे पर चढ़ती हुई नागिन-सी देख पड़ती है, और हे स्वामी, जिन्हें आप सुन्दरी कहते हैं, वे तो दासियाँ हैं, कन्नौज नगर की सुन्दरी महिलाएँ, यहाँ क्या करने आवेंगी ? वे तो सदा सतगण्डे महलों में रहती हैं, कभी पृथ्वी पर पैर भी नहीं देती । उनके सौंदर्य को या तो सूर्य ही देख पाते हैं, या उनके पति ही ।

“महाराज, इस नगर के महाजनों की महिलाएँ ऐसी सुन्दर हैं कि मैं आप से क्या कहूँ । उनके श्याम सटकारे कारे-कारे केशों की अलकें ऐसी प्रतीत होती हैं, जैसे जनमेजय के यज्ञ से भागे हुए सर्पों ने वहीं आश्रय लिया हो, और माँग पर सरती हुई मोतियों की लरें उनके आहार के लिये दूध की-सी धार मालूम होती हैं । ललाट पर जगमगाता जड़ाऊ तिलक चन्द्रमा की गोद में विराजमान रोहिणी के समान शोभा देता है । दोनों भौहें काम के कर की कमानें और नासिका निर्वात दीप शिखा-सी प्रतीत होती हैं । कानों के मणि जटित कुण्डल उदित एवं अस्तंगत सूर्य और चन्द्रमा के समान प्रतीत होते हैं । गुलाब-से गालों पर लटकती मोती की लरें शिव के शीस पर गङ्गा धारा-सी बहती जान पड़ती हैं । कोकनद कुम्भ-से युगल यौवन के नीचे रोम-राजि-सहित उदर की त्रिवली त्रिवेणी की बहार देती है । पीन नितम्ब, पतली कमर, सुदार जंघा, नारंगी-सा रंगदार पिंडुली, केशर के कुमकुम-सी एड़ी, पुष्प पाँखुरी-से मुलायम पैर और उनके दर्पण के समान नखों की द्युति कैसे कही जाय ।”

पृथ्वीराज एक बाला को देखकर बोले—“वाह, कैसी छटा है ! जल भरकर भोंक के साथ घड़े को सिर पर रखते हुए उसका घूँघट

खिसक गया, और आँचल उधर गया। कहो कवि, अब यह क्या करे? देखो-दोनों हाथ घिरे हुए यह मदमाती अत्यंत लज्जित हो रति-रलित हथिनी-सी गर्दन दबाकर चल दी। अरे, मित्र, इनका कुमुदिनी-सा यौवन सूक्ष्म राम राजि और शैवाल से केश कलेजे पर चोट करते हैं। पीले पट को देखकर इन्द्र-धनुष और उनके गोरे बदन को देखकर विद्युत्प्रभा का स्मरण होता है।”

इतना कह पृथ्वीराज स्नान कर सेना-सहित चार कोस पश्चिम को चले गए, और उस दिन वहीं डेरा डाला। उस दिन पछी तिथि थी। डेरे पर पहुँचकर राजा ने ब्राह्मणों को बहुत अन्न, धन, रत्न दान किया, और नित्य नियमानुसार संध्या-वन्दन और शिवार्चन करके भोजन करने बैठे, और फिर विश्राम करके मार्ग की थकान उतारी।

११

भोर के तड़के ही पृथ्वीराज के पड़ाव पर कूच का नगाड़ा बजा और सब कोई कील-काँटे दुरुस्त हो चल खड़े हुए। इस समय सेना के आगे भेप बदले हुए गोइंदराय गहलौत, नरसिंहराय दाहिमा, चन्द्रसेन पुंडीर, सारंगराय सोलंकी, पञ्जनराय कछवाहा, आजानु-बाहु लोहाना, लंगरीराय, लखनसिंह बघेला, कनकराय बड़गूजर और वीरसिंह, इतने सामन्त थे। बीच में पृथ्वीराज और चन्द कवि तथा इनके पीछे व्यूह-बद्ध सेना चल रही थी। कुछ दूर जाकर पृथ्वीराज घोड़े से उतरकर चन्द कवि के घोड़े के साथ-साथ चलने लगे। यह देख कुछ सामन्त कान्ह के पास जाकर

बोले—“नरनाह कान्ह के बिना ही ये सब कौतुक हो रहे हैं। यह भटवा न जाने कहाँ मरवावेगा। अब तो सब झेलनी ही पड़ेगी। यह जवरदस्त जयचन्द का दरवार है, यहाँ से वेदाग निकलना आसान नहीं। इसलिये हे क्षत्रिय-कुल-कमल-दिवाकर, आप अपनी पट्टी खोल डालिए, नहीं तो नगर-वासी मन्देह करेंगे।” यह सुनकर कान्ह ने पट्टी खोल दी, और कहा—“भाइयो, सोचा-विचारी का अब समय नहीं, चलो, आगे बढ़ो।”

नगर का कोट आ गया। वहाँ देवी का एक भव्य मन्दिर था, जिस पर सोने का छत्र और मूर्तियों की झालर लटक रही थी। चन्द ने वहाँ उतरकर देवी की स्तुति-पूजन की, और फिर नगर की दक्षिण प्रदक्षिणा देते हुए नगर में घुस गए।

नगर में घुसते ही देखा, शमामा बाएँ बोल रही है, और भरा हुआ कलश बाएँ जा रहा है। बाईं ओर मगरे पर बैठा कौआ टॉ टॉ कर रहा है। दो बैल भी बाईं ओर लड़ रहे हैं, और दाहिनी ओर लुहार की भट्टी जल रही है। ये सब अपशकुन देख चन्द कवि का खून सूख गया। उसने कहा—“महाराज, लक्षण अच्छे नहीं देख पड़ते। यह लो, बिल्ली बाएँ रास्ता काट गई।” पृथ्वीराज ने हँसकर कहा—“अब जा होनी होगी, सो होगी, सोच काहे का।”

यहाँ राजा जयचन्द का एक भारी उद्यान देख चन्द ने कहा—“महाराज, दाँ घड़ी यहाँ विश्राम करना उचित है। फिर नगर में बैठेंगे।” पृथ्वीराज ने कवि की बात मानकर बाग में थोड़ा विश्राम किया।

अब पृथ्वीराज ने पट्टनपुर-प्रकोष्ठ में प्रवेश किया। कवि ने कहा—“देखिए महाराज, कुर्म का फल ऐसा होता है। ये जो कसे हुए भूले में लटक रहे हैं, अपना सर्वस्व जुए में हार गए हैं।

ये लोग बात-बात में कसमें खाते हैं, सो पक्के जुवारी हैं। और देखिये, नायिकाओं के भड़ुए कौड़ी के तीन-तीन भटक रहे हैं। यह देखिये, अटारियों पर कुछ-कुछ उनीदी-सी, वसन फटकारती, अँगड़ाई लेती, जम्हाती हुई वेश्याएँ अपने-अपने चीर सँभाल रही हैं। कोई-कोई तानपूरा और मारंगी के स्वरों में मन्द-मन्द रागिनी अलाप रही हैं।

“लीजिए, यह पट्टनपुर आ गया। यहाँ सैकड़ों करोड़पति महाजन निवास करते हैं। ये सब भव्य भवन उनके तथा राजा लोगों के हैं। इन महलों से आती हुई चन्दन, केशर, कस्तूरी, धूप की सुगन्ध से सारा वायु-मण्डल सुवासित हो रहा है। यहाँ की सजावट, सफाई और शृंगार देखकर देवता भी मोहित होते हैं। देखिए, कहीं-कहीं गुणी गायक गा रहे और उपङ्ग-वीणा बजा रहे हैं। राजमहलों में अनङ्ग-रङ्ग से भरी गाणिकाएँ कल कण्ठ से मंगल-गीत गा रही हैं। महाराज, ये महल नित्य ही आमोद-प्रमोद और चहल-पहल से भरपूर रहते हैं। देखिए, प्रत्येक प्रासाद पर स्वर्ण-कलश और द्वार पर मोतियों की झालर तथा जड़ाऊ तारण दँधे हैं। स्वर्ण की जगमगाहट से समस्त पट्टनपुर रात-दिन जगमगाता रहता है।

“यह लीजिए, बाजार आ गया। देखिए, तमोली की दूकानों पर छैल-छवीले खड़े पान खा रहे हैं। ये मालिन चम्पा, चमेली, बेला सेवती के कसे लच्छेदार हार पैसा देनेवालों के गले में पहना रही हैं। यह पण्डितगण कथा-वार्ता कर रहे हैं। यह बजाजा आया। कैसे-कैसे बजाज नापने का गज लिए बैठे मोल-तोल कर रहे हैं। यह देखिए, इधर आटा, दाल, धी, मसाला, चना, परचूना के अरम्भ लगे हैं। इधर दूकान पर देखिए, सूती, ऊनी, पश्मीना, दरदोजी, चिकन, जड़ाऊ, लदाऊ मखमली वस्त्रों के अरम्भ लग रहे हैं। ग्राहकों की भीड़ टूटी पड़ती है। अब आप जौहरी-बाजार में आ गए। देखिए,

हीरा, पन्ना, मोती, पुखराज, मानिक, फीरोजा, गोमेद, लह-सुनिया, नाना प्रकार के रत्न-जटित सोने-चाँदी के बहुमूल्य गहने विक रहे हैं। इधर जड़िए डॉक पर नग गव कुन्दन कर रहे हैं, और वहाँ सुनार तार खींच रहे हैं। देखिए, जौहरी किस ठाट से गद्दी लगाए मसनद पर उड़के बैठे हैं। नाना भाँति के गहने कटिया पर जोखकर महाजनों को दे रहे और जमा लेकर सहेज रहे हैं। यह लीजिए, राजमहल का सिंहद्वार आ गया। सावधान रहिए।”

राजमहलों के सिंहद्वार पर नकारखाने में सुबह की नौबत भादों के बदल की भाँति गरज रही थी, और उसी के साथ उच्च स्वर में नफीरी और पपीहा बजकर पृथ्वीराज के दिल को बेहाल कर रहे थे। पृथ्वीराज और कान्ह चौहान शत्रु का वैभव देख ओठ काटकर रह गए। सदर फाटक पार करके पृथ्वीराज ने देखा, महलों में आने-जाने वालों की भीड़ का अन्त नहीं है। हाथियों के घण्टों की घनघनाहट और घोड़ों की हिनहिनाहट पर कान नहीं दिया जाता था। बड़े-बड़े राजपूत राजे मेघवत् श्याम और दीर्घकाय हाथियों पर भीतर-बाहर आ-जा रहे थे। वह दुर्ग ऐसे मार-पेच का बना था कि साधारण अवस्था में उसमें सभी छोटे-बड़े आ-जा सकते थे। पर मौके-मौके पर अच्छे योद्धाओं का भी गुज़र न था। कन्नौजराज के पास अस्सी लाख फौज थी जिसमें से एक लाख बंदूकची, गोलंदाज़ और तुपकची, तीन लाख सवार और एक लाख पैदल ड्योढ़ी पर तथा एक लाख राजपूत दरबार में सदा हाज़िर रहते थे।

पृथ्वीराज की सेना धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। उन्होंने देखा, कहीं बादल की भाँति गरजते हुए योद्धा शस्त्रों के ज़ोर आज़मा रहे हैं। कोई खम ठोककर, खंभे पर उल्टी सीधी कैची लगा रहे हैं। कोई सौ-सौ मन वजनी गोला उछाल-उछालकर कभी कलाई पर कभी भुजदंड पर और कभी सीने पर ले रहा है। कोई वाण-विद्या की

साधना में दत्तचित्त होकर अष्टधाती लोह-खंभ या मोटे-मोटे तवों को बाण से वेध रहा है। कोई पचास मन की जोड़ी हिला रहा है। कोई बड़े-बड़े वृक्षों से जोर कर सीना सहजोर कर रहा है।

यह पौरुष देखकर पृथ्वीराज का दिल दहल गया। उन्होंने कहा—“चन्द, यह देखो, यह क्या कौतुक है। इन योद्धाओं के नेत्रों से सिंह-सा विक्रम प्रकट होता है। इनके भुज-दंड साक्षात् हाथी के शृङ्ग के समान हैं। जयचन्द की अस्सी लाख अनी का जी तो मेरे जान यही दस हजार योद्धा हैं।”

कवि चन्द ने कहा—“पृथ्वीनाथ, जयचन्द का बल बड़ा प्रबल है, पर अब सोच करने से क्या? यहाँ पृथ्वी के सभी देशों के योद्धा एकत्र हैं।” यह सुनकर सामंतों ने उच्चकर कहा—“तब देखा जायगा कि जयचन्द की फौज कैसी है।”

चन्द ने कहा—“हे सामंतकुमारो, जान-बूझकर आग में हाथ मत डालो। आटे में नमक के समान भी तो नहीं हो? इस समय द्वार पर तीन लाख योद्धा सन्नद्ध हैं, समय पाकर श्रोतृष्ण जरासंध के सम्मुख से भाग गए थे। पांडवों के सामने द्रौपदी का चीर खींचा गया था, पर अवसर देख सभी चुप रहे। सावधान रहो, यह शान दिखाने का समय नहीं। चुपचाप काम साधो।”

इतने ही में सिंह-दरवार आ गया। वहाँ हेजमकुमार रघुवंशी द्वारपालों का सरदार अपने अर्धानों के साथ सोने की छड़ी लिए बड़े टाट से बैठा था। जो राजा रईस महाजन दरवार में जाने की इच्छा करते, उन्हें ये लांग आदर से आसन देते और फिर इत्तिला करके भीतर ले जाते थे।

कविचन्द को इस टाट से आते देख उसने निकट आकर नम्रता-पूर्वक प्रणाम करके पूछा—“आप श्रीमानों का कहाँ से आगमन हुआ है, कहाजाइए गा, यहाँ किस अभिप्राय से आए हैं?”

यह सुनकर कविचन्द ने कहा—“मैं शूर-शिरोमणि दिल्ली-पति पृथ्वीराज चौहान के दरबार का राजकवि हूँ। मेरा नाम कविचन्द है।”

यह सुनकर उसने कहा—“सत्य है, मंगन को किसी से क्या राग-द्वेष है। महाराजाधिराज कन्नौज पति धन्य हैं, जिनके वचन-मात्र से दुनिया का दरिद्र दूर होता है, और जिनके प्रधान सबसे दंड लेते हैं। ऐसा जोरावर राजा न हुआ, न होगा। जिसकी आज हिन्दू-मुसलमान दोनों आन मानते हैं।”

कवि चन्द ने हँसकर कहा—“यह तो समय ही पर मालूम हांगा कि कौन कैसा सहजोग है।”

द्वारपाल के प्रधान ने कवि की इस बात पर कान नहीं दिया। उसने उसे आदर-पूर्वक आसन दिया, और कहा—“मैं अभी आपकी खबर निवेदन करने जाता हूँ, पर ऐसा तो नहीं है कि आप राजसूय-यज्ञ देखने और यहाँ का भेद लेने को दिल्ली से आए हुए बसीठ हों।” कवि चन्द ने कहा—“कवि लोग बसीठी नहीं करते। यद्यपि हम मँगते हैं, परन्तु पृथ्वीराज के दान से तृप्त हैं। हमें किसी से भी धन की लालसा नहीं है। हम तो सब राजों के दरबार देखते आते हैं।” हेजमकुमार ने कहा—“हाँ, आप मंगन हैं पर आपके साथी ऐसे नहीं प्रतीत होते।” इस पर कवि ने मुस्किरा दिया, तब हेजम-कुमार सूचना देने भीतर चला गया। वह सिंहासन के निकट जा, नीची गर्दन किए हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। जयचन्द ने जब उसकी ओर देखा, तो उसने सिर झुकाकर बड़ी नम्रता से प्रणाम कर कहा—“महाराज, दिल्ली के दरबार का राजकवि कवि चन्द बरदाइ श्रीमान् के दर्शन की अभिलाषा से आया है। वह अच्छा कवि जान पड़ता है। उसकी बात बात में रस भरा है, उसकी वाणी समुद्र के समान है, जिसमें उक्ति रूपी अपार तरंगें उठती हैं, पर जो युक्ति की सीमा से पार नहीं जाती। वह पुरुष जैसा गुणी है, वैसा ही ठाटदार भी प्रतीत

होता है। अस्तु, मैं ज्योदियों पर रोककर श्रीमान् के चरणों में सूचना देने आया हूँ, जैसी आज्ञा हो।”

जयचन्द ने कुछ सोचकर दसौधी को बुलाकर कहा—“तुम कवि चंद से जाकर मिलो, और देखो, यदि दरवार में लाने योग्य हों। तो यहाँ लाओ, नहीं तो वहीं का वहीं बिदा कर दो। कवि चार प्रकार के होते हैं, ब्राह्मण, ब्रह्मचारी, मुनि और ठग, इनमें प्रथम के तीन तो कवियों के भेद हैं, परन्तु चौथे वे हैं, जिन्हें काला अक्षर मैंस बराबर है, और जो काव्य, कला, ज्ञान, विज्ञान, अर्थ, अनर्थ, सरस, नीरस आदि कुछ नहीं जानते। इधर-उधर से चार छन्द सीख लिए और कवि बन गए। यदि वह भी ऐसा ही है, तो कुछ दे-दिलाकर दूर करो, पर यदि लड़ो भापा, नवो रस, ज्ञान-विज्ञान और सांगोपाग काव्य का जाननेवाला कोई विद्वान् और बुद्धिमान् कवि है, तो खुशी से मेरे पास लाओ।”

राजा की यह आज्ञा पाते ही दसौधी और कन्नौज के कवि चन्द कवि के पास आए। प्रश्नोत्तर प्रारम्भ हुए। कुछ देर बाद दसौधी ने कहा—“हमारे महाराज को श्रीधर का इष्ट है। कुछ इस विषय पर कहिए।” कवि ने कहा—“श्रीमानों में श्रेष्ठ श्रीवर श्री जिनके हाथों में रहती है, वह साक्षात् श्रीपति वसुधा का भार उतारनेवाले, द्रौपदी की चौर बढ़ाने-वाले, विमल विट्ठल भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र सदैव ध्यान करने योग्य हैं। जिसने महाभारत में अठारह अक्षौहिणी सेना का विध्वंस किया, और अर्जुन के गर्व करने पर विराट् रूप दिखाया, वही सब सृष्टि का कर्ता-धर्ता है, वह स्वयं प्रकृति-पुरुष है, और जगत् की जञ्जाल-माया उसे नहीं व्यापती है। उसी के मुख से छः भाषा और नव रसों का उद्गम हुआ है।”

कवि का यह वक्तव्य सुनकर कन्नौज के राजकवि और दसौधी बहुत प्रसन्न हुए, और कवि को उच्च आसन देकर कुशल-मंगल पूछा

और कहा—“आप पृथ्वीराज को छोड़कर क्यों चले आए?” इस पर कवि चन्द ने कहा—“इसको आप क्या पूछते हैं। पृथ्वीतल पर विचरना और सजन-दुर्जन की परख करना हमारा व्यवसाय है। जिन पंगराज को देखकर इन्द्र का गर्व गिरता है, और जिन्हें एक दिल्ली-पति को छोड़ सब नवते हैं, मैं दिल्ली से उनका दरबार देखने आया हूँ।”

छसौधी ने कहा—“यह सच है, पर आप महाराज जयचन्द को किम प्रकार प्रसन्न कर सकते हैं। क्या आप अष्टष्ट वर्णन भी कर सकते हैं?” इस पर चन्द कवि कुछ सोचने चला, तब दसौधी ने कहा—“हे बरदाई, यदि आप सच्च कवि हैं, तो पंगराज की सभा का तो अष्टष्ट वर्णन कीजिए।” चन्द बरदाई ने कहा—“मुनिए, मैं सभा का वर्णन छन्दोबद्ध करता हूँ। आप काव्य-प्रणाली पर ध्यान दीजिए।” यह सुनकर और भी दस-पाँच पण्डित जुट गए और कहने लगे—“भाई, देखा-मुना तो सब वर्णन करते हैं, पर अष्टष्ट प्रबन्ध पर आशु छन्द कहना कठिन काम है।”

कवि ने कहना प्रारम्भ किया—“कन्नौजराज बहुमूल्य गंगा-जमनी सिंहासन पर विराजमान हैं, उनके सिर पर जाज्वल्यमान स्वर्ण-मुकुट है। उनके पार्श्व में देश-देश के राजा सुशोभित हैं, जिनके ऊपर श्वेत रजत-छत्र छहरा रहा है। सिंहासन के सम्मुख विद्वानों और कवियों का आसन है। उनके पीछे नर्तक और गायकगण बैठे हैं। राजा के पीछे चाँदी की डोंड़ का छत्ता लिए खवास खड़ा है। अगल-बगल दो खवास चँवर डुला रहे हैं। दाहनी ओर मुर्छलवाला है, उसके पीछे अन्यान्य परिकर और खास ज्यौढ़ीदार हैं। अद्वितीय तेजस्वी महाराज का मुख-मण्डल प्रभात के सूर्य के समान दीप्त हो रहा है। बड़े-बड़े शर-वीर क्षत्रिय उनके गले का हार हो रहे हैं। केवल एक पृथ्वी-राज ही उनके गले में गरल के समान अटक रहे हैं। महाराज के

हाथ में एक नीली चोंचवाला लाल रंग का तोता भी है। उसके पंखों पर बिजली-से उज्ज्वल दो पङ्क्त हैं। जो बात पंगराज के मुख से निकलती है, वह तोता कहता है। वह सुग्गा इस समय ककड़ी खा रहा है। राजा के बगल में एक बाज बैठा है, और राजा तथा रईसों को छोड़कर दरबार में एक सहस्र शङ्ख-ध्वनियों हैं।”

यह वर्णन सुनकर सब दंग रह गए। दसौधी ने आश्चर्य-चकित होकर कहा—“यह तो हुआ, अब आप दरबार में उपस्थित सब योद्धाओं के नाम भी तो सुना जाइए।” कवि चन्द ने सब दरबारियों के नाम कह सुनाए।

राजकवि और दसौधी ने जाकर राजा से निवेदन किया—“महाराज चन्द बरदाई अद्वितीय विद्वान् और चतुर पुरुष है। वह लुहो भापा, नवो रस, काव्य और अन्य सब प्रकरणों में सांगोपांग दक्ष है। वह त्रिकालदर्शी कवि दृष्ट-अदृष्ट सब कुछ वर्णन कर सकता है।”

यह सुनकर राजा ने प्रतिहारी को उसे दरबार में बुला लाने की आज्ञा दी।

१३

आगे-आगे कवि चन्द और पीछे खवास के भेष में पृथ्वीराज ने संभा-भवन में प्रवेश किया। जब कवि चन्द मजपौरिया में पहुँचे, तब वहाँ तनिक ठहरे, और हेजमकुमार महाराज की आज्ञा लेने आगे को बढ़े। चन्द ने देखा, पूर्व दिशा में उदित सूर्य के समान

जयचन्द अपने सब मुसाहिबों-सहित मुमेरु-से अचल बैठे हैं। उनके शीस पर मुक्ता-मणि-जटित छत्र ऐसा शोभायमान है, जैसा शरद्-चन्द का प्रतिबिम्ब, मानो हिमाचल ने जयचन्द की कीर्ति का सहायक हो उनकी छाया करने को छत्र-स्वरूप धारण किया हो।

महाराज का संकेत पाकर चन्द कवि अपने तेजस्वी खवास के सहित आगे बढ़ा। उसने सिंहासन के सम्मुख जा दोनों हाथ उठाकर उच्च स्वर से कहा—

“जैसे सब ग्रहों में सूर्य और चंद्रमा, रत्नों में लाल, देवताओं में नारायण, विषयी जनों में कामदेव, सब गुणों में शील और इंद्रियों में चित्त श्रेष्ठ है, उसी प्रकार पृथ्वी पर के भूपतियों में श्रेष्ठ महाराज दल पंगुरे को कवि चन्द आशीर्वाद देता है।”

इसके बाद कुछ आगे बढ़कर उसने कहा—“इस दरवार में विराजमान अन्यान्य राजा लोग मंगल, बुध, गुरु, शुक, शनि आदि ग्रहों के मंडल एवं दिग्पाल से-मुशोभित होते हैं, और उनके मध्य विराजमान महाराज जयचन्द दिग्पालों के स्वामी के समान प्रतीत होते हैं। इस राजसीय ठाट के सामने इंद्र को भी चकित होना पड़े। धन्य हैं। इस सभा-मंडल में विराजमान पंगराज का देखकर ऐसा भान होता है, मानो विधाता ने मर्त्यलोक के लिए दूसरा इंद्र सिरजा हा। यहाँ बिछे हुए गिलम-गलीचों की आभा बरसात के बहुरंग बहलानों को मात करती है। ये रेशमी और ऊनी रोएँ जो सुनहरी तारपटी से गुँथे हैं, ऐसे प्रतीत होते हैं, मानो पृथ्वी सूर्य की किरणों के साथ चल रही हो। बीच में जड़ी नीलम और माणिक की नन्हीं-नन्हीं चुन्नी ऐसी भली प्रतीत होती हैं, मानो समुद्र में रकम-रकम की मछली तैर रही हों। महाराज के वाजुओं पर दुरते हुए चक्कर ऐसे प्रतीत होते हैं मानो सूर्य की प्रखरता देख चन्द्रमा ने आन की हो, और शीस पर जड़ाऊ छत्र तो ऐसा मुशोभित होता है, मानो नवग्रह

परस्पर विरोध भाव छोड़कर महाराज की छाया के लिए छत्राकार हो गए हों, और करोड़ों काम की कलाओं के समान महाराज की छवि तो मैं असमर्थ कवि क्या कहूँ।”

कवि की यह वाक्चातुरी और प्रशंसा मुनकर जयचन्द प्रसन्न हो गए। दरबारीगण भी वाह-वाह कह उठे। राजा ने उसे उचित आसन पर बैठने की आज्ञा दी और कहा—“हे कविवर, मैं तुम से पृथ्वीराज के विषय में कुछ पूछना चाहता हूँ। क्या तुम सत्य-सत्य उत्तर दोगे?”

कवि चन्द ने कहा—“जिनके अचल दल-बल के आतंक से फणीश सटपटाता है, और कमठ की खोपड़ी खड़-खड़-सी करती है, जिनके दल के चलने से आकाश में आच्छादित धूल के कारण सूर्य प्रच्छन्न हो जाते हैं, और जिनके द्वारे से दसो दिग्पाल वायु बाधित दीप शिखा-डगमगाते हैं, उन नर-श्रेष्ठ जयचन्द के सम्मुख किसकी सामर्थ्य है, जो झूठ कहे।”

इसके बाद फिर कवि कहता गया—

“जिन्होंने अपने आसन के आस पास सर्वांग सन्नाह से सुसज्जित ठट-के-ठट शूर-वीरों के बल पृथ्वी और धर्म के बल से दसों दिशाओं के दिग्पालों को जीत लिया है, जिन्होंने शाह-सहित अन्य सभी राजों को श्री-हीन करके सब पर अपना आतंक जमा रक्खा है, जिन्होंने तिरहुत में अपना थाना बैठा दिया, सेतुबन्ध तक समस्त दक्षिण अपने वश में कर लिया, कण दादल को दो बार बाँधा, सिद्ध चालुक्य को कई बार परास्त किया, तिलङ्गाना और गोलकुण्डा पर अपना निसान रोप दिया, गुण्डजीरा को बाँधकर छोड़ दिया, वैरागर को ले लिया, और शाह जिनका मित्र होकर अपने भाई निसुरत्त को जिनके दरबार में रखता है, ऐसे विजयपाल के पुत्र जयचन्द के प्रकोप से सारा जहान थरथर काँपता है, पर केवल पृथ्वीराज ही एक ऐसे हैं जो जयचन्द को भी कुछ नहीं समझते।”

कवि के मुख से ऐसी चतुराई से शत्रु की प्रशंसा सुनकर जयचन्द क्रोध से लाल हो गए। उन्होंने छूटते ही कहा—“भला, जिसे ईश्वर ने ही मँगता बनाया है, उसका दरिद्र जाय, तो क्योंकर जाय ? राजा और धनी तो सदैव ही दान द्वारा धन-रत्न की वर्षा करते हैं पर जिसके सिर पर दरिद्र का लज्ज है, उस पर एक बूँद भी नहीं पड़ती।” फिर कवि पर व्यङ्ग्य करके राजा ने कहा—“मुँह का दरिद्री, कुशतन बरह जङ्गल राव (भिल्ल) की शरण में रहकर भी दुबला क्यों है* ?”

कवि चन्द ने कहा—“उन जंगली राव पृथ्वीराज ने घोड़े पर सवार होकर दूर-दूर के देशों में अपनी दुहाई फेर दी है। निबल तो उनके आश्रित हुए हैं, पर जो अपने का सबल समझते थे, वे भी काँप गए। उनमें से बहुतेरे वृद्धों में मूड़ डालकर रह गए। बहुतेरे दाँत में तिनका दबाकर उनके आगे आए हैं, इसलिए पृथ्वी-राज के शत्रुओं ने सब घास उजाड़ दी है, अब बरह क्या खाकर पुष्ट हो।”

जयचन्द ने कहा—“मोती न पाने से न्याय-सम्पन्न हंस दुबला हो जाता है, गजराज की गर्दन का रक्त न पाकर सिंह दुबला होता है, नाद के कारण बंधन में पड़ा हुआ मृग दुबला होता है, छैला लीग मन की मौज न पाने से दुबले होते हैं, और स्त्री अपने पति के बिना दुबली होती है, पर बरह के दुबले के होने का इस समय क्या कारण है। देखो न, आपाढ़ का महीना है, जिसमें सूखी घास और भूसा खाने को मिले, न रात-दिन जुताई पड़ती हो, न रातदिन पुरवट

*मुँह दरिद्र अरु तुच्छ तन, जङ्गलराव सुहद,

बन उजार पथुवन चरत, क्यों दूवरो बरह ?

यह दोहा द्वयर्थक है, बरह का अर्थ वरदाई और बैल दोनों है।

(चरखी) खींचनी पड़े, न किसी गँवार से पाला पड़ा है कि वह मन-माना बोझा लादकर नाथ खींचता हो, और ऊपर से डंडे जमाता हो, न रहँट में चलाया जाता है, न रथ में जोतकर अरई लगाई जाती है, तब कहो, बरद दुबला क्यों है ?”

यह सुनकर कवि चन्द झूट बोला—“महाराज, जिसके स्वामी के यहाँ सहस्रों हाथी-घोड़े उपस्थित हों, वह क्यों रथ में कंधा दे, क्यों पुरवट खींचे, क्यों रहँट में जुते, क्यों पीठ पर भार ढावे। असल बात तो यह है कि पृथ्वीराज के शत्रुओं के मन पर सदा शोक की घटा छाई रहती है, वे लोग सब खर खा लेते हैं, इसी से बरद दुबला है। देखिए, पहले नागौर में शहाबुद्दीन बाँधा गया, फिर साभंती में भीमदेव सौलंकी परास्त किया गया, फिर मेवाती मुगलों का मुँह मोड़ा गया। वस, इन सब पराजित शत्रुओं ने दाँत में तिनके दाब-दाबकर सब घास चौपट कर दी, अब बरद दुबला न हो, तो क्या हो।”

कवि चन्द के ये वाक्य सुनते ही राजा जयचन्द के मिर से पैर तक आग लग गई। ललाट में तल पड़ गए, भौहें चढ़ गईं, आँखें ईगुर-सी हो गईं, होठ फड़कने लगे। उन्होंने दाँत पीसते और छाती पर हाथ रखते हुए सिंह की भाँति कवि चन्द की ओर देखकर कहा—“हाँ पृथ्वीराज यदि सम्मुख हो, तो बताऊँ।” जयचन्द की यह दशा देख सभा-चतुर कवि चन्द बात का रुख फेरकर बोला—

“त्रिलोकीनाथ शिव बरद पर सवार हैं, उनके गले में सर्पों का हार है, सर्प के सिर पर पृथ्वी है, जिस पर सातों समुद्र और सुमेरु स्थिर है, सप्तपुरी और ब्रह्म पुरुष भी उसी पृथ्वी पर स्थित हैं, अतः मेरे अहोभाग्य हैं कि महाराज दलपंगर ने मुझे बरद (बैल) की उपाधि प्रदान की है।”

यह मुनते ही जयचन्द का गुस्सा उतर गया। उन्होंने कहा—
 “वाह कवि, बहुत अच्छे, क्या कहूँ, पृथ्वीराज मुझ से नहीं मिलते।
 उनके पिता मेरे पिता के मामा होते थे। उन दोनों में पटती भी
 खूब थी। जब सोमेश्वर जी का दिल्ली में ब्याह हुआ, तब उन्होंने
 बहुत धन रत्न दिया था। तब से फिर अब तक कुछ नहीं दिया-लिया।
 तुम जानते हो, ज्यों-ज्यों दिन बीतते हैं, त्यों-त्यों दान का ऋण बढ़ता
 है, सो हम और कुछ नहीं चाहते, जैसे और सब राजा लोग इस
 दरबार में आते हैं, वैसे वह भी आवें, उनका घर है।”

कवि चन्द ने कहा—“आपकी जो आज्ञा है, वह ठीक है, पर वह
 भी जो बनता है, करते ही जाते हैं। जब आप दक्षिण-देश को
 विजय करने गए थे, तो कन्नौज की गद्दी को सूना जानकर गजनी का
 बादशाह चढ़ आया था, पर सामन्तों के स्वामी संभरीनाथ ने उसे
 इस तरफ बढ़ने भी नहीं दिया, और मार कर उलटा भगा दिया, और
 उसके आठ हजार योद्धा काट गिराए। हाँ, यह बात है कि चौहान
 आपके दरबार में कभी नहीं आए हैं। आपके पूर्वज रघुवंशराय ने जब
 यज्ञ किया था, तब भी मानिकराव जी नहीं आए थे। अब आपके यज्ञ
 में पृथ्वीराज आवें तो क्याकर आवें।”

इस पर राजा जयचन्द ने हँसकर कहा—“भला, उन पृथ्वीराज
 के पास ऐसी कितनी सेना है, और उसमें कितने शूरमा हैं जिनका
 तू ऐसा बखान करता है।” कवि चन्द ने कहा—“महाराज, मैं उन
 प्रतापी दिल्लीपति के दल-बल का क्या बखान करूँ कि उनके परिकर
 में कितने शूरमा, कितने छत्रधारी, कैसे बलवान और पराक्रमी हैं।
 बस, यह समझ लीजिए कि पृथ्वीराज के दृष्टिपात के साथ ही शत्रु का
 नाश हो जाता है। महाराज, उनके शूरमाओं का शौर्य जग-जाहिर है।
 वह जब हाथी पर तलवार का हाथ मारते हैं, तब हाथी ककड़ी की
 भाँति कटकर दो हो जाता है। वह हाथी के खीसे हाथों से मूली की

भाँति उखाड़ लेते हैं। जब तक कोई हाथ उठावे, तब तक तो वह पचास वीरों को काट फेंकते हैं। क्या कहूँ महाराज पृथ्वीराज-जैसा पृथ्वी पर दूसरा वीर नहीं। अब उपमा दूँ, तो किसकी दूँ।”

जयचन्द ने कहा—“यह इतने मुकुटचन्द राजा बैठे हैं इनमें से किसी की सिन्धी पृथ्वीराज से मिलती हो तो कहो।” कवि चन्द ने कहा—“वत्तीस लक्षण संयुक्त, छत्तीस वर्ष की वयवाले वह महाप्रतापी राजों पर राहु होकर लगते हैं। कोई उन्हें पृथ्वी देते हैं, तो कोई धन देते हैं। कोई उनकी सेवा में तन-मन देते हैं, तो कोई इधर-उधर भाग निकलते हैं, कोई छॉह भी नहीं दबाते। महाराज, वह पृथ्वीराज इस उनहार के हैं।”

यह कहकर आवेश में आकर चन्द ने हाथ उठाया। चन्द के पीछे पृथ्वीराज खवास के वेश में पानदान लिए खड़े थे।

चन्द के भाव, आवेश और वचनों से राजा जयचन्द झुलस गए। उनके नाक, कान, मुँह और गाल लाल हो गए। उन्होंने चबड़ी बाँधकर गदोरी मीजते हुए कहा—“ऐसा राजपूत-बेटा कौन है? अरे कवि, बहुत जवान न चला, नहीं तो यहाँ खड़ा खुदवाकर गड़वा दूँगा।”

जयचन्द को इस तरह गुस्से में देखकर पृथ्वीराज का शरीर भी गुस्से से भर गया। बहुत दवाने पर भी उनकी आँखों की रंगत बदल गई। भला, एक मौँद में दो सिंह और एक हथिनी के साथ दो हाथी रह सकते हैं। यह रंग-ढंग देख जयचन्द को कुछ संदेह हुआ, पर उन्होंने बात टाल कर कहा—“कवि चन्द तुमने पृथ्वीराज की सुकीर्ति तो खूब बखानी, अब कोई अच्छे-अच्छे कवित्त कहो।”

यह कहकर वह गंभीर-हृदय राजा विचारने लगे कि ऐसे प्रतापी राजा पृथ्वीराज कवि चन्द की छुगर लेकर मेरे दरबार में क्यों आने लगे। उन्होंने मन का भाव दबाकर कहा—“कवि चन्द, देखो,

कहा-सुनी में वृथा बात बढ़ जाती है। यदि पृथ्वीराज मेरे सामने आवें, तो उसी समय हम दोनों का फैसला हो जाय, पर न-जाने वह क्यों नहीं मुझसे मिलते।”

तब कवि चन्द बोला—“महाराज पृथ्वीराज कोई ऐसे-वैसे पुरुष नहीं, बड़े नीतिज्ञ हैं। जैसे आपको अपनी बात की आन है, वैसे ही उन्हें भी। पृथ्वीराज अनंगपाल के सगे दौहित्र हैं। जब उन्होंने अपने हाथों तिलक काढ़ दिल्ली का राज्य दे दिया, तब इसमें किसी का क्या ?”

जयचन्द ने कहा—“मुनो भाई, मैं दिल्ली के राज्य पर से ही नहीं चिढ़ा हुआ हूँ, ऐसा होता, तो जब अनंगपाल शहाबुद्दीन की सहायता लेकर दिल्ली पर चढ़े थे, तब मुसलमानी मोर्चा मारकर पृथ्वीराज का पक्ष न लेता। मुझे तो इस बात पर गुस्सा है कि उन्होंने बैठे-ठाते मेरा यज्ञ बिगाड़ा। फिर भी मैंने हिन्दू जानकर बचा दिया, वरना दिखा देता।”

यह सुनकर कवि चन्द ने कहा—“महाराज, भला ऐसा कौन है कि जान-बूझकर शत्रु को बचा जाय। जब कोई चारा न चला, तो कहने लगे बचा दिया। कहावत भी है—“नामर्दी तो खुदा ने दी, पर मार-मार तो किए ही जा।”

कवि के ये वचन सुनकर जयचन्द अनायास ही हँस दिए। उन्होंने कहा—“कवि, तुम बड़े मुँहफट, साहसी और चतुर हो। तुमने सब दरबार देखे हैं, कहो राजा की सर्व श्रेष्ठ नीति क्या है ?”

कवि ने कहा—“धर्मावतार, यह भी तो बताइए कि इस कलिकाल में कहीं राजसूय-यज्ञ हुआ है ? सतभुग में राजा कवल ने यज्ञ किया था, सो इतनी लुटाई हुई कि स्वर्ण का दान लेते-लेते ब्राह्मणों के हाथ थक गए। फिर राजा भरत ने यज्ञ किया, जिनका दान पाकर मँगलों ने जो फेंका, उस सोने का पहाड़ लग गया। इसके बाद

राजा नल ने यज्ञ किया, जिन्होंने इतना शाकल्य होम किया कि अग्नि उसे भस्म न कर सकी।”

यह सुनकर जयचन्द ने कहा—“किसी की हिंस करने से क्या, जिसकी जितनी श्रद्धा हांती है, वह उतना करता है। अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार सभी अपनी सुकीर्ति स्थापित करते हैं।”

कवि ने कहा—“महाराज, यही तो बात है, जो पृथ्वीराज के गले पड़ गई। यह काम मंत्री का है कि दोनों व्रत पाले, अर्थात् स्वामी का रस पीले, और जो काम उचित हो, वही हो। देखिए, यह राजनीति न जानने ही का कारण है कि पृथ्वीराज की स्वर्ण प्रतिमा स्थापित की गई, सो जैसा बोया, वैसा काटिए।”

यह सुनते ही जयचन्द क्रोध से थर-थर काँपने लगे। वह सांचने लगे, बड़े विकट कलहंतर कवि से काम पड़ा है।

परंतु समय जानकर जयचन्द ने क्रोध को पीकर कहा—“हे कवि तुम्हारे लिये जो दासियाँ रनिवास से पान ला रही हैं, उनका भी तो कुछ वर्णन करो।”

कवि चन्द ने कहा—“जहाँ परिंदा भी पर नहीं मार सकता, वहाँ का हाल मैं कैसे कह सकता हूँ। पर हाँ, जो मरजी हुई है, तो थोड़ा कहता हूँ, सुनिए। वे सब षोडशवर्षीया दासियाँ ऐसी सुन्दर हैं, जैसी मुरपति की रानी शची की सहचरी हों। पूनो के चौद के समान उनकी उज्ज्वल एड़ियाँ हैं। नखों से दर्पण की आभा निकलती है। नूपुर और पायजेब का छन-छन शब्द क्या होता है, मानो हंस के बच्चे कल्लोल करते हों, उनकी ताल-वृत्त को पीड़-से सुदार जंघाएँ मदन-दल-से नितम्ब अजब काट-छाँट के बने हैं। उनकी मुट्ठी-भर पतली कमर देखकर यह उपमा याद आती है कि जैसे धर्म ने काम और लोभ को कपटकर उन पर अपनी ध्वजा जमाई हो। उनके सीने पर

नारंगी-से यौवन उठ आये हैं, जिनके भार से उनकी पतली कमर तीन-तीन बल खाती है ।

“उनके कंबु-कंठ में जड़ाऊ चौकी और पोत का छूटा ऐसा शोभित है, मानो राहु और चन्द्र परस्पर मिल गए हों । उनके चिकने कपोल, कुन्दकली-सी दन्त-पक्ति गजब करती है, उनके मधुर बोल तो कोकिल के कंठ को मोल लेते हैं । महाराज, कहाँ तक मैं वर्णन करूँ ।”

कवि यह कह ही रहा था कि कर्नाटकी दासी पाँच-सात सहेलियों-सहित पानों का रत्न जटित थाल लिए आ पहुँची । ज्यों ही उसने पृथ्वीराज को देखा कि झट से सिर पर घूँघट काढ़ लिया । यह देख सारी सभा में सन्नाटा छा गया, क्योंकि यह प्रसिद्ध था कि यह दासी संसार में पृथ्वीराज ही को मर्द समझ कर उनसे पर्दा करती है, अन्य से नहीं । जयचन्द समझ गए कि यहाँ पृथ्वीराज अवश्य है । उन्होंने तीखी निगाह से खवास का देखा । सभा में कानाफूँसी होने लगी । लोग कहने लगे, यही खवास पृथ्वीराज है । दीवान रथसिंह और कडियाराय तो जोर से चिल्ला उठे कि ले लो, शत्रु घर में आकर बचने न पाए ।

जयचन्द ने रोककर कहा—“ठहरो, जल्दी न करो, देखो, जाता कहाँ है । इतने में कवि चन्द ने इशारे से दासी को समझाया कि क्या यहाँ राजा को फँसावेगी ।” कवि का संकेत समझ दासी ने खट-से घूँघट उधार दिया । यह देख जयचन्द और सब सभासद् भौचके-से रह गए । उस समय सभा में नवरस का उदय हुआ । नटखट दासी के घूँघट-उलट-पलट से जयचन्द अद्भुत रस में, पृथ्वीराज इस खेल को देखकर हास्य रस में, दासी करुण-रस में, कवि रौद्र रस में, समासद् बीभत्स रस में, सामन्त वीर रस में और अखण्ड शैव सामन्त लङ्करी-राय शान्त रस में एवं झरोखे से झोकती हुई महिलायें शृंगार रस में ओतप्रोत हो गई ।

इतने में दासी ने राजा के सम्मुख लाकर पान का थाल धरा । राजा ने उससे घूँघट काढ़ने और हटाने का कारण पूछा । नटखट दासी ने कहा—“महाराज, कवि चन्द पृथ्वीराज के अन्तरङ्ग सखा हैं । यह मेरे देवर हुए, इसलिए इनसे आधी लज्जा मैंने की ।”

यह सुन राजा चुप हो गए । उन्होंने सादर कवि चन्द को पान दिया और कहा—“हे कवि, तुम सङ्कोच न करना, मैं कल तुम्हें जाँ मँगाऊँ, दूँगा ।”

यह कहकर राजा ने रावण नामक सरदार को कवि चन्द के आतिथ्य-सत्कार और जनवासे आदि के प्रबन्ध की आज्ञा दी । रावण आज्ञा पा अपने एक हजार सिपाहियों-सहित कवि चन्द के साथ हाँ लिया । कवि भी राजा को स्वस्ति वचन कह उठ खड़ा हुआ ।

१४

जो जनवासा कवि चन्द के टहरने को दिया गया, वह ऐसे ठाट से सजा हुआ था, जिसे देख आँखों में चक्राचौंध लगती थी । प्रत्येक शिखर पर कुंदन किए कलश लगे थे, फर्श पर नाना प्रकार के गिलम-गलीचे बिछे और तकिए सजे थे । जाँ पलंग वहाँ पड़े थे, उनकी पाटी और पायों पर सच्चे जवाहरात जड़े थे, और उन पर रेशमी सेजबन्दी हुई थी, जिस पर मखमली गद्दे बिछे थे । यह सब कुछ था, पर बाहर चौकस चौकी बैठी थी कि कहीं से चींटी भी चली जाना चाहे, तो कठिन था ।

इधर तो पृथ्वीराज गद्दी पर बैठ सामन्तों से जो कुछ देखा-सुना उस पर विचार करने लगे । उधर राजा जयचन्द ने मन्त्री सुमन्त, सेना-

नायक मुकुन्द परिहार और पुरोहित श्रीकण्ठ को बुलाकर कहा—“तुम लोग कवि चन्द के डेरे पर मिजवानी ले जाओ। उसके खान-पान और रहन-सहन का ऐसा उत्तम प्रबन्ध करो कि उसे किसी भौंति अप्रसन्न होने का अवसर न मिले।”

राजा की आज्ञा से तीनों व्यक्ति भौंति-भौंति के व्यञ्जन, पकवान और पान-सुपारी, लौंग-इलायची वगैरह लेकर कवि चन्द के डेरे पर गए। द्वार पर पहुँचते ही दरवान ने उन्हें रोका, और भीतर इत्तिला की और फिर ले गया। वहाँ जा उन्होंने मिजवानी रखी। शिष्टाचार की दो-चार बातें कहीं, पर वहाँ का ठाठ देखकर उनके पैरों की मिट्टी निगल गई। वे वहाँ से उलटे पैर राजा के पास जाकर बोले—“महाराज, कवि तो खैर है सो है ही, परन्तु उसका खवास कोई विलक्षण पुरुष है। उसके डेरे में जो पुरुष, नौकर-चाकर आदि हैं, उनके ठाट और राहु को-सी छुटा देखकर दिल दहलता है। सब एक-से-एक बढ़कर तेजस्वी और पुरुषार्थी पुरुष हैं।”

जयचन्द यह सुनकर चुप हो गए। उन्हें निश्चय हो गया, इनमें पृथ्वीराज है, फिर है।

उधर रानी जाह्नवी ने जब सुना कि दिल्ली का राजकवि आया है, तो गुनमञ्जरी, गुनबेली, मदनावती, गुनकलिया, मालती, लीलावती, कलावती आदि सहचरियों को बुलाकर कहा—“तुम लोग मेरी तरफ से कवि चन्द के डेरे पर कलेऊ, भोजन और प्रसाद की सामग्री ले जाओ। और सब लोग तो मिठाई, पकवान आदि का उचित प्रबन्ध करो, और एक जने जाकर राजा से कहो कि तुम लोगों के साथ जाने के लिए सिपाहियों का प्रबन्ध करें।”

राजा के स्वर्ण-खचित, रत्न-जटित सुविस्तीर्ण रनिवास में काम की कलाएँ-जैसी अनेक नव-यौवना महिलाएँ थीं, जो सब चित्रिणी, पद्मिनी-जाति की एक-से-एक बढ़कर सुन्दर थी, पर रानी जुन्हाई का तो

कहना ही क्या था। यह रानी सूर्य की किरण से उत्पन्न हुई थी। उसे कैलास-शिखर पर भूलते देव पंगराज उस पर मोहित हो कठिन तपस्या करने लगे तब वशिष्ठ ऋषि के उद्योग से वह कन्या उन्हें मिली थी।

रानी का संदेश पाते ही जयचन्द ने उसी समय एक हजार सवार सजने की आज्ञा दी। जब तक सवार, पीन से और कहार सजबज कर तैयार हुए, तब तक दासियों ने रानी के आज्ञानुसार दो हजार स्वर्ण-थालों में सब तरह की मिठाई और पाँच सौ थालों में पान-सुपारी, कपूर, केशर, कस्तूरी, अनार, दाग, पाँच सौ थालों में कपूर के लड्डू, तीन सौ में साफ खोवे की मिठाई, चौंसठ थालों में तबक चढ़े हुए पान के बीड़े और साफ शेष थालों में सरंजाम था। प्रत्येक थाल पर दां-दा बहुमूल्य पीताम्बर ढके थे। इन सब स्वादिष्ट खाद्य पदार्थों और अन्य बहुमूल्य मिजवानी के साथ एक स्तन-जटित थाल में एक अत्यन्त मूल्यवान् स्तनों का बना हुआ मोर था, जो कल-पुजों का बना था, और आप-ही आप राजा का गुण बखान करता था।

यह सब सामग्री लेकर एक हजार दासियाँ सज-धज कर तैयार हुईं। वे दासियाँ क्या थीं, पृथ्वीराज के मन को मोहने का माया-मरीचिकाएँ थीं। वे सोलह शृङ्गार और बारहों आभूषणों से सज्जित हो, रंग-विरंगे बहुमूल्य रेशमी और ज़रतारी वस्त्र पहन, बड़ी-बड़ी आँगियों में बारीक काजल लगा और पान के बीड़े चबा चलने को तैयार हुईं। तब उनमें से एक-एक की अदा, वजा, चमक देव शरद्-चन्द्र भी फीका हो गया।

उनके सिर पर मोतियाँ की लटें लटक रही थीं। कान में जड़ाऊ ताटक पड़े थे। हृदय पर जड़ाऊ हार बहार दे रहा था। कमर की मेखला मंद-मंद स्वर में हंस और चकोर की बोली की नकल कर रही थी। कहाँ तक कहें, वे रति की कलाएँ, कुसुमायुध की कमानें,

सब बातों में प्रवीणा, चतुरा, प्रगल्भा, मृगलोचनी, गजगामिनी, कलकंठी, सर्वोग-सुन्दरी, षोडशी वालाएँ सज-धज, पीनसों में सवार हो, ठाट-बाट के साथ, कवि चन्द के डेरे पर आईं ।

इनके द्वार पर पहुँचते ही दरबान ने इन्हें रोक अन्दर इत्तिला की । खबर पाते ही उधर तो राजा सिंहासन से उतरे, और सब ठाट बदल गया । इधर दासियों ने सिरापचे में जा सब सामान कवि को नजर किया और कहा—“हे सब विद्याओं और कलाओं में निपुण चौहान-दरबार के राजकवि, रानी जाह्नवी ने आपको-प्रणाम कह आपका कुशल प्रश्न पूछा है ।”

कवि ने सब देखकर कहा—“महारानी को मेरा आशीर्वाद कहना, और कहना, दीर्घजीविनी और प्रसन्न रहो ।”

दासियाँ वहाँ से बिदा होकर आईं, तो रानी से पैर छूकर कहा—“हम लोग महारानी की आज्ञा पालन कर आईं, पर महारानी, अपराध क्षमा हो, और तो जो है, सो है, पर कवि चन्द का खवास जैसा देखा, वैसा दूसरा कोई नहीं देखा ।” रानी ने उन्हें तो समझा-बुझाकर हटा दिया, पर समझ गई, अवश्य पृथ्वीराज आए हैं ।

उधर दासियों के जाते ही राजा फिर कूदकर गद्दी पर जा बैठे, और मंत्रणा होने लगी । राजा ने कहा—“कवि चन्द, कहो, अब क्या विचारा है ?” कवि चन्द ने कहा—“महाराज, कहिए, अब तो उस प्रतापी राजा के दरबार में छुगार लेकर खड़ा होना पड़ा या नहीं ।” यह सुनकर पृथ्वीराज घायल सुअर की भाँति उबल पड़े । उन्होंने कहा—“सबेरा होने दो, अपने असल स्वरूप ही से जयचन्द का दरबार देखूँ, तो सही ।” यह हाल देखकर नरनाह कान्ह से न रहा गया, वह बोले—“रे भट्वा, तू जो कुछ करे, वही थोड़ा । अब तू ही आशीर्वाद देकर अलग हो जायगा, और यहाँ हम लोगों के सिर पड़ेगी । तूने ही भुसा में आग लगाई है ।”

कवि ने कहा—“नरनाह सुनिए। एक बार रावण ने सब देवताओं को वश में करने के लिए यज्ञ किया, तब इंद्र ने कौए का रूप धरकर शाकल्य जूठी कर दी, जिससे यज्ञ भंग हो गया, तब क्या इंद्र कौआ बन गए।” इतने में वनवीर परिहार ने आकर भोजन-तैयारी की सूचना दी। तब गोईंदराय ने कान्ह का हाथ पकड़कर कहा—“मूसल से डरना क्या ?”

यह सुन सबने उठकर भोजन किया, और फिर विश्राम करने लगे। पृथ्वीराज भी पलंग पर पैर पसार कर सोए।



१५

पहर-भर रात व्यतीत होने पर राजा के भेजे हुए दूत ने आकर कवि से कहा—“औरस (महफिल) देखने के लिये महाराज ने आपको बुलाया है। चलिए, और छुरीदा चलिए।” चन्द सन्देश पाते ही पृथ्वीराज को यों ही सोता छोड़ पंगराज की ड्योढ़ियों पर जा पहुँचा।

रंगशाला में जाकर कवि क्या देखता है कि केशर कस्तूरी, अम्बर, अरगजा, कपूर की सुगन्धित लपटों से रंगशाला महक रही है। दस हजार मन तेल और सात मन अगर के फुलेल से भरी हुई सात हजार सोने की मशालें और कई हजार जड़ाऊ दीपक जल रहे हैं। कुल मिलाकर एक हजार चौदनी-पाल तने हैं, जिन पर नाना भौँति के जरतारी बेल-बूटे और खरगोश, गैंडा, हाथी, बन्दर, हिरन और शेर आदि भौँति-भौँति के जानवरों के चित्र खचित हैं। मानो ये जंगली दुर्धर्ष

पशु भी जयचन्द के राज्य में परस्पर का असमंजस त्याग मेल का मजा ले रहे हैं ।

यवनिका उठते ही सैकड़ों कन्याएँ एकदम मंच पर आकर लय-ताल पर नृत्य करने लगीं । मानो काम की सेना महादेव को विजय करने चली हो । लय और ताल पर उनकी ठुमक चाल के नूपुर मंद-मंद ऐसे बजते थे, मानो मकरकेतु महाराज के निशान बजते हों । उनका शृंगार और जड़ाऊ गहने देखकर तो ऐसा प्रतीत होता था, मानो कामदेव ने नवग्रहों और नवग्रहों ने कामदेव से स्पर्धा की हो, और फिर वे दोनों मिलकर एक हो गए हों । उनके गले में लटकते हुए बड़े बड़े मोतियों में उनके मुख का प्रतिबिम्ब ऐसा प्रतीत होता था, जैसे कुँए के लहराते उज्ज्वल जल में चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब की झलक जान पड़ती हो ।

उन्होंने एक ही गति पर मिलकर श्रीसरस्वती की स्तुति करके बाएँ हाथ की पुहुपांजलि मुद्रा करके उसे ऊपर को उठाया, और दाहने हाथ से गुरु को प्रणाम करके मंद-मंद पद संचालन किया । इसके बाद गणेश-स्तवन करके गत यानी लहरा नाचकर अलाप-चारी आरम्भ की, और स्वर मे लेकर शनैः शनैः पंचम और फिर सप्तम तक तान ले गईं । उसके साथ के सफरदाई भी हाहा-हूहू गंधर्वों की भाँति वाद्य विद्या में निपुण नाना प्रकार के ठेका, तोड़ा, मुखड़ा और पटनों के हाथ भाड़ते हुए बराबर सम पर-सम देते जाते थे । कहिए, उनके ताल-स्वर पर तान-गान का हम कैसे वर्णन करें । वे वरुण देश की शिक्षा पाए हुए थीं, जो गान-विद्या का घर था । जिस समय वे ताल पर तड़पकर और तिरपट होकर अदा के साथ-साथ भाव बतातीं, तो उनके चमकीले चंचल लोचन कुमुदिनी के खिले फूल में खेलते भौंरे से जान पड़ते थे । वे ऐसे ऐसे तरह-वजनदार गहनों से सजी थीं कि इस बात का पता ही

नहीं लगता था कि वे गहनों से दिपरहो हैं या गहने उनसे दिपरहे हैं। वे उसी ताल सम पर नाचते-नाचते मोर, मृग, सिंह, हंस, चकवा, कमल आदि की आकृति बन उनके सागोपांग भाव बनातीं, बीच-बीच में कुंडलिनी एवं सर्पिणी को साधकर जो ऊर्ध्व श्वास चढ़ातीं, तो उनके उन्नत उरोजों पर हिलता हुआ मोतियों का हार ऐसा सुशोभित होता, जैसे हंस के बच्चे मोती चुग रहे हों, और जब कभी बैठकर समाधि लेने की मुद्रा करतीं, तो ऐसा प्रतीत होता था, श्रीशिव ने ही गोपिका-रूप धारण किया हो। वे मृदंग, उपंगादि तो अनहद नाद रूप धरे थे।

इस प्रकार जब तीन प्रहर रात्रि व्यतीत हुई, और रात्रि के चौथे चरण में धर्मराज की बेला आई, देवालयों में झालरें झलकने लगीं, कुक्कुट बाँग देने लगे, तब महाराज के संकेत से नाटक बन्द किया गया, और दरबार बरखास्त कर, कवि को सीख दे राजा जयचन्द अपनी चित्रसारी में जा पौढ़े, और कवि चन्द ने प्रसुप्त पृथ्वीराज के पास आकर कहा—“हे शहाबुद्दीन को वारंवार बंदी करके उन्मुक्त करनेवाले वीरवर, उठो, प्रातःकाल हो गया।”

१६

प्रतापी पंगराज ने अपने मंत्री सुमंत को बुलाकर कहा—“मैं कवि को बिदा करने जाना चाहता हूँ, इसलिये तुम शीघ्र बिदाई का सरंजाम करो देखो, सुकीर्ति की बेल इन्हीं कवियों द्वारा सिंचित होकर बढ़ती है, इसलिये कवि को ऐसा दान दिया जाना चाहिए, जैसा किसी राजा ने आज तक न दिया हो।” मंत्री ने यह सुनकर हाथ

जोड़ अर्ज की—“महाराज की मर्जी हुई सो ठीक है, परन्तु राजा वीर विक्रमादित्य ने वैताल कवि को पचास हजार मन सोना, इकतीस मन मोती, तीस मणि-जटित साज से सजे हुए हाथी और इकतीस परम सुन्दरी अछूती कन्याएँ दान की थीं, इससे पराई बराबरी क्या, अपने वित्त के अनुसार जो आज्ञा हो, लगा दूँ।”

जयचन्द ने कहा—“अच्छा, जैसा ठीक समझो, करो।” तब सुमंत ने अच्छे-अच्छे तीस हाथी, जड़ाऊ साज-सहित दो सौ कोतल घाड़े, सौ मन सोना, अमूल्य मणि माणिक और मोतियों से भरे हुए दो बड़े बड़े हंडे और जड़ाऊ जरीवाफता, कमग्याव कसब और गुल-बदन के दो सौ थान और अन्य बहुमूल्य वस्त्र कवि चन्द की विदाई के लिये लगाकर राजा के सामने हाज़िर किए।

यह देख राजा ने तीन लाख सेना सजने की आज्ञा दी। पहला निसान बजा कि जहाँ-तहाँ हाथी, घाड़े, ऊँट और हिंदू-मुसलमान सब सिपाही कील-काँटे से दुरुस्त हो गए। दूसरे निसान की आवाज पर महलों के दरवाजों पर हाज़िर सब लोग श्रेणी-बद्ध हो गए। तीसरा निसान बजते ही राजा महलों से निकलकर छत्र चँवर-सहित आ गए। उनके साथ सैकड़ों छत्रधारी राजे भी थे। राजा के सवारी करते ही सैकड़ों धानुक बाजे बजाने और कड़खे गाने लगे, गंगा-जमनी जड़ाऊ छड़ी लिए नकीब सलामी की आवाजें कसने लगे। राजा के आस-पास लच्छेदार चँवर झले जा रहे थे, और सिर पर प्रताप स्वरूप छत्र छहरा रहा था।

इस प्रकार दल-बल सहित राजा जब विदा का सरंजाम साथ ले कवि चन्द को विदा करने चले, तो सामने सीस-माल पहने हुए योगी, पङ्ख भाड़ता गीध ऊपर, चोंच उठाए चातक, चोंच में साँप लिए चिल्लाती हुई चील दिखाई पड़ी। इन विग्रह-सूचक अपशकुनों को देखकर जयचन्द का माथा ठनका। उन्होंने खास-खास सरदार पासवालों को

बुलाकर कहा—“देखो, कवि चन्द के साथ पृथ्वीराज भी हैं। खबरदार रहो, वह जाने न पावें। जीते ही पकड़ लिए जायें” इसके बाद उन्होंने दलपति रावण को आज्ञा दी कि तुम बढ़कर कवि चन्द को हमारी अवाई जता दो।

यहाँ नित्य-कर्म से निवृत्त होकर पृथ्वीराज अपने आसन पर बैठे थे, और उन्हें घेर सब सामन्त बैठे मन्त्रणा कर रहे थे, तभी दलपति ने आकर महाराज के आगमन की सूचना दी। भट्ट सभी स्थान बदल कर तैयार हो बैठे।

रावण ने लौटकर राजा के कान में कहा—“महाराज, कवि के भुलावे में न रहिए, वहाँ पृथ्वीराज साक्षात् विराजमान हैं।” यह सुनकर जयचन्द की वाहें खिल गईं। उन्होंने कहा—“तब मार लिया है, खबरदार, जाने न पावें।”

कवि चन्द राजा की अगवानी को आगे बढ़ आया। उसने राजा को सादर ले जाकर उच्चासन पर बैठाया और कहा—“मेरे अहोभाग्य, जो आपने यहाँ पधारने की कृपा की। श्रीमान्, मैं प्रतापी पृथ्वीराज का राजकवि हूँ, और आपको छोड़ किसी भी नृपति के द्वार पर नहीं गया।”

इसके बाद कवि चन्द ने खवास पृथ्वीराज को पान लाने का संकेत किया। कवि की आज्ञा पाते ही पृथ्वीराज फौरन् पान लेकर जयचन्द के सम्मुख आए, और बाएँ हाथ से पान बढ़ाया। यह देख जयचन्द मन में जल गए, पर ऊपर से प्रसन्न होकर बड़े गौर से पृथ्वीराज को देखते रह गए, मानो बहुत दिन बाद घात पाकर कुलटा अपने पुराने यार को देख रही हो। पृथ्वीराज ने पानदान बढ़ाया, पर वह नीचा हाथ करके पान देना चाहते थे। इस-जिह्म-जिह्वा में जयचन्द की त्योरियाँ चढ़ गईं। इस पर कवि ने श्लोक पढ़कर कहा—
“ब्राह्मण के हाथ से तुलसी-दल, योगी के हाथ से विभूति और चण्डी

के हाथ से पान आदर से लेना चाहिए ।” यह सुन राजा ने पान लेने को हाथ फैला दिया । पृथ्वीराज ने ठेलकर पान दिया, और इस लाघवता से अँगूठा राजा को हथेली पर गड़ाया कि राजा तिलमला उठे । उस समय जयचन्द की यह दशा थी कि मानो पृथ्वीराज को कच्चा ही खा जायँगे, पर वह चुपचाप बैठे सोचने ही रहे । उनके मन में निश्चय हो गया कि यही मेरा प्रबल शत्रु पृथ्वीराज है ।

कुछ देर और ठहर राजा उठकर महलों को चल दिए । उन्होंने सुमन्त को बुलाकर कहा—“सुमन्त, हमने भर्त्ता भाँति जाँच लिया, वह खवास पृथ्वीराज ही है । उन्हें पकड़ लो, न हो मार डालो, जिससे मेरे कलेजे में ठंडक पड़े, और संयोगिता की आशा टूटे ।” सुमन्त ने कहा—“पृथ्वीनाथ, आप क्या आज्ञा देते हैं, भला राजा पृथ्वीराज खवास बनकर दरबार में आवेंगे ! उनकी ऐसी क्या अटक पड़ी थी । मैं न मानूँगा, सम्भव है, कोई वीर सरदार ही हों । फिर वह जो भी कोई हों, कवि के साथ हैं, कवि और बर्साट सदैव अवश्य हैं । महाराज अगर सन्देह में कुछ मूर्खता हो गई, तो बड़ी जग-हँसाई होगी । इससे क्यों न कवि को बुलाकर उसी से पूछ लिया जाय । वह तेजस्वी कवि कभी भूट न बोलेगा ।”

जयचन्द ने उसी समय कवि को महलों में बुलाकर सत्कार से बैठाया और कहा—“कवि तुम लुहो शास्त्रों और अठारहो पुराणों के ज्ञाता, प्रतिष्ठित कवि हो, सरस्वती के बरदाई हों । मैं तुम से एक बात पूछता हूँ, यदि भूट बोलोंगे, तो याद रखो, जीते घर न जा सकोगे ।” कवि ने कहा—“आप पूछिए भी ताँ ?” जयचन्द ने कहा—“क्या तुम्हारे साथ में पृथ्वीराज हैं ?”

कवि ने कहा—“हाँ महाराज, जिनके दाहने पार्श्व में सूर्य के समान तेजस्वी, जिनके नेत्रों में शनैश्वर का निवास होने से सदैव पट्टी बँधी रहती है, और जिन्होंने पद्मपुर के प्रतापी राजा भीम को

मारा, जिनकी विकट कृपाण जग-जाहिर है, वह नरनाह काका कान्ह चौहान और बाएँ पार्श्व में राठौर-कुल-शिरोमणि निडर निड्डुरराय सदा विराजमान रहते हैं, वह छत्रधारियों में श्रेष्ठ, पृथ्वी के इन्द्र सोमेश-सत पृथ्वीराज इस समय यहीं विद्यमान हैं। दो बार गजसेन को गिरफ्तार करने वाले गोइन्दराय गहलौत, मुसलमानी सेना की आँखों के साल, सलग्व कुल-कमल आबू-नरेश जैतराव, कटारे वीर भाई हरसिंह-नरसिंह, बालुकराय का वध करनेवाले प्रसंगराय भाला, महाधनपति विभरराज चौहान, महुवे के परमाल और बाडरराय, साँभर के परिहारों को पराम्त करनेवाले अचलेश मही, शाह की बाँह पकड़ खींचनेवाले पोपा परिहार, पहाड़राय तवेर, एक लाख वीरों को मारने वाला पजन कल्लवाहा, नागौर का सूबेदार नरसिंहगव, जालौर को जीतने और काँगड़े के गढ़ को ढहानेवाला सलग्व प्रमार, मेवाती मुगलों को मारने-वाला धीर प्रमार, भूमि-विजेता जामराय यादव और प्रसंगराय खीची, काँगड़े का राजा हीदुलीराय, वाग्म का मूर्तिमान अवतार जोगी जंधारा भीम का सिर काटनेवाला सारंगराय मोरी, सदा एक तलवार का धनी बाँका परिहार राना गंजल डोह, शाह के भाई का धानक गुजरातराज गौर सरदार कालिंजर किले का दुर्धर्ष बाँदा अन्नाताई चौहान, पानीपत में जूझनेवाले भोहा चन्देल के भाई, आलीलगाँ की आँतों को फाड़ने-वाले गमराय बड़गूजर, पर्वत के समान भीमकाय माल चन्देल, केवल त्रिशूल बाँधनेवाला मण्डलीकराय बघेला, पृथ्वीराज का अन्तरंग सग्या धावरराय धीर, शाह को बारम्बार मार भगानेवाला हाड़ा हमीर, रावत राम शूर, जिसकी नजर में नजर मिलाना कठिन है, रणतूर के इक-तीस रावतों को बाँध लानेवाला जाबला जहू, एक हजार नीलबन्द जवानों का सरदार चालुक्यराय, रणथंभौर में सिंह के समान परा-क्रम दिखानेवाला क्रूर खेमर, वसुनराय को मारनेवाला संग्राम-सिंह दाहिया, मुभट भीम का हंता चंद्रसेन मंडलीक, महावीर सामला शूर,

पल्लवान विजयकर एक हजार ग्राम पृथ्वीराज से पानेवाला राय प्रमार, ध्रुव के समान अटल और इन्द्र के समान देदीप्यमान चाँटाराय टोंका चौहान, एक हजार धनुर्धारियों का स्वामी साँखला शूर, भुजविजयी विक्रमादित्य, दो हजार चतुरंगिणी का स्वामी भोजराय, अपनी तलवार से दक्षिण का विजय करने वाला बघेला, शूर, पृथ्वीराज के आधे पाट का हिस्सेदार सजमाराय का पुत्र लंगरीराय, देवागनाओं को मोहनेवाला आल्हैन परिहार का पुत्र तारनराय, बध्नौर का मल्लनराय, अकेला एक हजार वीरों से मोर्चा लेनेवाला जाजराय यादव, एक हजार नेजावरदारों का स्वामी पंचाइन चौहान, महायोद्धा धीर परिहार आदि एक सौ सामंत और एक हजार सहजोर योद्धाओं-सहित दिल्ली पति पृथ्वीराज इस समय कन्नोज में हाजिर हैं।”

यह सुन जयचन्द तावपेच ग्या उठ खड़ा हुआ, और कवि को विदाकर हुक्म दिया—“इसी समय दस लाख सेना कवि चन्द के जनवासे को घेर ले, देखूँ कहाँ जाता है। आज पृथ्वीराज का नग-नग उतार लूँ, तो बात।”



१७

दल-बादल की भाँति पंग-सेना कवि चन्द के जनवासे पर पिल पड़ी। उसके सब नाके रोक लिए। चारों तरफ दौड़ धूप और हाथ-हाथ, मारो-मारो, धरो पकड़ो मच गई। यह देखकर नरनाह कान्ह ने कहा—“लो भाई, वह समय भी आ गया। अब सब कोई कील-काँटे से दुरुस्त हो जाओ।” सामंतों ने शस्त्र कसते हुए कहा—“चलो, अब मालूम हो जायगा, कौन कितने में है।” लंगरीराय ने पृथ्वीराज

को जुहार करके कहा—“राजन्, आपने सदा मेरा आदर किया, और मैं सदा आधी गद्दी पर आपके साथ बैठा, आज मैं सबका हिसाब चुकता करूँगा।” यह कह कर वह महावीर शत्रु के व्यूह में पिल पड़ा। उधर से जयचन्द का भाजा सहस्रमल तीन हजार राठौरों और चालीस मतवारे हाथियों की भीड़ में मस्त चला आता था। लंगरीराय उसी के सामने अड़ गया। योद्धा गाजर मूली-से कटने लगे। लंगरीराय का प्रचंड वेग देख योद्धाओं के लृक्के छूट गए। देखते-देखते हजारों योद्धा कटकर गिर गए। अब सहस्रमल का लंगरीराय से सामना हो गया। देखते ही एक ही बार में सहस्रमल के दो टुक कर दिए, पर गिरते-गिरते सहस्रमल ने जो हाथ मारा, तो लंगरीराय बीच से चिरकर दो हो गया। एक भाग तो गिर पड़ा, और दूसरा प्रचंड वेग से व्यूह को चीरकर महलों में धँसा चला गया। मार्ग में मुंडों के अरंव लग गए। चौक में रक्त की कीच हो गई। जब वह पहली ड्योढ़ी नाँघ चुका, और योद्धा उसमें भयभीत होकर भागने लगे, तब मंत्री मुमंत तलवार खींच आगे आया। दोनों ने भरजोर बाँह भरी, दोनों के हाथ एक साथ एक दूसरे पर पड़े, और दोनों का बारा-न्याग हो गया। महलों में हाहाकार हो गया।

भाजे और मंत्री के मरने ही जयचन्द तिलमिला उठे। देखते-ही-देखते उनके सहस्रों योद्धा एक लंगरीराय ने भूशायी कर दिए। उन्होंने तोपों पर बत्ती देने की आशा दी, तोपें गर्ज उठीं, पृथ्वी काँप उठी। जयचन्द एक बड़े भारी हाथी पर बैठकर स्वयं सैन्य संचालन करने लगे। उनके साथ उसी समय मंत्री—पद पर अभिषिक्त उनका भतीजा कन्हाराव और साठ हजार चुने हुए शरीर-रत्नक योद्धा चले।

यह सब हुआ, पर पृथ्वीराज के कान पर जूँ तक न रेंगी। उन्होंने हँसकर कहा—“कवि चन्द, यह तो ब्रताश्रो, इतना बड़ा राजा जयचंद

पंग क्यों कहलाता है ?” कवि ने कहा—“जयचन्द का दल गंगा-जमुना के द्वीप पर अचल होने से पंग कहाता है ।”



१८

पृथ्वीराज उल्लूककर घोड़े पर सवार हुए । उन्होंने सामन्तों से कहा—“भाइयों, इधर आप थोड़ी देर पङ्ग-सेना का सामना करें, तो मैं तनिक जाकर कन्नौज—नगर को एक बार आँख भरकर देख आऊँ ।” सामन्तों ने कहा—“इधर की तो आप चिन्ता न करें, पर हम आपको अकेले इस समय नहीं जाने देंगे ।” पृथ्वीराज ने कहा—“कुछ चिन्ता की बात नहीं है, मैं जरा गङ्गाजी का दर्शन कर आभा आता हूँ ।” यह सुन नरनाह कान्ह चिढ़कर बोले—“अरे मूर्ख, जो तुझे इसी भौंति अकेले भटकना था, तो हम लोगों को क्यों संग लाया था ? क्यों जान-बूझकर कलंक का टीका हमारे माथे पर लगाता है ।”

परन्तु पृथ्वीराज ने एक न सुनी । वह अपने घोड़े को एड़ देकर दक्षिण प्रकोष्ठ की तरफ बढ़ गए । उन्होंने कौशल से शत्रु सेना को पार किया ।

वह निर्भय अलकापुरी के समान कन्नौज महानगरी की शोभा निरखते जा रहे थे । उन्होंने देखा, बड़े-बड़े मतग्वण्डे महल आकाश से बातें कर रहे हैं, जिनके गोख, महाराव भरोखेदार हैं, जिनके बड़े-बड़े दरवाजे, बड़ी-बड़ी कुर्सियाँ और बड़े-बड़े सुविस्तीर्ण आँगर हैं, मौकों-मौकों पर छज्जों पर बेलें छा रही थीं । तबेलों में हाथी, घोड़े, बैल, रथ, भर रहे थे, चित्रसारियों में भरोखों में सुन्दरियाँ बैठी हवा खा रही

थीं। यह विचित्र तमाशा देखते हुए पृथ्वीराज गङ्गा-किनारे दक्षिण दिशा को बढ़ते ही चले गए। वहाँ एक राजमहल के नीचे खड़े होकर वह गङ्गा की शोभा देखने लगे। अचानक एक मोती घोड़े के किसवार से टूटकर जल में जा गिरा, उसके ऊपर सैकड़ों मछलियाँ टूट पड़ीं। कभी तो वह उसे ऊपर ले जाती थीं और कभी नीचे। यह तमाशा देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुए, और किसवार से मोती तोड़-तोड़कर जल में फेंकने लगे।

पङ्क-सेना के गहगहे निसान और मारू वाजों तथा शोर-गुल की आवाज यहाँ भी आ रही थी। संयोगिता ने सुना कि पृथ्वीराज आए हैं, और उन्हीं की धर पकड़ के लिए यह सब उपद्रव हो रहा है। वह उमंग कर लुज्जे पर आ खड़ी हुई। कई सखियाँ भी जुट गईं। एक ने कहा—“अरी देव तां, यह क्या हो रहा है, यह दोहरा सूर्योदय कैसा री?”

संयोगिता ने झुककर देखा, वह सहमकर पीछे हट गई। वह मन-ही-मन सांचने लगी, क्या सचमुच यही पृथ्वीराज हैं।

रमणियों के कामल कलकंठ का सुनकर पृथ्वीराज ने जो गर्दन उठाई, तो देखते क्या हैं, गज पर सिंह, सिंह पर पर्वत, पर्वत पर भ्रमर, भ्रमर पर चन्द्रमा, चन्द्रमा पर मुधा, मुधा पर मृग और मृग पर दो चाप चढ़ाए हुए काम देव विराजमान हैं।

दोनों की आँखें चार हुईं, और दोनों एकटक देखते रह गए।

संयोगिता की जो नवबुद्धि थी, उसी नवबुद्धि की उसकी सहेलियाँ भी थीं। उनमें कोई खेली-खाई न थी। कुछ देर सब एकटक देखती रहीं, तब एक सखी ने कहा—

“अरी, कहीं यही संभरीनाथ न हों, जिन पर संयोगिता के प्राण अटके हैं।” संयोगिता को रोमाञ्च हो गया, स्वेद झलक आया, शरीर थर-थर काँपने लगा, गालों पर पसीना बह चला, बोल रुक गया, गला

भर आया, दाँती भिन्न गई, होठ फड़कने लगे, टाढ़ी हिलने लगी, पलकों की बरौनी जहाँ-की-तहाँ चिपक गई ।

सहेलियों संयोगिता के मन का ताड़ गई । एक बाली—“अवश्य ही यह महाराज पृथ्वीराज हैं, पर क्या किया जाय, कुछ सूझता भी तो नहीं । यहाँ कोई गुरुजन भी ताँ नहीं है, जो लाज करें, कहो तो पूछें कि तुम कौन हो ।”

संयोगिता ने कहा—“सखी, क्या करूँ, और क्या कहूँ । कर्म में क्या लिखा है, समझ नहीं पड़ता ।” इतना कहकर उसने एक थाल मोतियों से भरकर कहा—“इसे उनके पास ले जा, स्वयं कुछ न बोलना, यदि पृथ्वीराज हैं, तो वह स्वयं पूछेंगे ।”

मोती भरा थाल ले दासी चुपचाप पृथ्वीराज के पीछे आ खड़ी हुई, और मुट्ठी भर-भर मोती उन्हें देने लगी । जब थाल के मोती चुक गए, तब गले का हाव तोड़-तोड़कर मोती देने लगी । जब वह भी चुक गए, तो गले का छूटा तोड़ मुट्ठी-भर पोत राजा के हाथ में दे दिया । ज्यों ही राजा की दृष्टि पोतों पर पड़ी, उन्होंने चकित होकर पीछे खड़ी दासी को देखा और कहा—“तू कौन है ?”

उसने कहा—“मैं कुमारी संयोगिता की दासी हूँ, जिसने पृथ्वीराज पर तन-मन वार रक्खा है । वह मृगलोचनी, सुकुमारी पृथ्वीराज के वियोग में सूखकर काँटा हो गई ।” यह कहकर दासी ने छजे में खड़ी संयोगिता की ओर उँगली से संकेत किया ।

यह देख पृथ्वीराज की भी वही दशा हो गई । होठ काँपने लगे, जम्हाइयों आने लगीं, आँखों में जल भर आया । यह देख चट दस-पाँच दासियाँ राजा के पास आ गईं, और भट राजा को महल में फँदवाकर ले गईं । उस समय पृथ्वीराज पर कामदेव ने दल-बल से धावा किया, और अजेय राजा अनायास ही उसके बँधुआ बन गए ।

सखियों ने कहा—“महाराज, कुमारी वर्षों से जिनकी प्रतीक्षा कर रही थी, वह आज घर बैठे ही आ गए।”

पृथ्वीराज के चित्रसारी में पैर देते ही तत्काल विवाह की तैयारी होने लगी। पर वहाँ सखी-सहेलियों के सिवा कौन था, जो विवाह करावे। अन्त में सखियों ने कहा—“किसी की भी आवश्यकता नहीं है। अन्तरिक्ष में स्थित देवता हमारे साक्षी हैं। ऐसे दम्पति का गान्धर्व विवाह हुआ करता है। इसी भाँति रुक्मिणी-कृष्ण का, नल-दमयन्ती का, दुष्यन्त-शकुन्तला का ब्याह हो चुका है। ऐसा ही पृथ्वीराज-संयोगिता का हो जाय।” वस, फिर क्या था, पृथ्वीराज ने संयोगिता का हाथ पकड़ा और संयोगिता ने राजा का। राजा ने उस वहाँ पार्श्व में बैठा लिया, और सखियों ने गोंठ जोड़ दी, और बैठकर मंगल-गीत गाने लगीं।

देवते-ही-देवते यह विवाह हो गया। तब गोंठ बँधे दुपट्टे को छोड़कर ज्यों ही पृथ्वीराज अपने लश्कर में जाने को तैयार हुए, त्योंही संयोगिता चमककर खड़ी हो गई। उसने विदाई का पान राजा को दिया और बोली—“हाय ! दुर्दैव, जिनके लिये वर्षों से वाट जोह रही थी, आज वह हाथ में आकर भी चले।” यह कहकर उसने अपनी छाती में एक घूँसा मारा और कहा—“स्त्री-जन्म पर धिक्कार है।” इसके बाद वह कटी हुई लता की भाँति पछाड़ ग्याकर पलंग पर गिर पड़ी। उसका शरीर पीला पड़ गया, और वह थर-थर कांपने लगी, परन्तु उसकी दृष्टि पृथ्वीराज पर ही थी।

उसकी यह दशा देख पृथ्वीराज भी प्रतिमा की भाँति स्थिर रह गए। इस दृष्टि से तो वज्र भी मोम हो जाता। सखियों ने कहा—“भला, यह क्या हुआ, प्यासा जल की धार तक आया भी, चुल्लू में जल लिया भी, पर वह ओठ पर पहुँचकर ही बिखर गया।”

पृथ्वीराज की आँखें डबडबा आईं। वह बैठकर सोचने लगे

कि क्या करें। वह प्यारी संयोगिता को छोड़ नहीं सकते थे, पर जब उनके सामन्त कठिन संग्राम कर रहे हैं, वह रुक भी नहीं सकते थे। हठात् उनकी दृष्टि गुरुराम पुरोहित पर पड़ी, जो काका कान्ह की आज्ञा से उन्हें ढूँढ़ते फिरते थे। पृथ्वीराज ने दासी भेज कर उन्हें बुलाया। उन्होंने दोनों हाथ उठाकर राजा को आशीर्वाद देकर कहा—

“धन्य राजन् ! न वहाँवालों को आपकी खबर और न यहाँ की वहाँवालों को खबर। दोनों का हाल परमेश्वर ही जानते हैं। वहाँ पंग-मंत्री मुमंत और राजा के भोजे को मारकर लंगरीराय सुभट काम आए। इसके सिवाय इन्द्रमुनि, कूरंभ, दुर्दनराय, सलख-सिंह प्रमार, प्रतापराय तुँअर, भीमराय रघुवंशी, जयसिंह बघेला और धाराधनी राजा भानुराय आदि वीर भी काम आ चुके। अब अधिक कहने का समय नहीं, वस समझ लीजिए। फिर सामंत न मिलेंगे।” इतना कहकर पुरोहित ने एक दासी को बीच में डालकर संयोगिता से कहा—

“शूर-वीरों को समररूपी सरोवर में स्नान करने का सुअवर सौभाग्य ही से हाथ आता है। इससे जन्म-जन्म के दुख छूटते हैं, और मन निर्मल होता है।”

यह सुनते ही पृथ्वीराज उठ कर घोड़े पर चढ़ कर एक ही छलांग में प्राचीर फाँद अपने डेरे की ओर चल दिए।



पंगराज की प्रबल सेना ने उस स्थान का ऐसा घेर लिया कि तिल धरने की जगह न रही। उस थोड़ी-सी जगह में इतनी सेना के समाने का स्थान न था। सिपाहियों के आपस में ही पाँवों से पाँव और हाथों से हाथ उलझ रहे थे। विशेष कसमकस के कारण परस्पर घिस-घिसाकर सैकड़ों हाथियों के भेले चूर-चूर होकर धूल में मिल गए! दस कोस तक हाथी के सिरों की कतार के सिवा कुछ नहीं देख पड़ता था। उस महमानपुर की कितनी ही हवेलियाँ धूल में मिल गईं। जलाशय पट गए। बाग-बगीचे उजड़ गए। जल के स्थान पर थल और थल के स्थान पर जल हो गए।

ऐसी प्रतीति होता था, मानां दशों दिशाओं के दिग्गल पृथ्वी को दाँत से दबाए हुए थे। शेषनाग की गर्दन टूटी पड़ती थी। सूर्य लोप हो गए थे, मानां तीनों लोक, चौदहो भुवन और इक्कीसो ब्रह्मांड में हाहाकार मच गया हां। जैसे धरती धँस जाती हो, समुद्र सूखा जाता हो।

अन्यान्य राजा और राजकुमार टिड्डी-दल की भाँति चारों ओर फैले हुए थे। हजारों घोड़ों की गर्दन मरोड़कर फेन गिराते हुए हिनहिनाहट सुनकर ऐसा प्रतीति होता था, जैसे सहस्रों मोचंगे या इकतारे बज रहे हों। अरबी, केटील, कच्छी सभी तरह के घोड़े थे। उनके सुरंग, कुम्भेत, कल्ला, समद, अबलख, सिरगा आदि नाना रंग थे। वे हजार रोकने पर भी धरे-बाँधे नहीं रहते थे। तनिक खड़े होते ही खुरों से धरती खोदे डालते थे, और बिजली

की भौंति हथी की किलावों पर लौंग्र जाना तो उनका बाएँ हाथ का खेल था। उन पर सजे-धजे सुन्दर छत्रधारी राजकुमारों के बीच महाराज जयचन्द अपनी अपार सेना का क्रुद्ध हो संचालन कर रहे थे। उस पङ्क-सेना में सोलह हजार नगाड़ों पर एक साथ चोट पड़ रही थी, जिसे सुन प्रलय के मेघ गर्जन का अनुमान कर वीरों की छातियों दहल रही थीं।

लंगरीराय तो पहले ही काम आया। फिर पाँच सामन्त आगे हुए, और देखा कि पंग-सेना का बल अजेय है, तब भाई-बेटों सहित चन्द पुंडीर का भाई पहाड़राय तुँग्र, मानराय कछवाहा, साँखला वीर और केहरीराय मोरी इन्होंने बढ़कर मोर्चा लिया। जिस समय ये महा बलवान् सामन्त टूटे हैं, रुखों के अटारे लग गए, रक्त के कुण्ड भर गए, सेना में हाहाकार मच गया। किसी का सिर कट गया, पर कवन्ध मार कर रहा था। किसी का पेट फट कर आँतें निकल पड़ी थीं, पर एक हाथ से आँतें थामे दूसरे से मार कर रहा था। कोई धजी-धजी उड़ने पर भी पीछे नहीं हटता था। सामन्त जिस किसी मतवारे हाथी पर हाथ मारते, उसके माथे को बीच से कलीन्दा-सा फाड़ देते थे। एक घड़ी में पंग-सेना का रुद्रप्रताप-नामक वीर काम आया, जिससे पंग-सेना में तहलका मच गया, और उसका एक ब्यूह भी टूट गया।

इसी अवसर में पृथ्वीराज ने आकर देखा, तो कहीं से भीतर जाने का मार्ग न था। पङ्क-सेना वामी से गँमी थी। पृथ्वीराज को देखते ही धरो-मारो की पुकार पड़ गई। पृथ्वीराज ने धनुष पर बाण चढ़ाया। पुरोहित तलवार खींचकर आगे बढ़े। पृथ्वीराज ने कहा—“गुरु, यह क्या? यहाँ आपके आगे आने का काम नहीं है।” पुरोहित ने कहा—“यहाँ हमारा आपका स्वामी सेवक का नाता है, गुरु-शिष्य का नहीं। मैं तेरे से रास्ता साफ करता हूँ, आप बाण-वर्षा करते घुस

चलें।” पृथ्वीराज ने घोड़े को एड़ लगाई। सात मीर सरदार रास्ता रोककर अड़ गए। गुरु ने सबको काटा, पृथ्वीराज ने बाणों की बौछार की, और घोड़े को एक एड़ लगाई। घोड़ा एक ही छलाँग में कहीं-का-कहीं उड़ चला। जलालखाँ और पीरखाँ सरदारों ने यवन-दल लेकर हल्ला बोल दिया। राजा ने एक ही बाण में दोनों को धराशायी कर दिया। इतने ही में राजा के धनुष की प्रत्यञ्चा टूट गई। तब राजा ने तलवार निकाल मीर-बच्चों को काई के समान काटना आरम्भ किया, और बात-की-बात में अपने सामन्तों में पहुँच गए।

राजा को सकुशल आया देख सब सामन्त अति प्रसन्न हुए। उस समय राजा के दोनों नेत्र मतवाले हाथी के समान गुस्से से लाल हो रहे थे। सब सामन्त राजा के निकट जुड़ गए। नरनाह कान्ह ने देखा, हाथ में कङ्कण बँधा है, और ललाट पर टीका लगा है, पर गले में मोहनमाला नहीं है। कान्ह ने मुस्कराकर कहा—

“यह क्या बात हैं?”

पृथ्वीराज ने नीचा सिर करके कहा—“क्या कहूँ, यह केवल उसी का प्रण न था, मेरी भी प्रतिज्ञा थी, और यहाँ आकर भी प्रतिज्ञा-पालन न करता, तो क्या? परन्तु मुझे तो आप लोग आँखें दिखला रहे थे, इसी से उसे वहीं रोती छोड़ चला आया हूँ।” यह सुनते ही काका कान्ह कड़ककर बोले—

“खूब किया। पर यह क्या किया कि बहू को वहीं छोड़ आए! अरे धिक्कार है, कोई अपनी स्त्री को भी इस तरह छोड़ता है। तुम्हें क्या चिंता थी, जब तक हममें से एक भी जिन्दा है, तब तक तुम्हारा कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता, हम तुम दोनों को सकुशल दिल्ली पहुँचाकर ही रहेंगे। हरे कृष्ण, हम सौ राजपूत बच्चे और तुम्हें अकेली एक स्त्री सहित दिल्ली न पहुँचा सकेंगे! अरे, संसार-सुख की समृद्धि

से है। इस समय संसार मुख की मूल स्त्री और सुकीर्ति-साधक समर दोनो तेरे सम्मुख उपस्थित हैं, फिर उस स्त्री से, जिसका जीवन-मरण एक तेरे ऊपर निर्भर है, यदि विमुख हो जायगा, तो लोग क्या कहेंगे कि शत्रु के घर में स्त्री को छोड़कर चल दिए, इसलिए वही को सज्ज ले चलना चाहिए। जा, वही को ले आ, यहाँ हम हैं। चिन्ता न कर।” पृथ्वीराज ने आज्ञाकारी भोले शिशु की भाँति मन का उल्लास हाँटो में लिपाकर कहा—“काका जी की जैसी आज्ञा।”

इसके बाद एक छोटा-सा व्यूह बनाया गया, और चुने हुए सामन्तों से गँसा हुआ पृथ्वीराज विजली की भाँति फिर पङ्क्त-सेना को चीरकर पार गया।

संयोगिता मछली की भाँति पलंग पर छुटपटा रही थी। उसकी सहेलियों ने शरीर में चन्दन लेप किया, पङ्क्ता भला। वह क्षण-क्षण पर मूर्छित होती, फिर हाँश में आकर बेहाल हो जाती। कभी गोख में भौंकती और कभी पलङ्ग पर पछाड़ खाती। सग्नियाँ हजार रीति से समझा रही थीं, पर वह किसी की नहीं मुन रही थी। कोई कहती—“अरी, तूने ऐसे से मन लगाया, जिसे तेरा पिता तेल में होकर देखता है, उसके लिये कहाँ तक कलपेगी, जिस पर हजारों हाथ उठे हुए हैं।”

यह सुनते ही संयोगिता ने दोनों हाथों से मुँह ढाप लिया, और ढार मारकर रोती हुई बोली—“अरी सखियों, क्यों जले पर नमक छिड़कती हो। अरी, मरे को गाली देने से क्या। अन्धा शीशा नहीं देख सकता, गूँगा बोल नहीं सकता, कर्म रेख के सामने किसकी विद्या-बुद्धि चली है।” यह कहकर संयोगिता सिसकती हुई शरद्-चन्द्र के प्रतिविम्ब के समान खड़ी रह गई। फिर उसने भरोखे की जाली में सिर दे मारा और वहीं बेहोश होकर गिर गई। सखियों ने उसे सचेत करके

उठाया, और पलंग पर डाला। वह उन्मीलित आँखों से देखती हुई ठंडी साँस लेकर बोली—“हा ! या तो बड़ों का यह कहना झूठ है कि शूर-वीर सच्चे होते हैं, या राजा कायर है।”

संयोगिता यह वचन कह रही थी कि राजा सामन्तों-सहित सिंह की-सी छल्लोंग मारकर महल पर चढ़ आया और बोला—

“दो में से एक भी नहीं। अरी मूर्खा, क्या कहती है, हम एक-एक एक लाख के समान हैं और ऐसे हैं कि हाथी का दाँत मूली की भाँति उखाड़ लेते हैं। उठो चलो।”

क्षण-भर प्रथम जिसके वियोग से संयोगिता सिर धुन रही थी उसे इस भाँति सामने ग्वड़े और उपर्युक्त वाक्य कहते सुन संयोगिता सहम गई।

कुछ ठहर उसने साहस कर कहा—“आप कैसे मुझे इन थोड़े-से साथियों-सहित ले जायेंगे ?” राजा ने हँसकर कहा—“और जो इन्हीं सामन्तों के बल पर पङ्क-सेना का नाश कर दूँ, तब तों मानोगी। चलो उठो देर का समय नहीं है।”

इस पर संयोगिता हाथ जोड़कर बोली, “हे नाथ, आपके सब सामन्त मेरे पिता की सेना के सामने दाल में नमक भी नहीं। हे स्वामी आप कैसे फूँक से पहाड़ उड़ाया चाहते हैं। मैं पल-भर भी आपसे पृथक् नहीं रहना चाहती, पर मुझे अन्देशा इतना ही है।” इसके बाद वह रोती हुई पृथ्वीराज के चरणों में गिरकर कहने लगी—

“हाय ! मैं बड़ी पापिन हूँ, जो स्वामी की निन्दा करती हूँ।” कुछ ठहरकर वह बोली—“आर्यपुत्र, मेरे पिता का दल-बल बड़ा है। जब उनकी सेना सजती है, तब पृथ्वी-उथल-पुथल होने लगती है, घोड़ों की टाप से उड़ी हुई धूल आकाश में इस तरह से आच्छादित हो जाती है, मानो स्वयं सूर्य भगवान् ने शंकित होकर छाता तान दिया

हो बड़े-बड़े ताल-तलयों में कीच निकल आती है, और पर्वत धूल हो जाते हैं ।”

इस पर गोइंदराय गहलौत से न रहा गया, वह बोला—“कम-ध्वज-कुमारी, मेड़ें चाहे जितनी हों, उनके लिये एक ही सिंह बहुत है । स्वामी संभरीनाथ की आज्ञा पाकर मैं अकेला ही पंग-दल का विध्वंस कर सकता हूँ, तुम चिंता न करो । मैं अकेला ही तुम्हें दिल्ली पहुँचा दूँगा ।”

संयोगिता फिर बोली—“मेरे पिता के यहाँ बीस हजार बख्तरिए, सोलह हजार निसान, सत्तर हजार हाथी और तीस हजार दुधारे तथा नेजेबदार हैं, पैदलों की तो गिनती ही नहीं, सौ सामंत उन्हें कैसे रोकेंगे !”

चन्द पुंडीर बोला—“वह सब दल-बल हमारा देखा है, जब हमने यज्ञ-विध्वंस किया था, तब क्या वह सब औसाफ नहीं थे ।”

यह सुनते ही संयोगिता की हठ की गोंठ छूट गई । नरनाह काका सदा मुँहतांड कहने वाले थे, आँखें तरेरकर बोले—“सामंतो, धिक्कार है हमारे-तुम्हारे जीवन को, जो स्वामी की निन्दा कानों से सुनें । अरे, हमारे रहते संयोगिता ऐसी बात कह रही है । इधर-उधर का कोई भी जब हमारी शरण में आ जाता है, तो तन में साँस रहते उसकी रक्षा से कभी नहीं हटते, फिर यह तो अपने घर की बहू है ।” फिर उन्होंने बहू को लक्ष्य करके कहा—“बहू, जब तक कान्ह के चोले में दम है, तब तक तू निर्भय रह । मुझसे सुर, नर, नाग सब परिचित हैं । काल की भी मजाज नहीं, जो मेरी तलवार के सम्मुख ठहरे, तू कहे, तो इन्हीं भुजाओं से तेरे पिता के सिंहासन-सहित राजमहल को खोदकर गंगा में डाल दूँ, और तुम दोनों को ऐसे ही दिल्ली पहुँचा दूँ । इन सामंतों को तू नहीं देखती, जो भारत-भूमि के शृङ्गार स्वरूप

हैं। इनका शौर्य संसार जानता है, अतः तू साहस कर, मन पक्का कर चलने की ठान।”

गोइंदराय ने कहा—“क्या लंगरीराय को नहीं देखा, जिसने कटकर भी मंत्री को मार गिराया, और अस्सी लाख की अकवकी भुला दी।” चन्द पुंडीर बोला—“सुनो पंगजी, शूरवीर घर-घर नहीं उपजते, तलवार बाँधना ही शूरवीरता का काम नहीं है।” इस प्रकार सभी सामंतों ने जब संयोगिता का समझाया तो संयोगिता अछूता-पछूताकर पृथ्वीराज की ओर देखती हुई उठी। पृथ्वीराज ने उसका बायाँ हाथ पकड़ लिया, और खींचकर घोंड़ के पुट्टे पर बैठा लिया, तथा उछलकर स्वयं भी सवार हो गए। उन दोनों का बैठा देखकर सामंतों ने पृथ्वीराज को चारों ओर घेर लिया। ईशान में काका कान्ह और केहर कंठीर, पूर्व में निडूहुराय, अग्निकोण में तलख प्रमार, लखन बघेला और जैतराव, दक्षिण में प्रहारराय तँवर, भोहा चंदेल और अल्हनकुमार, नैऋत्य में दलसिंह दाहमा और लखन बघेला, वायव्य में वीरसिंह, उत्तर में गक्खर गुरेश और पश्चिम में बलभद्रराय कुरम्भ और जामराय यादव चले।

ज्यों ही पृथ्वीराज इस प्रकार ब्यूहबद्ध हो पङ्क-सेना का भेदकर चले, त्यों ही पङ्क-दल दौड़ पड़ा। पृथ्वीराज दुविधा में पड़े कि दिल्ली भागकर संयोगिता का उपभोग करें, या पङ्क-दल का विध्वंस कर कम नीय कीर्ति कमावें। वासना ने उनके कान में कहा इस समय कुमारी का रस लो, जिसके लिये इतना किया। आत्मगौरव ने कहा, नहीं, बड़े बहादुर बने थे, अब गङ्ग-दल से दबकर दुम दबा बैठे। ये झेला हिलाते हुए हाथियों के हेली, तबेला-के-तबेला, तेज ताजी और उज्ज्वल शस्त्रधारी सिपाही तेरी बाट जो रहे हैं। यह विचारकर पृथ्वीराज उलट पड़े। यह देख चन्द कवि ने कहा—“पृथ्वीनाथ, यह समय पङ्क-दल के पीछे पड़ने का नहीं है। कुमारी को लेकर कूच कर दो।”

पूर्णाहुति

1 ने कहा—“वाह, मैं पृथ्वीराज कैसा जो मार-मारकर पङ्ग-दल धुरें न उड़ा दूँ? क्या मैं प्राणों से अधिक प्रिय सामन्तों को मु-मुख में डाल मौज करूँ। जाओ, पङ्ग-सेना में पुकारकर कह कि चौहान पृथ्वीराज पंग राज-नन्दिनी संयोगिता को हरण करके मैदान में खड़े हैं, जो कोई माई का लाल हो, आवे, और ले।”

यह कह पृथ्वीराज ने तत्काल व्यूह-ग्वचना की, और कवि चन्द ने सेना के बीच में खड़े हो उच्च स्वर से कहा—“यह प्रयास किस है?”

उधर से नकीव ने पुकारकर कहा—“दिल्ली-पति पृथ्वीराज के ये, जो भेष बदल कर कवि चन्द के साथ आए हैं।”

तब कवि चन्द ने हाथ उठाकर कहा—“वह जयचन्द का यश वंश करनेवाले महाप्रतापी संभरीनाथ सुन्दरी संयोगिता का पाणिग्रहण खड़े हैं, और पंग-पुत्री विदाई में युद्ध-आभूषण मोंगती है।”

यह कहना था कि सोलह हजार निसान बजाती सारी पंग-सेना तरह उमड़ पड़ी, जैसे पूर्वी हवा का रुख पाकर भादों के बादल गड़ा आते हैं। चारों ओर से पृथ्वीराज का घेर लिया, मानो प्रबल अम्प आया हो। अब संयोगिता लज्जा त्याग बोली—“स्वामिन्, मेरा मुँह न देखिए बढ़-बढ़कर हाथ दीजिए, और पल्ला-भर कीर्ति जिए, और क्षत्रिय-जन्म सुफल कीजिए।”

पंग-सेना में भौंभ, तबला, तिदूर, ढोल और मृदंग बज रहे थे। डीर शंखों की ध्वनि आ रही थी। सींगी, रणसिंहा, रणतूर गर्ज थे। एक सहस्र शंखों ने एक साथ ध्वनित होकर हड़कम्प कराया था। पंग-दल के अग्र भाग में हाथियों की बाढ़ थी, जिन पर ज्वल छत्रधारी क्षत्रिय सवार थे। वे वायु के समान बली, बड़े-भीमकाय सिंहलद्वीपी और दक्षिणी खेत के दँतारे हाथी ऊपर

को सूँड़ उठाए हुए बड़े जोर-शोर से चिंघाड़ते, गड़गड़ाते और गर्जते थे, और अंकुश खाकर विंध्याचल की भोंति बड़े चले आते थे, मानो पर्वत ही सरके चले आते हैं। ऐसे हाथियों पर बाजू-से-बाजू सटाकर बड़े-बड़े वीर राजा लोग साक्षात् देवता से प्रतीत होते थे। वैरखों और कलमियों से सजे हुए हौदे, अम्बारी विमान से मालूम होते थे, जिन पर लटकते मोतियों के गुच्छे बिजली से चमक रहे थे। उनके कुम्भ पर जरतारी और रेशमी सिरी पड़ी थी, और भुसुण्ड नाना प्रकार के रङ्ग-विरङ्गे बेल-बूटों से रँगे हुए थे।



१०

राजा ने मीर कमाम और जमामगवाँ को हुक्म दिया कि तुम आगे बढ़कर पृथ्वीराज को जीता पकड़ लाओ, एक भी मरने न पावे। यह सुनकर कोतवाल रावण ने हाथ जोड़ विनय की—“पृथ्वीनाथ, मीर-दल को आज्ञा हुई, सो ठीक है, पर राय वनसिंह और राव वनवीर तथा केहरी कंठीर को भी आज्ञा दीजिए कि ये भी पसर करें। इनका सा वीर क्षत्रिय दूसरा नहीं है।” राजा ने कहा—“अच्छा, इन्हें भी भेजो, सबको जीता पकड़ लावें।” रावण ने कहा “महाराज, यह ठीक नहीं। यह वह पृथ्वीराज और उनके सामन्त हैं, जिनके नाम से दुनिया-भर काँपती है, उन्हें जीता पकड़ लाना हँसी-ठट्टा नहीं।”

जयचन्द ने उसकी न सुन मीरों को आगे बढ़ने का हुक्म दिया, तब रावण फिर बोला—“पृथ्वीनाथ, यदि ऐसा ही है, तो आप स्वयं आगे बढ़िए, और कमर कसिए।” इस पर जयचन्द ने झुल्लाकर कहा—

“अरे कटुवादी, क्यों हठ करता है; चुप रह, तेरा काम चोर पकड़ना है, युद्ध और राजनीति बघारना नहीं।”

रावण ने कहा—“सत्य है महाराज, जब यज्ञ विध्वंस हुआ, तब भी कुछ न चेते ! अब घर से बेटी हरण किये जाता है, तब भी आप सन्देशों से खेती कराते हैं। महाराज, यह चूकने का समय नहीं है।”

राजा ने क्रोध से कहा—“चुप रहो, मुँह में लगाम दो, और देखो, क्या करते हैं !”

राजा का संकेत पा साठ हजार मीरजादे खान खुरासानी खाँडे ले लेकर आगे बढ़े। वह दो-दो दुम्बे खानेवाले थे, इनकी गोपड़ियों पर थोड़े-थोड़े बाल थे। वे भोलभाल अंगा और सुथना पहने, गीध की-सी आँखें और मेढे के-से मुँहवाले बड़े भयानक योद्धा थे। इनके पीछे बाघसिंह बघेला और मेघसिंह दल-बल-सहित बढ़े।

रावण ने फिर कहा—“स्वामिन्, आप सामन्तों और पृथ्वीराज को जीते पकड़ने का हठ त्याग दें, इसमें सब फौज कट मरेगी। युद्ध की आज्ञा दें, नहीं तो व्याज के लिए मूल भी जायगा। वे सबको मार-काट निकल जायँगे, और आप हाथ मलते रह जायँगे।” केहरी कंठीर और कन्द कमध्वज ने भी इसका समर्थन किया और कहा—“महाराज, युद्ध की आज्ञा दीजिए।” इस पर जयचन्द्र का संकेत पा केहरी कंठीर और कान्ह कमध्वज जुहार कर आगे बढ़े।

इस प्रकार जब यह प्रबल दल आगे बढ़ा, तो अल्ला-अल्ला का शोर सुनकर हर-हर करता गोइन्दराय गहलौत आगे बढ़ घोड़े से उतर पड़ा, और दोनों हाथों में दो तलवारें लेकर पिल पड़ा। इस वीर को मार से अल्ला-अल्ला के स्थान पर हाय-हाय होने लगा। बड़े-बड़े मीरजादे कट-कटकर पट गए। एक प्रहर के बाद अन्त में मीर हमामखाँ का सामना गोइन्दराय से हो गया। उसने तोमर का वार करना चाहा कि

कमान में सिर बिधाकर जमीन में गिरा दें, पर वह छटककर दूर जा खड़ा हुआ, और हमाम मीर पर सिंह की भौंति झपटा, पर मीर ने ताक के उसके कलेजे में नेजा पार कर दिया। इस पर गोइन्दराय केवल कुन्त का एक बार कर सका कि मीर ने तलवार से उसका मिर उड़ा दिया। मुण्ड तो गिर गया, पर रुण्ड ने कटार का बार कर चार मीर और मारे। इतने में आरसग्वों ने जवूर ताककर कलेजे में मारा, तब रुण्ड धरती पर गिरा।

गोइन्दराय को गिरते देख इधर से पज्जुराय ने बिल्ली खाली, उसके साथ केहराय, कंठीर प्रमार, पापीराय पड़िहाग, भोयाचन्द चदेल, कच्चाराय चालुक्य और नरसिंहराय दायमा, ये छः सामन्त पैदल चले। फिर ग्वूव तलवार, कटार, बिलुआ, खाँड़ें, बर्छी, सेल, शक्ति, साँग की ठनाठन रही। पज्जुराय ने सारी खुरासान-सेना को काटकर ढेर कर दिया। अन्त में उसका सिर कटकर धरती पर आ गिरा। उसके धड़ ने भी गिरते-गिरते बहुतों को मारा। अब दिन का तीसरा पहर बीत गया था, तब बाघराय बघेला और मीर कमोद सामन्तों पर दूट पड़े। अब चन्द पुण्डीर दुधारा लेकर ललकार उठा। ऐसे हाथ मारे कि रक्त की नदी बह चली, और लाशों के ढेर लग गए। चीत्कार और हाय-हाय से कान फट गए। अन्त में कमोद के सामने जा उसने सेल चलाई, उधर से उसने भाले का भरपूर बार किया, जिससे दोनों एक साथ गिरे।

उनके गिरते ही इधर से कूरम्भराय ने और उधर से बाघराय बघेले ने बाने संभाले। दोनों लंगूर से उछलकर एक दूसरे के सामने आए। चार घड़ी दोनों ने तलवार चलाई। जब दोनों की तलवारें दूट गईं, तब दोनों कटार ले पिल पड़े, और एक दूसरे के उदर को चीरफाड़ कर भूमत हुए अपने ही रक्त के गारे में गिर गए। अब सेरन मीर और पज्जुराय से मुठभेड़ हुई। मुठभेड़ होते ही मीर ने

उसके कलेजे में नेज़ा पेल दिया, पर उसने गिरते-गिरते तलवार से मीर के दो टुकड़े कर दिए ।

अब नरसिंहराय दायमा सम्मुख आया, और घड़ी-भर के लिए उसने लहाशों के अम्बार लगा दिए । अन्त में काम आया । सिर कटने पर भी इसके कवन्ध ने बड़े वार किए । अब कुरम्भराय के भाई पाल्हसिंह ने खेत में पैर दिए । ऐसी कटा की कि पंग-दल में भगदड़ मच गई, और पृथ्वीराज का मैदान साफ कर दिया । अन्त में पहर-भर युद्ध कर वह भी टूक-टूक हो गिरा । अब पञ्जूनराय का पुत्र चार तलवार बाँध आगे बढ़ा । कुरम्भ-कुल के दो-चार भाई-बेटे उसके साथ थे, वे भी चार-चार तलवारें लेकर आगे आए । इस किशोर-वय ने बढ़-बढ़कर वे हाथ किए कि शत्रु-दल से भी बाह-बाह की ध्वनि आने लगी । उसका घोड़ा युद्ध-क्षेत्र में ऐसा दौड़ रहा था, जैसे मछली जल में दौड़ती है । वह साथियों-सहित पंग-दल में घुस गया, और साथियों से बोला—“यारों मरना ही है, तो ऐसी मौत मरें कि लोग भी जानें ।” यह कह उसने दोनों हाथों से दुधारे के वार किए, और वीर कट-कटकर गिरने लगे । धायल पञ्जूनराय पड़ा-पड़ा पुत्र के पराक्रम को सहाहता था । उसके शरीर पर अस्सी घाव लगे, तब मूर्च्छित होकर गिर गया ।

अब सूर्य भी अस्त हो चले, पर रावण ने हाथियों को आगे बढ़ाया । यह देख नरनाह कान्ह अपनी भयङ्कर तलवार ले आगे बढ़े । उन्होंने एकदम हाथियों का संहार करना प्रारम्भ कर दिया । उधर सारङ्गराय सोलंकी पैदलों के मोर्चे पर गया । कान्ह कभी हाथी के कपाल को पलीता-सा फाड़ देता, कभी हृदय में सेल मारता, कभी खट से सूँड़ काटता, और कभी दोनों दाँत पकड़ मूली से उखाड़ लेता था । कान्ह के घाव बचाकर हाथी मेघ की भाँति गर्जते और रेल-पेल करते भाग चले । उनके घावों से रक्त इस तरह भरता, जैसे

कजल के पहाड़ से गेरू का भरना भरे। रक्त का समुद्र भर गया, उसमें कटी हुई हाथियों को सूँड़ मगर-सी और ढालें कछुए-सी उतरानी थीं। उधर सारंगराय ने खोपड़ियों के ठट्ट लगाए थे। उसका हाथ सिर पर पड़ता, तो सिर खरबूजा-सा कट जाता और भंडार पर हाथ लगने से हलुआ-सा बिथर जाता था। अन्त में एकवारगी ही सेना उस पर टूट पड़ी, और सारंगराय खेत रहे। उधर कान्ह के पराक्रम से विचलित होकर हाथियों ने पंग-दल को कुचल डाला। भयभीत हो सेना भाग चली, और अन्धकार होने से युद्ध बन्द हो गया। यह युद्ध अष्टमी के दिन हुआ, जिसमें पंग-दल के सात हजार सिपाही, दो हजार घोड़े और सैकड़ों हाथी मारे गए। पृथ्वीराज के सात सामन्त वहाँ खेत रहे। रात को युद्ध बन्द होने पर जब लाशें उठाई गईं, और सामन्तों के शव लाकर रखे गए, तब पृथ्वीराज रोते हुए पञ्जूनराय से लिपट गए। गोइन्दराय अभी सिसकता था। पृथ्वीराज पछुता-पछुताकर हाथ मलते और जैतराव दलगंजन चामुंडराय को याद करते थे, जो दिल्ली में बेड़ी पहने पड़ा था।

निदान, ब्रह्म बदल, कमर खोल, सब वीर एकत्र हो बैठे, और सलाह करने लगे। एक ने कहा—“भाई राजा ने तो ऐसा काम किया कि न धरती के रहे, न आसमान के।” कवि चन्द ने कहा—“जो हुआ सो हुआ अब राजा का बेदाग निकाला जाय। आप लोग पंग-दल को दलन कर अनुगुण कीर्ति लाभ करें।” इस प्रकार सलाह पक्की कर सबने गुरुराम को काका कान्ह के पास भेजा।

कान्ह पृथ्वीराज के पलंग के पहरे पर बैठे थे। पुरोहित ने उनसे कहा—“रात तो खैर गई, पर सबेरे क्या होगा?” कान्ह ने झल्लाकर कहा—“इसके लिये सिर मारो तुम और भटवा, जिसके साथ राजा आया है। इस असुर-बुद्धि ने भाट के कहे में आकर वह काम किया,

जो कहे नहीं बनता है। ईश्वर ही इस औघट नाव को पार लगावे। हमसे अब क्या पूछते हो, हमारे तो दोनों हाथ में लड्डू हैं।”

कान्ह की बात सुनकर संयोगिता ने राजा को जगा दिया। राजा क्रोध से काँपते हुए बाहर आए, और जहाँ सब बैठे थे, वहाँ जा बैठे।

तब सामंतों ने कहा—“हमने यह सलाह पक्की की है कि आप रानी को लेकर दिल्ली पधारें, और हम एक-एक कर पंग का मोरचा रोकेँ।”

सुनकर पृथ्वीराज गुस्से से बोले—“क्या तुम्हारी अक्ल पर पत्थर पड़े हैं, जो मुझे मरने से डराते हो। काकाजी, आप इस घमंड में भूले हो कि आपने भीमदेव को मारा है? आज आप मुझे आश्रित बनाया चाहते हो।”

सामंतों ने कहा—“महाराज, शूर-वीर सदा स्वामी की शरण में रहते हैं, और बनी-बिगड़ी में उनका आसरा पकड़ते हैं, पर युद्ध में उन्हें स्वामी की रक्षा करनी पड़ती है।”

पृथ्वीराज ने चिढ़कर कहा—“मैंने देश-भर के दुर्ग जीते हैं, नौ खंड पृथ्वी पर मेरा यश जाहिर है, तब क्या आज मैं भाग जाऊँ? देखूँ, कौन भागता है।” सामंतों ने कहा—“यह बात नहीं है। महाराज, मेह जल से ही बनते हैं और उनसे जल ही बरसता है। आपका यश अखंड है, पर इस समय मौका और है। आप रानीसहित पधारिए, हम शत्रु से निबट लेंगे। स्वामी यदि कुछ अच्छा-बुरा हो गया, तो शत्रु ताली पीटेंगे, और बात बनकर बिगड़ जायगी। हम लोग सिर बंधकर भी आपका अनिष्ट नहीं होने देंगे।”

तब पृथ्वीराज बोले—“भाइयो, मुझे तुम्हारी करनी पर पूरा-पूरा भरोसा है, पर सुख-दुःख अपनी करनी के होते हैं तुम पंग-सेना से लड़ते-लड़ते मर जाओ, उसके बाद मेरा कुछ हो भी, तो तुम्हें कोई क्या कह सकता है। मरना-मारना तो क्षत्री का धर्म है। यदि काम-

आए, तो मंगल-कार्य के समय वीर माताएँ हमारी करनी के गीत गावेंगी, और अन्त उछारेंगी; पर जां भाग गए, तो सेजों पर पड़ी कामिनी भी वृणा करेंगी। आह, जिस सुकीर्ति के हेतु भीष्म ने मृत्यु माँगी, दधीचि ने हाड़ दिए, दुर्योधन ने प्राण दिए, दिलीप ने तन का मांस दिया, राम वनवासों दृष्ट, क्या पृथ्वीराज उस सुकीर्ति से मुँह फेर जायँगे, कभी नहीं, चाहे सहस्रों वर्ष भी क्यों न जिऊँ।”

सामंतों ने कहा—“धन्य महाराज, वही तो हम कहते हैं, आप कृपा कर दिल्ली जाइए, हम पंग-दल को पाटकर कट मरेंगे।” पृथ्वीराज ने रिसाकर कहा—“अरे सामंतों, बार-बार वही बात क्यों कहते हो, क्या मैं तुम्हें मृत्यु-मुग्ध में छोड़ स्त्री का ले भागूँ? तुम्हीं क्षत्रिय हो, तुम्हें ही आन है, मैं कुछ भी न हुआ। यहाँ स्वामी-मेवक कोई नहीं, एक क्षत्रिय तुम हो, एक क्षत्रिय मैं हूँ। दिल्ली को जाऊँगा, तो पङ्क-दल को तहस-नहस करके, नहीं तो नहीं, एक बार नहीं और हजार बार नहीं। अचल ध्रुव चल जाय, समुद्र सूख जाय, चन्द्र-सूर्य टर जायँ, पर पृथ्वीराज जयचन्द्र का पीठ दिखाकर दिल्ली जानेवाला नहीं।”

यह सुनकर सामन्त सन्न रह गए। पृथ्वीराज उठकर चले गए, तब जामराय यादव ने नरनाह कान्ह से कहा—“भाई सवेरे जां हांगा देखा जायगा। इस समय राजा के मुहाग की रात्रि का तो प्रबन्ध करो। जहाँ घरनी, वहाँ घर। ब्याह तो सबके होते ही हैं, पर यह ब्याह अनोखा है।”

कान्ह ने सब सैनिकों को हथियारों से दुरुस्त होकर पृथ्वीराज के शिविर के चारों ओर चौकस चौकन्ना रहने और बारह सामन्तों को घोड़े पर सवार होकर चौगिर्द गश्त करने की आज्ञा दी, और जामराय से कहा—“राजा से तुम्हीं कहो, मैं उससे कुछ न बोलूँगा, उसकी मति मारी गई है, वह जो चाहे सो करे, हम तो शरीर में

दम रहते उसकी रक्षा और शत्रुओं का नाश करेंगे, आगे आग जाने और लुहार ।”

कान्ह को क्रुद्ध जान जामराय उनके पैरों पर गिर पड़ा, और बोला—“वस, वस आप और कुछ न कहें, मैं राजा के पास जाता हूँ ।” फिर वह राजा के पास जाकर बोला—“राजन् आज ब्याह की पहली रात है, मुहाग-रात आपको शुभ हो । जाइए, सेजों पर विश्राम कीजिए, इधर मय चौकस चौकचे हैं ।” पृथ्वीराज कुछ न कह कुल्ला कर पान का बौड़ा चबा शयन करने गए, और सामन्तगणों ने चौकी-पहरे और प्रबन्ध में रात काटी । पृथ्वीराज ने उस सहस्रों बहुमूल्य प्राणों के मोल की बधू को हृदय से लगाया ।

दूसरे दिन चार घड़ी रात रहते कवि चन्द ने विरदावली अलापी, जिसे सुन पृथ्वीराज चट-से उठ बैठे और आज्ञा दी कि स्नान के लिए गङ्गा-जल लाया जाय । पेसादार गङ्गा-जल लाया, तब स्नान पूजा कर, वस्त्र बदल हथियार कसे । अन्य सामन्त भी जङ्गी अताने-बताने से सज-कर ब्यूह-बद्ध हो हाजिर हुए ।

इतने ही में पङ्क-सेना में निसान, ढाल, शहनाई, भेरी और नफीरी बजने लगी । यह देख पृथ्वीराज ने रकाव में पैर सिया, तब कवि चन्द ने उन्हें आशीर्वाद दिया । संयोगिता भी पृथ्वीराज का हाथ पकड़ राजा के पैर-पर-पैर रख घाड़ के पुटे पर जा बैठी । अब ब्यूह के बीच हो पृथ्वीराज ने वाग उठाई ।

उस दिन नवमी रविवार था, मेष का सूर्य और सिंह का चन्द्रमा था; जङ्ग-योग, चित्रा योगिनी और रोहिणी नक्षत्र था । मङ्गल-बुद्ध तीसरे थे, केंद्र का बृहस्पति था; सूर्य, चन्द्रमा और शुक्र गोचर में पड़ते थे, और राहु पर उनकी पूर्ण दृष्टि थी ।

देखते-ही-देखते पङ्क-दल ने इन्हें घेर लिया । इस दिन हरावल में दो हजार मतवाले हाथी थे, जिन पर नारगौर, जम्बूर और हथनार

सजे थे। उनके पीछे साठ हजार घुड़सवार और अनन्त पैदल थे। सैन्य का संचालन स्वयं जयचन्द कर रहे थे। आमना-सामना होते ही पृथ्वीराज ने बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी। एक-एक बाण में सात-सात हाथी गिरने लगे। अब चार हजार जवान नङ्गी तलवार लेकर दौड़ पड़े। यह देख सौखला शूर तलवार ले टूट पड़ा, और उसने एक पहर भारी लोहा लिया। पङ्क-सेना घबड़ाकर पीछे हट गई। बहुतेरे योद्धा कट गिरे। एक दूसरे पर खड़क-खड़क कर हजारों तेगा-तलवारों और सेलें टूट-फूट कर धूल में मिल गईं। पहर-भर बाद उद्दिमराय सुस्त पड़ने लगे, तब सौखला शूर ने बढ़-बढ़कर हाथ मारे। घड़ी-भर में ऊँट, हाथी, घोड़ा, सिपाही कट-कटकर अम्बार लग गया। अन्त में दोनों वीर खेत रहे। उधर वनसिंह सरनाम सरदार खेत रहा। उसने सौ सामन्तों के नाकों दम कर रक्खा था। उसकी मृत्यु सुन जयचन्द छाती पर हाथ मार कर रह गए। उधर अबकाश पा चौहान आगे बढ़ चले।

जयचन्द ने फिर से व्यूह साधा। सोलह हाथी और सात हजार मुसलमान सवार आगे की सेना में, आठ हाथी और चार हजार सेना पहाड़खों के साथ बाईं ओर और आठ हाथी-सहित अपनी निजी सेना दाहिनी ओर करके चन्देरी के चन्देल राजा को बाईं ओर से धावा करने की आज्ञा दी। यह देख गमककर वह दाहिनी तरफ आ गया। इस बीच पृथ्वीराज दस कोस मैदान मार ले गए, यहाँ फिर जमकर युद्ध हुआ। जयचन्द ने हाथ उठाकर जो पुकार लगाई कि पकड़ो, तो पृथ्वीराज ने धनुष पर बाण चढ़ाकर कहा—“संयोगिता, मैं तेरे पिता को इस बाण से मारता हूँ,” तब उसने हाथ जोड़कर कहा—“नहीं, ऐसा न करिए।” तब पृथ्वीराज ने उसी बाण से घोड़े को मार गिराया। जयचन्द खिसियाना हो, सफेद हाथी पर बैठ, क्रुद्ध होकर अपनी सेना को ललकारता बढ़ा, तब पाँच सामन्तों ने आगे

वढ़कर अष्टदल कमल के ब्यूह से खड़े हो पंग-सेना को ध्वंस करना प्रारम्भ कर दिया। पंग-सेना भी टूट पड़ी। दँतारे दुरद बहुर से जुट पड़े, और हीं-हीं हींसते, ठीं-ठीं-ठीं देते, फुर-फुर-फुर करते घोड़े चारों ओर से उमड़ आए। वे बचाव की आशा त्याग-हियाव और चाव से दाँव-पर-दाँव किए जाते थे, पर हटने का भाव भी न लाते थे। अन्त में वे पाँचों भी पंचतत्व को प्राप्त हुए। अब अठारह घड़ी दिन व्यतीत हो चुका था। पृथ्वीराज और भी मैदान मार ले गए। तब कैहरा कंठीर पैदलों को लेकर भूषटा, पर पृथ्वीराज ने बाण वर्षाकर उस दल को तितर बितर कर दिया। घोड़े बाण के घाव खा मछली से तड़पने लगे। फिर भी पंग-दल तलवार चमकाता पृथ्वीराज पर घिर आया। पृथ्वीराज की छाती में एक घाव बैठ गया, तब उन्होंने तमककर तलवार ली, और भुट्टे से सिर उड़ाने शुरू कर दिए। लाशों पर पैर रखते, घोड़ा कुदाते वह आगे बढ़ चले। इस प्रकार वह दिन भी बीता, रात्रि हुई, दोनों ओर की सेनाएँ लौटीं। सामन्तों ने कहा—“महाराज, अब भी आप दिल्ली चले जायें। देखिये, दो घाव आपको, दो घोड़े को और एक संयोगिता को लगा, यह हमारे देखते दुःख की बात है। हम चरण छूकर प्रार्थना करते हैं।”

पृथ्वीराज ने एक न सुनी, और हथियार कसे ही विश्राम करने लगे। आधी रात बीते चाँदनी चढ़ते ही राव रैसालराय ने भीम वेग से आक्रमण किया। दस प्रधान छत्रधारी राजे उसके साथ थे। यह देख सामन्तगण चौकन्ने हो घोड़ों पर कूद बैठे। पृथ्वीराज ने प्यारी रानी को उठाकर घोड़े पर बैठाया, और खुद भी सवार हो गए, और लगे बाण वर्षा करने। इधर आतताई ने भारीलोहा लिया, और सामन्तगण भी प्राणों का मोह छोड़ हाथ छोड़ने लगे। आतताई की सोंग ने हाथी-घोड़ों को मार-मारकर अठार लगा दिया। पङ्क-सेना घबराकर

भाग चली। रैसलराय साँग खा ठौर हुए, और अवसर पा पृथ्वीराज ने साँग उठाई।

अब अजेय शंखध्वनि एक हजार साधु हिमालय के समान अचल होकर डट गए, और अतुल बलधारी साधु का तेजबल देखकर सामन्तगण थर्रा उठे। वे नगाड़े बजाते, हर-हर करते, सिर पर मोरछल साजे बरसाती नदी की भाँति बढ़ आ रहे थे। उन्हें बढ़ता देख निडूँडुरराय कमध्वज, जैतराय प्रमार और भोंहाराय चन्देल ने चोपकर आगे कदम बढ़ाया। जुड़ते ही भोंहाराय का सिर भुट्टा सा उड़ा दिया। अब दस हजार मुसलमानों की नवीन सेना ने बगली देकर आक्रमण किया। सामन्तों ने पलटकर उनका वेग रोका। पराक्रमी पृथ्वीराज अटल खड़ा बाण वर्षा रहे थे। इस प्रकार दिन निकला, दुपहर हुई, और फिर सन्ध्या हुई। दोनों दल थकावट से चूर-चूर हो पीछे फिरे।

पर सामन्तों को चैन न था, किसी ने भी कमर नहीं खोली। सब कोई गोष्ठी करने बैठ गए। एक ने कहा—“भाईयो, चौबीस सामन्त तो खप चुके, पर अभी बाजी हाथ है। आगे क्या जानें, हाथी छूटे या घोड़ा बिचले। जैसे बने, अब राजा को निकाल देना चाहिए, नहीं, जो राजा जयचन्द के हाथ लग गए, तो सब धूल में मिल जायगा।”

पृथ्वीराज ने गुस्सा होकर कहा—“अरे सामन्तों, तुम फिर वही पुराना पचड़ा ले बैठे। इस समय तो साथ में तुम हो, यदि अकेला होता, तब भी पीठ न देता। अरे! मरना तो एक ही बार है, तब न मरे अब सही, पर शत्रु से पीठ दिखाकर क्या मरना।”

यह संयोगिता का संयोग, ऐसा पङ्क-सेना का जोर और इस प्रकार सामन्तों का कहना, पर बाह रे पृथ्वीराज, वीर तो तुम ही हुए, न सुना और न सुना।

इस तरह कहा-सुनी में रात व्यतीत कर पहर रात रहे सामन्तों ने फिर से कमर कसी और घोड़ों पर सवार हुए। पङ्क-सेना में भी निसान वज उठे। जयचन्द ने कहा—“आज यदि पृथ्वीराज को न पकड़ा, तो प्राण त्याग दूँगा।” यह कह उन्होंने व्यूह रचा। इधर पृथ्वीराज भी सामन्तों सहित व्यूह-वद्ध हुए। सबसे आगे जैतराय, उसके पीछे काका कान्ह और उनके पीछे संयोगिता का लिए पृथ्वीराज। इनके पीछे भाई-बन्धुओं-सहित अजमेर का किलेदार गोदिया सरदार।

इस बार इस चतुराई से हाथ चले कि पङ्क-दल को प्रवल आक्रमण का अवसर ही न मिला। पृथ्वीराज बढ़ जाते थे। दो घड़ी दिन चढ़ते-चढ़ते पङ्क-दल का व्यूह विंगर गया। यह देख जयचन्द ने वीर मखवाल से कहा—“रे मूर्ख, तू नित्य एक भैसा मौस खाता और तीस मन लोहा बाँधता है, देखता है कि शत्रु निकला जा रहा है, पर कुछ नहीं करता।” यह सुन तेगा सँभाल वह हाली से कूद पड़ा, और अन्धाधुन्ध मार करता यह चिल्लाता सामन्तों में घुस गया—“कहाँ है पृथ्वीराज, मेरे सम्मुख आवे।” राजा तड़पकर उसके आगे आने ही को थे कि रणवीर परिहार ने आगे अड़कर कहा—“अरे पेटू, पहले मुझसे निबट।” यह कह दो कटार उसके पेट में भोंक दी। उसने भी उलटकर जो हाथ मारा, तो रणवीर के दो हाँ गए। इतने में भीमराय यादव ने बढ़कर उड़कर उसका सिर भुट्टा-सा उड़ा दिया।

आज दो दिन, दो रात से बराबर युद्ध चल रहा था। पृथ्वीराज को जीते-जी दिल्ली पहुँचने की आशा न थी, और न जयचन्द को पृथ्वीराज को पकड़ लेने की। योद्धा हाथी, घोड़े, सभी थक गए थे। हथियारों की धार भर गई थी, पृथ्वीराज का मुख धूल, पसीना, थकान से भँवरा हो गया था, और संयोगिता की नस-नस मानो टूट

रही थी। संयोगिता मन-ही-मन पृथ्वीराज के मुख का पसीना पोंछना चाहती, और पृथ्वीराज उस सुकुमारी को घनघोर युद्ध में चपल घोड़े की पीठ पर लिए मर्माहत होते थे, पर क्या करें, समय ही ऐसा था।

दंपति की यह दशा देख अचलेशराय खींची ने चन्द कवि से कहा—“देखो, दो दिन तो कुशल से बीते, पर आज की लाज रखैया भगवान् है। काका कान्ह को समझा दो, और आप दोनों उन्हें लेकर दिल्ली कूच कर दो। इस घमासान में अब तक उन-चास सामंत काम आ चुके हैं, पर अब पद-पद पर विपत्ति बनी है।” तब कवि ने राजा के पास आकर कहा—“धन्य महाराज, जैसे आपने किया, ऐसा कोई न करेगा। किस कवि की ताकत हैं कि आपका यश वर्णन करे। आपने वीरता की लाज रख ली, अब चलिए, दिल्ली चलकर आनंद कीजिए, और सुकीर्ति का बखान सुनिए।” यह कहकर कवि ने घोड़े की बाग पकड़ ली, और कहा—

“चौहान और कमध्वज रूपी दो वंशों में बँधी पुराने संस्कार की बट पर चढ़कर हे नटवर चौहान ! तूने अच्छा कर्तव्य दिखाया, आपकी सुरत-साधना के लिए सहस्रों भेरी, ढोल और घंटे बज रहे हैं। आपने सुयश और प्रिया को भी पा लिया, अब तो सकुशल रास्ते पर उतर चलिए।” ये युक्ति-भरी बातें सुन पृथ्वीराज दिल्ली चलने को प्रस्तुत हो गए।

इतने में पंग-दल ने फिर शहजोर होकर आक्रमण किया। यह देख सामंत तो पंग-दल पर टूट पड़े, और पृथ्वीराज गंगाजी में उतर पड़े। उन्होंने संयोगिता-सहित स्नान किया, और फिर अस्त्र शस्त्र लेकर सवार हो सामंत-समूह में आ मिले। तब तक पहर दिन चढ़ आया, और पांच सामंत और खेत रहे। पृथ्वीराज को दिल्ली की ओर बाग मोड़ते देख सामंत प्रसन्न हुए, और पंगराज को रोकने का

मोर्चा बाँधने लगे। पर जयचन्द ने यह देख ललकार कर कहा—“देखो, वह पृथ्वीराज जा रहा है, पकड़ो जाने न पावे।” यह सुनते ही मारुफखॉ अपनी दस हजार सेना लेकर लपका, पर पृथ्वीराज उस प्रबल सेना को चीरते साफ निकल गए। इधर सामंतों ने प्राण हथेली पर रख दिए। कुछ घड़ी के अरसे ही में सामंतों में वीरसिंह सोलंकी और मारुफखॉ दोनों ही कट गिरे।

परन्तु राजा का निकल भागना सहज न था। पीछे समुद्र के समान सेना उमड़ी आती थी, और आगे पद-पद पर चौकियाँ नाके रोके पड़ी थीं। अब सामंतों ने सलाह कर बलभद्रराय को तो मोर्चे पर छोड़ा और शेष सामंत राजा के अगल-बगल तलवारें फेंकते चले। यह देख जयचन्द ने दो मीर पहलवानों को पाँच हजार सेना लेकर राजा का पीछा करने का हुक्म दिया, तब बलभद्रराय घोड़ा उछाल कर विजली की तरह उस यवन योद्धा के हाथी पर जा धमका, और जब तक वह सँभले मूठ तक कटार उसके पंजों में घुसेड़ दी, और बाएँ हाथ से दाढ़ी पकड़ खट-से सिर उतार लिया। यह देख अल्ला-अल्ला करता उसका भाई और असंख्य सेना बलभद्र पर टूट पड़ी। मीरमल्ल पैदल होकर बलभद्र के सम्मुख चला। कठिन समय देख हरिसिंह ने राजा को प्रणाम किया और घोड़ा मोड़ पीछे लौटा। बीच ही में मीर को रोककर खाँड़े का भरपूर हाथ दिया, पर मीर भी भारी योद्धा था, घड़ी-भर दोनों की ऐसी ठनी कि योद्धा स्तंभित हो देखते रह गए। अंत में तलवारें फेंक दोनों भिड़ गए, और घूँसे और लातों से दोनों का दम टूटा। हरिसिंह के मोर्चा बाँधने पर पृथ्वीराज चार कोस निकल गए।

जयचन्द ने अकुलाकर वीरमराय को कई हजार सेना दे पृथ्वीराज पर धावा करने को भेजा। वीरमराय लाल ध्वजा उड़ाता हुआ प्रबल वेग से चढ़ दौड़ा। जब पृथ्वीराज के निकट फिर विपत्ति

के बादल आए, तो कनकराय खुबंशी ने राजा को प्रणाम कर कहा—“राजन्, अब मैं आपसे सदा के लिये बिदा होता हूँ, भूल-चूक माफ हो।” यह कह शस्त्र सँभाल वह पीछे फिरा, और राजा को आगे बढ़ने का संकेत किया। यह महावीर जब पंग-दल पर पिला, तो भूत-प्रेत, योगिनी ताल दे देकर नाचने लगे। वह बड़गुजर बीर खाँड़े का अप्रतिम धनी था। उसने लोथों के अंवार लगा दिए, उसने पहर-भर युद्ध किया, और पंग-दल सहमकर रुक गया। वह शत्रुओं को चीरता हुआ वीरम के सम्मुख आ ललकारा। वीरम ने खोपड़े पर गुर्ज मारा। गुर्ज का घाव खा उसने उछलकर वीरम के दोनों बाहु एक ही हाथ से काट डाले। बाहु कट जाने पर वीरम काल की भाँति मुँह बाकर उस पर दौड़ा, तब बड़गुजर ने बाएँ हाथ से चोटी पकड़ उसका खट से सिर काट लिया। यह देख पंग-सेना के सहस्रों योद्धा उस पर टूट पड़े, और वह लांथो के अंवार लगा तिल-तिल होकर कट मरा। कनकराय ने तीन हजार सिपाही मारे। इस बीच में पृथ्वीराज छः कोस धरती दवा गए।

कनकराय के गिरते ही पंग-सेना ले जयचन्द स्वयं आगे बढ़े। यह देख पृथ्वीराज ने निड्डुराय की ओर देखा। निड्डुराय जयचन्द का भाई था। उसे देख जयचन्द क्रोध से भभक पड़े। उसने निड्डुराय के छोटे भाई बलिभद्र को चार कमध्वज सरदारों-सहित भेजकर कहा—“देखो, वह विभीषण आ रहा है, जाने न पाए।”

चारों सरदारों ने सेना के चार विभाग कर मोर्चे बाँध चौकी बनाई, और बलिभद्र सेना बढ़ा आगे चला। सामने छोटे भाई को देख निड्डुराय लाल आखें किए पैदल उतर पैतरा बदल खड़ा हो गया। उस तेजस्वी के माथे का टोप सूर्य के समान चमक रहा था, और बख्तर बिजली के समान दिप रहा था। उसने मोर्चा बाँध बाणों की अविरल वर्षा शुरू कर दी, जिससे बिंध-बिंधकर पंग-दल के

हाथी चिंघाड़ते हुए पीछे भागने और सेना को कुचलने लगे। उसने ऐसी बाण-वर्षा की कि दो घड़ी को तो पंग-दल आगे बढ़ने ही से रुक गया, पर अन्त में पंग-दल ने उसे घेरकर उसकी कमान काट डाली। तब वह वीर तलवार लेकर हाथ दिखाने लगा। उसके पैरों-तले लोथों के ढेर थे। सेना का ऐसा विध्वंस देखकर बलभद्रराय स्वयं घोड़ा बढ़ाकर उसके सामने आया। आँखें चार हाँते ही दोनों भाइयों के हृदय द्रवित हो गए, और आँखों से आँसुओं की धार बह चली। बलभद्रराय ने भाई का प्रणाम किया, और घोड़े से उतर पड़ा। क्षणभर में दोनों की आँखें सूख गईं। स्वामी-सेवक की मर्यादा दोनों ने रक्खी, दोनों भिड़ गए। तलवार, कटार, विष्णुआ जब तक हाथ में रहे, उनसे लड़े; अन्त में गुथ गए, और रक्त में लथपथ हो दोनों माँस के लोथड़े के समान भूमि पर गिर गए। निड्डुरराय का देहान्त हाँते ही उसके शरीर से ऐसी सुगन्ध निकली, जिससे एकतालिस कोस तक की धरती सुरभित हो गई।

कमध्वज-कुल-कमल-दिवाकर निड्डुरराय के शरीर को धूल में पड़ा देख जयचन्द ने अपनी कमर का दुपट्टा खोल ढाँक दिया, और रोकर बोले—“हाय ! क्षत्रिय-कुल की लीक, मेरे समुद्र-समान दल से पृथ्वीराज को पार उतारनेवाली नैया भैया निड्डुरराय, आज तू भी बेभूल सो गया ?”

यह कह जयचन्द दल ले आगे बढ़े। निड्डुरराय के मोर्चे में पृथ्वीराज आठ कोस निकल गए थे। अब जयचन्द अधीर हो सारी सेना ले पृथ्वीराज पर पिल पड़े। पंग-दल को टिड्डी-दल की भोंति रङ्ग-बिरङ्गे झंडे फहराते आते देख नरनाह कान्ह ने अपने शस्त्र संभाले। कान्ह को तैयार होते देख पृथ्वीराज का कलेजा हिल गया। पर कान्ह ने कहा—“पृथ्वीराज, जो आया है, वह जायेगा, क्या राजा, क्या रङ्ग।”

इतने में तो पंग-दल आ ही धमका, और ऐसा प्रतीत हुआ कि यह घड़ी न टली, तो धिर जाना ही पड़ेगा। तब कान्ह का सेवक धग्गनराय मैदान में दौड़ पड़ा। उस अकेले पर हजारों हाथ पड़ने लगे। पर बाह रे वीर, उसने वे हाथ दिखाए, कि लोग दङ्ग रह गए। अन्त में उसका घोड़ा घाव खाकर गिर गया, तब वह पैदल होकर लड़ने लगा। अब उसके पैर कट गए, तो वह बिच्छू होकर खसक-खसककर पैर खींच-खींच शत्रुओं को गिराने और मारने लगा। अन्त में उसके हाथ भी कट गए और सिर भी काट डाला गया।

छुगन के मार्च पर पृथ्वीराज ढाई कोस आगे बढ़ आए। अब भूखे सिंह के समान क्रुद्ध, खरे खेतवारे पट्टन को विजय करनेवाले पट्टन घोड़े पर सवार हो, हाथ में प्रबल-काल की जाल-सी जाज्वल्यमान असील लम्बी-पूरी नराजी और जबरजस्त गुरज लिए नरनाह मैदान में आए। पट्टन के एड़ लगाते ही वह जोर से ठींकर कर उड़ चला। अब तो पङ्ग-दल में हाहाकार मच गया। काका कान्ह ने प्रलय मचा दी। घोड़ा दोनों ओर टापों से वीरों को कुचल रहा था। कान्ह की गुर्ज खाते ही हाथी चिघाड़ते, भागते, घोड़े उसी ठौर रहते, और छत्रधारियों की धज्जी उड़ जाती। काल की-सी जीभ लपलपाती हुई नराजी कभी किसी को चीरती हुई दो-दो कर देती, कभी खण्ड-खण्ड कर देती। वह एक की खांपड़ी फाड़, दूसरे का गला काट, तीसरे की छाती चीर, चौथे के दो टुक कर घोड़े का हनन करती। कान्ह इस तरह सिर उतारने लगे जैसे कुम्हार चाक पर से कुल्हड़ उतार रहा हो। इस तरह वह सूर्य का आंशिक अवतार कान्ह एक हाथ से नराजी फटकार रहा था, दूसरे से गुर्ज पेल रहा था।

कान्ह का यह विषम पराक्रम देख समस्त पङ्ग-दल उसी पर टूट पड़ा। सहस्रों चोटें पड़ने लगीं, और वीर का शरीर क्षत-विक्षत होने लगा। उधर लाशों के ढेर को पैरों से रूँधता हुआ कान्ह शत्रु दल में

धुसता ही गया। उसकी मार देख शत्रु हाहाकार कर भागने लगे। अन्त में उसका गुर्ज और तलवार दोनो ही टूट गए, तब कटार ली। अन्त में दोनो वीर गुथे-के-गुथे खेत रहे।

इसके बाद फिर पङ्क-दल बढ़ा, तब अचलेश खींची की ओर देख-कर पृथ्वीराज ने कहा—“हे वीर, अब तुम्हारी सुकीर्ति कमाने की बारी है।” यह सुनते ही अचलेश खींची ने फिर नये घोड़े को आड़ दी। उसने कहा—“महाराज, मैं तो चला, पर पङ्क-दल को धूल में मिला दूँगा। मेरे रहते आपको आँच नहीं आवेगी, आप निर्भय बड़े जाइए।”

यह कह दुर्गा-दुर्गा कहकर वह लौट पड़ा, उस भीमकाय अचलेश के दुर्धर्ष वेग को न सह पङ्क-सेना पीछे भाग चली। अन्त में पाँच सौ सेना का संहार कर वह वीर भी पञ्चतत्व को प्राप्त हुआ। इसके बाद पङ्क-दल फिर पृथ्वीराज के सिर पर आ पहुँचा, तब राजा ने विभूराज सोलङ्की से कहा—“हे वीर चालुक्य अब तेरी तलवार की भी प्यास बुझनी चाहिए।” उसने कहा, “जो आज्ञा महाराज, आप कृपया किए जाइए।” इतना कहकर वह लौटा। यह महावीर जब पङ्क-सेना के ब्यूह में घुसा, तो बहुत रोकने पर भी रुका नहीं। सीधा जयचन्द के हाथी पर चढ़ दौड़ा। यह देख जयचन्द ने छः सरदारों को उसे रोकने की आज्ञा दी। छहो सरदारों ने दल-बल-सहित उसे घेर लिया। इस वीर ने तीन को उसी समय काट गिराया, और सिपाहियों की लोथों का पहाड़ लगा दिया। जृष्णराय तोमर ने विभूराज का घोड़ा मार गिराया। इस पर इसने कृष्णराय का सिर काट लिया। भारी मार मची, तब अवसर पा केहरसिंह ने एक भरपूर हाथ मारकर उसका सिर उड़ा दिया। तब कबन्ध ने संहार शुरू किया, और सैकड़ों वीरों को मारकर गिरा दिया।

इस वीर ने पङ्क-दल के एक हजार वीर मारे। तब सारङ्गराय जाट

ने जयचन्द से कहा—“महाराज मैं पृथ्वीराज को पकड़ लाता हूँ ।” जयचन्द ने प्रसन्न हो आज्ञा दी । वह अपनी तीन हजार सेना ले बढ़ा । इधर जैतराव प्रमार लौट पड़ा । दोनों में खूब ठनी । उसने तीन सौ सवार काट गिराए । अन्त में सारङ्गराय ने उसे मार गिराया । पर मरते-मरते उसने भी उसका सिर भुट्टा-सा उड़ा दिया ।

अब उधर से जयचन्द का ममेरा भाई प्रतापसिंह सोलङ्की अपनी छः हजार सेना ले दौड़ा और अपनी रक्त की प्यासी कटार लिए पिल पड़ा । वह कटार उसके हाथों में ऐसी शोभित होती थी, मानो हाथों में लोहे का अंकुर उगा हो । वह इस पार लगती तो उस पार जाती थी । वह भूखे सिंह की जिह्वा के समान यदि हार्थी के कंठ पर भी जा लगती, तो रक्त की धार बहा लाती थी । इस कटारी से कान्ह ने पाँच हजार जवान मारे । अन्त में हाथ-पर-हाथ मारने पर जब वह भी टूटकर भर गई, तब वह निहत्था वीर सिपाहियों को पकड़-पकड़कर ऐसा पछाड़ने लगा, जैसे धाँवी कपड़े पछाड़ता है । कभी यह दो वीरों की खोपड़ी पकड़ ऐसे जोर से टकराता कि दोनों चूर-चूर हो जातीं । कभी वह शत्रु को एक पैर पैर से दबा उसे चीर कर फेंक देता ।

जब जयचन्द ने इस दुर्धर्ष योद्धा को इस प्रकार युद्ध करते देखा, तो अरिदास-नामक सरदार को भेजा । अरिदास अपने नए सैनिकों-सहित उस पर दूट पड़ा, और अन्त में उसकी तलवार का भरपूर हाथ कान्ह की गर्दन पर ऐसा बैठा कि गर्दन भुट्टा सी उड़ गई । परन्तु कान्ह ने इसी बीच में उसे पकड़कर चीर डाला । अब कान्ह का कबन्ध चहुँमुखी मार करने लगा, और सहस्रों सिपाही उस पर लोहा लेकर दूट पड़े, और अन्त में वह वीर तिल-तिल होकर धरती पर कट गिरा । उसका वह उच्चैश्रवा-सम घोड़ा भी वहीं पञ्चतत्व को प्राप्त हुआ ।

कान्ह के मोर्चे में पृथ्वीराज दस कोस धरती दाव गए । इस युद्ध में कान्ह ने दस हजार के लगभग योद्धाओं को मारा ।

कान्ह के गिरते ही पंग दल फिर पृथ्वीराज पर चढ़ दौड़ा । यह देख अल्हनकुमार परिहार ने पृथ्वीराज को सिर झुकाया । हे शूर, मैं अब आपसे सदा के लिये विदा होता हूँ, और यह सिर आपको सौगात में देता हूँ । यह कह और दाहने हाथ में तलवार और बाएँ में कटार फटकारता हुआ आपाढ़ के बादलों के समान गर्जती चली आती पंग-सेना पर वह टूट पड़ा । उसने अपनी इष्टदेवी महामाया को स्मरण किया, और वह उसके सिर पर आ बैठी । अब जो उसने तलवार घुमाई, कि पंग-सेना फिर ठिमक गई, और उसका ब्यूह टूट गया । वीरयानाथ सरदार हाथी पर सवार हो उसके सम्मुख आया । अल्हनराय ने हाथी की सूँड़ पर छूटते ही ऐसा हाथ दिया कि हाथी चिंघाड़ता भागा । पर वीरयानाथ क्रुद पड़ा, पर अल्हन ने सँभलने से पहले ही उसे काट गिराया । अब सरदार का छोटा भाई आगे बढ़ा, दोनों गुथ गए । तलवार टूटने पर उधर से लक्ष्मन बघेला उलट पड़ा । अब फिर भारी युद्ध होने लगा । लाशों पर लाशें गिरने लगीं । रक्त की नदी बह चली । वह महारवार पंग-दल को इस भौंति विध्वंस करने लगा, जैसे हाथी कमल दल को । अन्त में तलवार टूटने पर उसके शरीर के खंड-खंड होकर गिरे ।

अब रिसालदार अशोकराय अपनी आठ हजार सेना लेकर और सहदेवराय अपनी सेना-सहित आगे बढ़े । तब पहाड़राय तँवर ने तलवार की मूठ पर हाथ धरा । यह देख पृथ्वीराज ने कहा—“धन्य वीर !” उसने राजा को सिर नवाया, और पट पड़ा । वह शत्रु-दल को चीरता हुआ अशोकराय तक जा पहुँचा । अशोकराय ने साँग मारी । उसे छाती पर झेल उसने एक ही हाथ में उसका सिर उड़ा दिया, यह देख सहदेवराय दौड़ आया, दोनों में खूब ठनी । चार

घड़ी तक दोनों योद्धा जूमे। मौका पाकर पहाड़राय ने ज्यों ही वार करने को हाथ उठाया कि सहदेवराय ने सोंग धर मारी। वह सोंग गर्दन फोड़ पल्ले पार गई और कंठ से रुधिर की धार वह निकली। उधर उसका हाथ भी भरपूर पड़ा, और सहदेवराय का सिर भुट्टा-सा उड़ गया। पहाड़राय देर तक लड़ते-लड़ते वहीं गिर गया। उसने बारह सौ सवारों का हनन किया।

अन्त में बासठ सामन्त खेत रहने पर ८१॥ कोस जमीन पारकर चैत्र सुदी दशमी को चार घड़ी दिन चढ़े पृथ्वीराज सोरों तक आ पहुँचे। जब पृथ्वीराज कन्नौज की भूमि लॉघ अपनी भूमि पर पैर देने लगे, तब जयचन्द के शोक और चिन्ता का अन्त न रहा। वह अपने को बारंबार धिक्कार देने और सिर धुनने लगे। यह देख संयोगिता का मामा राज-कुमार महादेवराय बोला—“महाराज, आप सोच न करें, मैं पृथ्वीराज को पकड़ लाता हूँ।” यह देख उसका मित्र लील प्रमार भी उसके साथ चला। उसे आता देख संयोगिता ने सहमकर सिर नीचा कर लिया। इधर से गुजरात के राजा भीमदेव का पुत्र कञ्चनराय उसके मुकाबले में चला, और राजा से सिर नवाकर आज्ञा चाही। यह देख संयोगिता ने अपने गले से मोतियों की माला निकाल उसके गले में डाल दी। माला पाकर उसकी छाती फूल उठी, और वह वीर-दर्प से पीछे लौटा। इस अल्पवस्यक बालक को ऐसे विक्रम से युद्ध करते देख शत्रु भी वाह-वाह करने लगे। वीरों का उसने ढेर लगा दिया। उसका यह पराक्रम देख महादेवराय उसके सम्मुख आकर ललकारने लगा। उसने तानकर उसके सीने पर सोंग मारी। उधर उसने क्षण-भर में तलवार का भरपूर हाथ दिया, फिर दोनों गुथ गए, और गुथे हुए ही गिर गए।

महादेवराय के गिरते ही लील प्रमार तीन हजार सवार ले आगे बढ़ा। इधर से धार का राजा जङ्गदेव उतरा। दोनों ऊँचे जवान थे।

सेना-भर में दोनों के सिर हाथ-भर ऊँचे चमकते थे। दोनों के हाथ में गैड की ढालें और लम्बे दुधारे थे। दोनों में चार घड़ी द्रुन्द होता रहा। अन्त में मौस के लोथड़े होकर दोनों साथ-साथ गिरे।

अब पृथ्वीराज विषमचिन्ता में पड़े। इस समय ग्यारह सौ में केवल सौ मनुष्य बचे थे। उनमें भी मरने-मारने वाले केवल पैतालिस वीर थे, शेष शागिर्द पेशा के आदमी थे। पीछे सोरों घाट की अगम अथाह गंगा और तीन तरफ समुद्र-समान पङ्ग-दल, पृथ्वीराज को भास गया कि अब बचना कठिन है।

उधर समस्त चतुरङ्गिणी का सेनापति हम्मीरसिंह जयचन्द की आज्ञा ले क्रुद्ध हो पृथ्वीराज पर आँधी की भाँति चढ़ दौड़ा। यह देख पृथ्वीराज ने अपना धनुष सँभाला, पर वह वीर बढ़ता ही चला आया, और झट पृथ्वीराज के कंठ में कमान डाल दी, और कहा—“अरे तस्कर, अब ठहर, भागा कहाँ जाता है?” पृथ्वीराज के प्राण सङ्कट में देख सामन्त हैं-हैं करके तलवार सूतकर पिल पड़े। उधर फुर्ती से संयोगिता ने कटार से धनुष की डोरी काट दी। कंठ के मुक्त होते ही पृथ्वीराज ने तलवार के एक ही वार से हम्मीर का सिर धड़ से उड़ा दिया, और फिर अपने घोड़े को मार्ग पर छोड़ दिया।

कुछ दूर जाकर पृथ्वीराज ने उमड़ती हुई शत्रु-सैन्य को देखकर कहा—“सामन्तों, अब तो मरने का समय ही आ गया है।” यह कह वह घोड़े से उतर पड़े। संयोगिता को घोड़े पर छोड़ा। बारह बारह सामन्त संयोगिता के घोड़े के दोनों बगलों में मुस्तैदी से खड़े हो गए, और शेष लोगों सहित जोगी जधारा भीमदेव जयचन्द का मोर्चा रोकने पीछे को लौटे। पृथ्वीराज ने वहीं जमकर बाण बरसाना प्रारम्भ किया। अब सभी ने जीवन की आशा त्याग दी थी। एक बार फिर भयङ्कर रार छड़ी। केवल दो घड़ी के युद्ध में पन्द्रह सरदार पङ्ग-दल दल के और पाँच सरदार पृथ्वीराज के खेत रहे।

पङ्क-दल बढ़ा आ रहा था। अब घड़ी-घड़ी की खैर न थी। निदान, महावीर जोगी जंधारा मोर्चा रोप खड़ा हुआ, और पृथ्वीराज को कृच का संकेत किया। इस वीर ने भारी मोर्चा लिया, और वीर-गति को प्राप्त हो गया। फिर सगरराय अजमेर के किलेदार ने मोर्चा लिया। इसने पङ्क-दल के लुक्के लुड़ा दिए। एक बार फिर पङ्क-दल विचलित हो गया। सैकड़ों घाव छाती पर खाने पर भी सगरराय को मोर्चे पर डटा देख पृथ्वीराज फिर घोड़े पर सवार हो चल दिए।

इस भौंति दशमी की दुपहर भी ढल गई, और वीर सगरराय गिर गया। अन्त में जब चार घड़ी दिन शेष रह गया, तब जयचन्द हाथी त्याग घोड़े पर सवार हो, स्वयं पृथ्वीराज को पकड़ने चले, पर गजमेल में पहुँचते ही जब उनकी निगाह पिता की आंखों पर पड़ी, तो वे ताकती हुई संयोगिता पर पड़ी, जिसके बाल बिखर रहे थे, हाँठ सूख रहे थे, और वस्त्रों में रक्त-धूल लग रही थी, तब वह मुँह से पकड़ों-पकड़ों कहते बेहोश हाँक धरती पर गिर पड़े। यह देख सब सरदार-सिपाही घोड़े से उतर पड़े। समझदार राज-कर्मचारियों ने संकेत से सेना को रोक दिया, युद्ध रुक गया।

तब प्रमुख सरदारों ने विनीत भाव से कहा—“महाराज, कन्नौज से यहाँ तक उनके चौंसठ सामन्त खेत रहे, पर हमारे हाथ कुछ भी न आया। अब तो उनका राज्य आ गया, आगे क्या होगा, इसका ठीक नहीं।” जयचन्द की आँखों में प्राणों से प्यारी पुत्री का वह शूष्क करुण मुख घूम गया। उन्होंने आँखों से आँसू गिराकर सेना को युद्ध से विरत किया, और वहीं से पृथ्वी की पाँच परिक्रमा कर यह कहते हुए कन्नौज को लौट चले कि—“हे कन्नौज के यज्ञ को बिगाड़ने वाले और मेरी प्राण-प्रिय पुत्री को हरने वाले पृथ्वीराज, दिल्ली का राज्य, अपनी प्रतिष्ठा और लाज आज तुझे दान देकर मैं कन्नौज लौट जाता हूँ।”

यह कह वह मन-मलीन कन्नौज को लौट चले, तथा मार्ग में दोनों तरफ के मृत सरदारों की यथाविधि दाह-क्रिया करवाई, और सिपाहियों की लाशें हरि बोलकर गङ्गा में विसर्जन करवा दीं। इस प्रकार अद्वितीय वीर्यवान् चौंसठ सामन्तों और एक हजार अन्य राजपूतों को खपाकर केवल तैंतालीस सामन्तों और परिकरों-सहित राजा पृथ्वीराज ने जङ्गल में पड़ाव दिया, और कमर खाली।

२१

कवि चन्द ने राजद्वार में आकर पुकार लगाई—

“शत्रु-समूह को विध्वंस कर और महाराज जयचन्द का यज्ञ बिगाड़ सम्भरीनाथ महाराज पृथ्वीराज सुन्दरी संयोगिता को साथ लेकर आ रहे हैं। अस्तु, जिसकी इच्छा दर्शन करने की हो, वह साथ चले।”

यह सुखद सन्देश पाते ही प्रजा-वर्ग में आनन्द छा गया। राजद्वार पर नौबतें भरने लगीं। किले पर से तोपों की सलामी होने लगी। नगर ध्वजा-पताकाओं से सजने लगा। सेना सजने लगी, और महलों में मङ्गलचार होने लगे।

तेरस के दिन शुभ मूर्धुर्त में तैंतालीस घायल सामन्तों की डोली और चवालीसवीं संयोगिता की डोली लिए पृथ्वीराज ने दिल्ली में प्रवेश किया। नगर की स्त्रियाँ अटारी पर बैठी अक्षत और लाज छोड़ रही थीं। द्वार-द्वार पर नवीन बन्दनवार और कलश सजे थे। राजद्वार पर हजारों वाद्य बज रहे थे। चारण और कवि विरदावली पढ़ रहे थे।

ज्यों ही राजा ने घोड़े से उतरकर पृथ्वी पर पैर रक्खा, त्यों ही सिर

पर सोने का कलश लिए सोलह शृङ्गार, बारह आभूषणों से मंगल-गीत गाने लगीं। राज्यवर्गीगण, सेठ साहूकार और सगे-सम्बन्धी सरदार लोग हीरा, मोती, जवाहिर, रुपया, मोहर तथा नाना प्रकार के पाटम्बर और जरतारी, वस्त्र राजा पर न्यौछावर करने लगे।

जब राजा ने रंग-महल की छ्यौड़ियों में कदम रक्खा, तब पटरानी इच्छनी ने आरती उतारी, और अन्य रानियों ने अपने सुन्दर केशों से राजा के पैरों की धूल झाड़ी।

राजा ने सबसे मिल-भेंट तथा विश्राम कर दरबार किया, और उस में कन्नौज-युद्ध में काम आए सामन्तों के पुत्र-पौत्रों को सामन्ताई की पाग बँधाई। सर्वप्रथम निड्डुरराय के पुत्र वीरचन्द को बुलाकर अपने हाथ से उसका राजतिलक कर बधाई में बीस गाँव, पाँच घोड़े और एक हाथी तथा सिरोपाव दिया। कान्ह चौहान के पुत्र ईश्वरदास को पन्द्रह गाँव एक हाथी और आठ घोड़े दिए। गोइंदराय के पुत्र सामन्तसिंह को बारह गाँव और पाँच घोड़े बधाई में दिए। चन्द्रसेन पुंडीर के पुत्र धीर पुंडीर को उसके पिता की जागीर का पट्टा दिया गया। इसके सिवा सब सामन्तों के पुत्रों को यथोचित पैतृक जागीर के पट्टे, सिरोपाय और मोती-माला देकर सत्कार किया गया। फिर सबको पान-मान से सन्तुष्ट किया गया।

उसी समय कन्नौज से राजा जयचन्द का भेजा हुआ श्रोकंठ पुरोहित विवाह की सामग्री और दहेज में जरीदार जड़ाऊ साज से सजे हुए गंगा-जमनी हौदे और अम्बारियों से युक्त ऐरावत के समान एक सौ आठ हाथी, जड़ाऊ जीन रंशमी पटे और सुनहरी पाखरों से सजे हुए अच्छे खेत के आठ हजार अच्छे-अच्छे घोड़े और अनगिनत धन, रत्न, पलग, सेज, बरतन, गहने, कपड़े, स्वर्ण लिए आ पहुँचा। राजा ने उसका सत्कार से स्वागत किया, और निड्डुरराय के यहाँ डेरा दिया।

उसी दिन पुष्य नक्षत्र का वेध होने पर गोधूलि-वेला में व्याह का मुहूर्त ठहरा। निड्डुरराय के घर लड़की की तरफ से मँडवा गड़ा कन्नौज से आई हुई संयोगिता की सखियों ने उबटन करके संयोगिता को मजन कराया, केश सँवार वेणी गुथी, और माँग-माँग में मोती पिरोए, बीच-बीच में सुगन्धित पुष्प भरे। शीश पर शीशफूल लगाए, ललाट पर जड़ाऊ तिलक सँवारे, बड़े-बड़े खंजन से नेत्रों में काजल लगाया, नाक में बेसर पहनाई, मुख में पान खिलाया, कण्ठ में नाभि तक लटकती हुई मोतियों की माला पहनाई, हाथों में चूड़ी, पटेले, पहुँची, नोगरी, बरा, बाजूबन्द और जोशन आदि साजे, कमर में मेखला, करधनी और पैरों में नूपुर, पंजनी और पायजंघ पहनाई, और तलवों में महावर लगाया।

यह ऊपरी बनाव तो हुआ, पर संयोगिता का लज्जामय कटाक्ष, मन्द मुस्कान, नवीन वय, रति प्रीति, भय, संकोच, सरसता, हंसगति, गुप्ताङ्गों का सौन्दर्य और कोमलता ने उसे पृथ्वी की सुन्दरियों में अलभ्य बना दिया था।

गोधूलि होते ही पृथ्वीराज वन-ठनकर जड़ाऊ मुकुट माथे पर बाँधकर घोड़े पर सवार हो दल-बल सहित नगर में होते हुए निड्डुरराय के घर जा पहुँचे। विधिवत् कार्य सम्पन्न हुआ, और अन्त में प्रभूत धन ब्राह्मणों को दान किया गया। अन्त में धन, रत्न लुटाते दोनों राजदम्पति महलों को लौटे। सामन्त सरदारों को बहुत कुछ दान-मान से सत्कारा गया, श्रीकंठ को एक हाथी, चार घोड़े, बहुत-सा धन रत्न दे, चार दिन रख बिदा किया।

अब ज्यौनार की तैयारी हुई। विविध प्रकार के षड्रस व्यञ्जन भोजन तैयार थे।

ज्यों ही दासी ने भोजन की तैयारी का समाचार दिया, राजा ने वस्त्र उतारे, नव-यौवना दासियों ने आकर सुगन्धित तैल से

राजा का मर्दन किया, फिर गर्म गङ्गा-जल से स्नान करा, केशर, चन्दन का लेप कर श्राद्ध-तर्पण किया, और नित्य-नियम करके आसन पर बैठे। उधर पाँच वेद-पाठी ब्राह्मणों ने आकर राजा को तुलसी-दल दिया, उसे सिर पर धारण कर राजा ने तलवार की धार से मौत माँगी। राजा ने ब्राह्मणों का चरणोदक लिया, और उन्हें उचित आसन देकर आप पुनः अपने स्थान पर बैठ गए। खुरों में चाँदी और सींगों में सोना मढ़ी हुई सौ गाँएँ लाई गईं। उन्हें ब्राह्मणों को दान दे बिदा किया। फिर सिर से पैर तक अभूषणों से लदी हुई, उत्तम भौंति शृङ्गार किए, नौ कुमारियाँ लाई गईं। उन्हें नवग्रहों का दान करके फिर एक हजार वेद-पाठी ब्राह्मणों को भोजन कराया गया।

इसके बाद बहुत से विद्वान ब्राह्मणों, सरदारों, सामन्तों और मित्रों सहित राजा अटाले में गए। जहाँ का स्थल स्वच्छ गोबर से लिपा हुआ था, और राख की चाकें खींचकर चौके काटे गए थे। बीचोबीच राजा के लिए मुलायम आसन बिछा था। सामने पालौठ लगी थी। राजा आसन पर बैठे, इधर-उधर सामन्त लोग भी पौंति से बैठे। राजा के सामने कवि चन्द बैठा।

राजा के बैठते ही पण्डित-मण्डली ने एक स्वर से वेदोच्चारण किया। फिर सोने चाँदी के थार, गिलास, लोटे रखे गए। और ब्राह्मणों ने जिसे परोसनी प्रारम्भ की। सबके पहले लड्डुओं की भोवें निकाली गईं, इसके बाद पूरी, सुख पूरी और गुठनेदार बेली कटी हुई लुचैयों परसी गईं। तदनन्तर पीठी की कचौरी, खस्ता, तेवा, घेवर, जलेबी, मीठी और नमकीन फेनी, सकरपारे, बुँदियाँ, सेव, मिश्री-पाग, कसार-भरे पगे गोभा, खुरमा, गिदौरा, सिरके और शीरे में पगे आम, पिंडखजूर, बिही, अखरोट, नासपाती, पापड़, चना, चिरौंजी, कसेरू, कमलगट्टा आदि नाना विधि चरबण परसे गए।

पूर्णाहुति

सके बाद कच्ची रसोई निकली। पहले खीर परसी गई, फिर नारङ्गी, करौंदा, कैथा और इमली की चटनी, पकौड़ी डाली मूँग की बड़ी, शोरबेदार मैदे और बेसन की तरकारी, खट्टे-टट्टे, मैदे और पीठी के भोग से बनी खटमिठ्ठी बिड़ई और सबके में तन्दूरी रोटियाँ और मैदे के माड़े परसे गए।

प्रब सालन साग की बारी आई। जिसमें मारु बेंगन, सेम, सेमा, 1, करेला, मुरेला, भिंडी, किमान्च, कचनार की कली, लौकी की दो-दो, तीन-तीन रकम की तरकारी। लोंग, मिरच, सोंठ, हींग आदि मसाले डाल कर रायते तैयार किए गए थे। कई के दही और मट्टे के रायते थे, और कई केवल नीबू में भीगे थे। जब परस हो चुकी, तब जय लक्ष्मीनारायण बोला गया। राजा तो-सहित भोजन करने लगे। तब पण्डों ने सरसों, अरबी, राज-रूथा, बथुआ, चौलाई और पालक के साग परसे, जिनमें गड़ङ्ग और चूक की पुट देकर अलग ही स्वाद लाया गया था। की खली, देवदारु, मुर और नीम की कोपों का भी साग प्रस्तुत साग चुकने पर मसूर, मूँग, उरद, अरहर, चना आदि की और भिन्न-भिन्न स्वाद का भात और सबके पीछे सुअर, साबर, आदि नाना प्रकार के मौस परसे गये।

जब सब ऊपर गए, तब पछावर की परछन हुई। पहले तो कई का एक फेरा हुआ, जो चीज कम पाई गई, परस दी गई। मिरच, सोंठ और जीरा पड़ा हुआ मठा, दाख, केशर, मिश्री और देकर औटा अधावट गौ का दूध और जामन के सिरके और भीगे हुए मेवे-मखाने आदि परसे गए।

जब सब तृप्त हुए, और थालों पर हाथों को करने लगे, तब परस हुई। इस समय अटाले पर कामदार जो हाथ बाँधे खड़ा था, 1—“जो भूल-चूक हुई हो, क्षमा करना।” यह सुन राजा और

सामन्तों ने कहा—“नहीं, खूब बना। इसके बाद उठ हाथ धो सोने के बर्क लगे पान के बीड़े आए।”

आग बरसानेवाले गर्मी के दिन थे। इसलिए सुन्दरी संयोगिता का सुहाग-महल बरसाती बहार से सजाया गया था। जगह-जगह उत्तमोत्तम तरु-लताओं के वितान से शीतलता बढ़ाई गई थी। अगर के धुएँ के मेघ बनाकर गुलाब जल की नन्हीं-नन्हीं फुआर-सी बूँदें बरसाई गई थीं, नाना प्रकार के बरसाती पंखी एकत्र किए गए थे। राजमहल के सोने के कलश दूर से चमक रहे थे। संयोगिता के शयनागार के देहली द्वार, खिड़की, किवाड़ और दीवारों में भौँति-भौँति के सच्चे नग जड़ हुए थे, नाना प्रकार के चित्र खिंचे थे, जिम पर भौँति-भौँति के बेल-बूटे बने थे। साँधी सुगन्ध भर रही थी। बीच में बिछा पलंग साक्षात् कामदेव की गद्दा-सा प्रतीत होता था। उसी भवन के आस-पास भोजन, मजन और शृंगार के पृथक्-पृथक् कोठे थे, जो सब आवश्यक सामग्रियों से परिपूर्ण थे।

सुन्दरी संयोगिता शृंगार कर रही थी, वह मजनागार में चली गई और शरीर के सब वस्त्र उतार डाले, गहने भी पृथक् कर दिए, और स्नान करने लगी। वहाँ भौँति-भौँति के सुगन्धिन मसाले और तेल, उबटन उपस्थित थे। भिन्न-भिन्न भौँति के फव्वारे चल रहे थे। वहाँ उसने अपने सुकोमल शरीर को अच्छी भौँति धोया। सुगंध लेपन किया, और शृंगार-घर में आई। यहाँ उसने अपने कमर तक लपकते बालों को कड़ी करके साफ किया, बीच-बीच में रंग-बिरङ्गे फूल गूँथ-गूँथकर वेणी गूँथी, ललाट-पट पर जड़ाऊ तिलक सँवारा, रुचिकर भौँहें बनाई, कानों में ताटक पहने, गालों को साफ किया, ठोड़ी पर तिलक लगाया। कुचों पर चोली कसी, और अंग-प्रत्यंग को नाना प्रकार के गहनों से सज-बजकर रंगदार नौनी सारी सँवारकर काम की कमान-सी उठ खड़ी हुई।

इस समय दिए जल गए थे, और शयनागार में दीपावली हो रही थी। अब उसकी साधना का समय था। पृथ्वी पर किसने ऐसा पति पाया। दासियाँ उसे सँवार रही थीं, उसके बदन में छुरहरी हो रही थी, काम-ज्वर चढ़ा था, साँस फूल रही थी। तीस आगे और तीस पीछे साठ सखियाँ उसे बीच में कर पृथ्वीराज के पास शयनागार में ले चलीं। पृथ्वीराज ने उसे देखते ही आगे बढ़, हाथ पकड़ कलेजे से लगा लिया उस समय सुन्दरी संयोगिता के रस-वश होकर पृथ्वीराज ऐसे मुग्ध-मन हो गए, जैसे केतकी के पुष्प की बास पाकर भ्रमर हो जाता है। वह संयोगिता को ऊपर से नीचे तक देखते और कुछ सोचकर रह जाते। यह देख सखियाँ वहाँ से खिसक चलीं।

संयोगिता के शरीर में हरहराहट मची थी। वह एकान्त हुआ जान, दुकूल सँभालती हुई, थर-थर काँपती राजा की छाती से चिपट गई।

समय ने लज्जा, शील और सङ्कोच को भगाना शुरू किया। पहले दिन इतना ही रहा, दूसरे दिन थोड़ी लज्जा रही, तीसरे दिन जो थी, वह चौथे दिन न रही, जो चौथे दिन थी, वह पाँचवें दिन न रही। इसी तरह पूर्णिमा तक काम की कला से पूर्ण होकर संयोगिता राजा के चित्त-चन्द्रमा की चाँदनी हो गई।

जवानी के जोर में शैशव की कसक निकल जाने से रस के फुहारे छूटने लगे, और संयोगिता निपट निर्भय होकर पति के साथ जीवन का सुख लेने लगी। जहाँ वह पहले दिन हाथ पकड़ते ही हाय-हाय करती और पति को प्रेम रस का प्याला पीने ही न देती थी, पति की नजर का रुख पकड़ नजर फेर लेती थी, और अञ्चल से आँखें ढाँक खिसकती फिरती थी, दूसरे दिन दाँव में गस गई। तीसरे दिन कसकती, मसकती, सिसकती और उकसती थी। चौथे दिन यह कुछ न रहा। पाँचवें दिन हँस-हँसकर बातें करने लगी। छठे दिन लज्जा को

लात मार स्वयं राजा का हाथ धरने लगी । सातवें दिन रस का खोत सवाया हो गया । आठवें दिन आठ अङ्ग पूरे होकर नवें दिन नौ अङ्ग पूरे हुए और नवरस भरपूर हो गए । दम्पति-प्रेम दिन-दूना, रात-चौगुना बढ़ने लगा । तेरस को लोक-लाज गई । चौदस को राजा चेरी हुआ । पूर्णिमा को मनोरथ पूरे हो गए । उस प्रयास में उसके शरीर पर जो श्रम-कण झलक पड़े, सो ऐसे सुशोभित होते थे, मानो काम-कारीगर ने इस मनोज-मञ्जरी पर चन्द्रमा की किरणों काट कर पच्ची-कारी की हो ।

उस अगम्य रूप और सुख के सागर में डूबकर राजा पृथ्वीराज सारे संसार को भूल गए ।



??

अत्यन्त दयालु परमेश्वर के नाम पर जिसके असंख्य बरवरो ने निरन्तर तीस वर्ष भारत को रोंदा, जिसने सत्रह बार भारत को तलवार और आग की भेंट किया, जिसने नगरकोट के मन्दिर को विध्वंस कर सात सौ मन अशर्फी, सात सौ मन सोना चाँदी के बर्तन, दो हजार मन चाँदी और बीस मन हीरे मांती लूटे थे, जिसने थानेश्वर से २ लाख कैदियों को गजनी ले जाकर २) २) रुपये में बेचा, जिसने सोमनाथ का अप्रतिम मन्दिर भङ्ग कर जवाहरात से अगनित ऊँट भर कर गुजरात को श्मशान बना दिया, जिसकी प्रचण्ड सेना के नामीगिरामी सिपाही अपने घोड़ों की जीन को सोने और जवाहरात से भर कर और लौंडी गुलामों के झुण्ड को घोड़ों की बागडोर से

बाँधकर इतराते हुए अपने घरों को लौटते थे, वह प्रतापी महमूद गजनवी उन समस्त लूटे हुए हीरे मोती और सुवर्ण के ढेर को सामने रख फूट-फूट कर रोता हुआ खाली हाथ संसार छोड़ चला था। उसके निर्बल वंशधर मध्य एशिया के खूँवार देशों पर अधिकार कायम न रख सके। उसके मरने के थोड़े ही दिन बाद गौरी के पहाड़ी सद्दार जो कि रोजक्रोह में एक मजबूत गर्दी बनाकर रहते थे तथा महमूद के आधीन छोटे सामन्त थे, गजनी के कट्टर शत्रु बन गए। और जब उनका सरदार अलाउद्दीन गौरी अपने भाई के खून का बदला लेने गजनी पर चढ़ा तो गजनी का सञ्चित विपुल ऐश्वर्य लूटने को उन खून के प्यासे सिपाहियों का एक भारी लश्कर इकट्ठा हो गया, जो उसी के भण्डे के नीचे काम करके मालालाल हो गये थे। इस दुर्दान्त सेना को लेकर अलाउद्दीन गौरी ने गजनी में आकर खून की नदी बहा दी तथा निरन्तर युद्ध करके महमूद के वंशज बहराम शाह को हरा कर गजनी पर दखल कर लिया, उन्हीं खूँवार सिपाहियों की मदद से आठ लाख नर नारी और असंख्य रत्नों से उसाठस वह समृद्ध गजनी महानगर जला कर खाक स्याह कर दिया। नगर निवासी घास फूस की भाँति काट डाले गये। नामी-नामी इमारतें और महल जमींदोज कर दिये गये। सात दिन गजनी धाँय-धाँय जलती रही। केवल एक लाख खूबसूरत स्त्री पुरुष बच्चों को कराहते हुए भेड़ बकरी के रेबड़ की भाँति हाँक ले जाकर दुनियाँ के बाजारों में मिट्टी के मोल बेच डाला।

इसके बाद उसका उत्तराधिकारी शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी पचास हजार उग्र तुरकों और असंख्य लुटेरे बर्बरों के दल बादल ले बाज की तरह भारत पर दूट पड़ा। उन दिनों प्राचीन क्षत्रियों के वंश नष्ट हो चुके थे। और विदेशी शकहूण आदि जातियों के मिश्रण से जो नई शासकों की जातियों बनीं थीं उनके दो प्रमुख भाग थे, एक हिन्दु जो

ब्राह्मणों के आधीन तथा देवी देवताओं के उपासक थे। वे राजपुत्र कहाते थे। दूसरे बौद्ध जो देवपुत्र कहाते थे।

महमूद की मृत्यु के बाद भारत लगातार गृह युद्ध में फँसा रहा। ब्राह्मणों का तेज नष्ट हो चुका था। वे पेट के लिये नीच और घमण्डी राजाओं की खुशामदें करने का पेशा करते थे। और वे राजा अकारण युद्ध करते रहते थे। महमूद के बाद जो गृह युद्धों का सिलसिला चला तो इनके फलस्वरूप कन्नौज के प्रतिहार तोबरी के कलचुरी और मालवे के परिमारों के बड़े-बड़े सामर्थ्यवान् राज्य नष्ट हो गये और उनके स्थान में बहुत से छोटे मोटे राज्य स्थापित हो गये। इन में दिल्ली और अजमेर का संयुक्त राज्य सब से प्रबल था। दिल्ली के अधिपति पृथ्वीराज ने अपने शौर्य की धाक जमा दी थी। परन्तु उसके गर्व ने उसे अन्यो से संगठित नहीं होने दिया। यदि उत्तर भारत के राजा पृथ्वीराज से सम्मिलित होकर मुसलमानों से लोहा लेते तो क्रूर और भयङ्कर रक्त लोलुप गीध पच्छिम के पहाड़ों से आ आकर भारत के रक्त और तलवार की भेंट न दे पाते। मुहम्मद गोरी ने दिल्लीपति चौहान से ७ बार टक्कर ली। हर बार उसकी सैन्य संख्या बढ़ती गई। हर बार पृथ्वीराज के सामन्त उसे पकड़ कर बाँध लाते और पृथ्वीराज उसे हर बार हँसकर छोड़ देता था। पृथ्वीराज के इस प्रताप की चर्चा देशान्तरों तक फैल चुकी थी और शाह शहाबुद्दीन अब एक सुयोग की प्रतीक्षा में था। बारम्बार हार कर बँधु बनने का अपमान उसके हृदय को साल रहा था। और वह एक बार फिर प्राण प्रण से भारत पर आक्रमण कर पृथ्वीराज से दो दो हाथ करने की जोड़ तोड़ लगा रहा। ऐसा ही सुयोग अब उसे मिला।

चार मास बीत गये । पृथ्वीराज संयोगिता के रंग में रंगे सो रंगे । वहाँ दिन होता है, कहीं रात, इसकी भी उनको खबर नहीं थी । इन चार मासों में राजा का कोई दर्शन भी न कर सका । संयोगिता और पृथ्वीराज जैसे एक हो गये । अन्य रानियों तक को राजा के दर्शन दुर्लभ हो गए । अपने ६४ सामन्तों को कटाकर और दुर्घष साहस कर पंगु-राज कमध्वज के पचास हजार योद्धाओं को काट कर प्राणों से भी बढ़ कर अधिक मूल्य की कुसुम कली सी सुकुमारी पंगु सुता के पाश में डाला हुआ राजा पृथ्वीराज गुरु, बान्धव, भृत्य, राजा, सत्ता सबको भूल कर बसन्त ऋतु के भोरे के समान बे सुध हो रहा ।

राज काज का सब ढाँचा बिगड़ गया था । वर्षों से राजा संयोगिता के फेर में था और राज काज का उसे कुछ ध्यान ही न था । अब तो आलस और भी बढ़तर थी । जिन लोगों को दिल्ली राज्य की हद में बंद रखना दुस्तर था, जो दिल्ली दरबार के ताबेदार थे, वे अब स्वतंत्र राजा बन बैठे थे । जो अब तक दण्ड भरते आए थे, वे अब दण्ड लेने में उद्यत थे । हाहुलीराय हमीर रूठ कर घर बैठ रहे थे । नौ सौ पथियों और एक लाख मीरजादों की तलवारों के बीच शाह शहाबुद्दीन ने पकड़ लाने वाले धीरे पुण्डीर को सौदागरों ने मार डाला था । एक पथी को मारने के अपराध में चामुण्डराय को बड़ी डाल दी गई थी । केमास प्रथम ही राजा के हाथ से मर चुका था । तिस पर कन्नौज में सब दूर सामन्त कट चुके थे ।

महलों के द्वार पर हाथी घोड़े और सिपाहियों के पहरे नहीं थे। मरदाने वेश में लाल लाल लाठियाँ लिये औरतें पहरे पर तैनात कर दी गई थीं। वीर राजपूत—जो राजा की एक बात पर प्राणों की आहुति देते थे, बेदिल हो गये थे। दिल्ली की रौनक फीकी हो गई थी। जो नए पुराने सदाँर थे, वे आपस में ईर्ष्या द्वेष और घमण्ड में चूर थे। मेल जाल और एकता तो दूर, प्रत्येक एक दूसरे की काट का अवसर ताकता था। जो जिसके जी में आता था अब करता था। शिल्प, उद्योग-शिक्षा और व्यापार व्यवस्था की कमी से रुक गये थे। गजनी के शाह के अनगिनत दूत साधुओं, दरवेशों, फेरी वालों और व्यापारियों सौदागरों के वेश में राजधानी में फैले हुए थे, जो राई रत्ती हाल शाह को भेजते रहते थे। नगर के छोटे बड़े गुप्त चुप राजा की बुराई करते थे। चामुण्डराय, बलभद्रराय, जैतराव, देवराव गार्ग, हाडु-लीराय हमीर, जामराय जादों, आदि जो इने गिने सरदार बचे थे, सब अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग अलापते थे। ऐसी दशा उस समय दिल्ली की थी।

२४

दिल्ली का धर्मायन कायस्थ शाह का गोइन्दा था। उसने सब हालात शाह को लिख भेजे और यह भी लिखा कि अब तक के सब अपमानों का बदला चुकाने और दिल्ली विजय करने का यही अवसर है। शाह के गुप्तचरों ने भी ऐसी ही सूचनाएँ दीं। शाह को छै बार पृथ्वीराज ने बन्दी किया था और नाम मात्र का जुर्माना लेकर उसे

छोड़ दिया था। इससे शाह का मन बहुत खट्टा हो रहा था। इस अवसर को उसने गनीमत समझा। उसे यह भी सूचना मिली कि लोहाना अजमेर के गढ़ की रक्षा पर है जो बिल्कुल अल्पवयस्क है।

यह सब सूचनाएँ पाकर शाह ने तुरन्त अपना लश्कर संगठित किया और अपने वजीरों और सेनापतियों को बुलाकर कहा—“मैं एक ऐसे दुश्मन पर फौजकशी करने जा रहा हूँ, जिसके मुकाबिले में कई बार नीचा देख चुका हूँ। मुझे उसने गिरफ्तार कर लिया और तुम लोग भाग निकले। सिर्फ दुश्मन की बेवकूफी से मैं हरबार सही सलामत निकल आया। लेकिन अब दुश्मन में वह जोर नहीं है और हमारा बाजू हर तरह मजबूत है। इसलिए इस बार खूब सोच समझ कर और मुस्तेदी से हमें दुश्मन पर हमला करना चाहिए।”

सब मंत्रियों और सरदारों ने शाह को मरते दम तक साथ देने की कुरान छू छू कर कसमें खाईं। अब शाह ने शुभ मुहूर्त देख नौ लाख कटक साथ ले गजनी से कूच बोल दिया, जिसमें एक लाख सवार और १० हजार हाथी थे। शहाबुद्दीन चारों ओर चाक चौबन्द चौकी पहरे और कासिदों का ठीक-ठीक प्रबन्ध करके व्यवस्था से आगे बढ़ने लगा। कूच दर कूच करके अन्त में निर्विघ्न सिन्धु नदी पार किया तथा भारत भूमि पर अपनी छावनी डाली।



चित्तौर के राजर्षि रावल समरसिंह ने भी दिल्ली की दुखस्था के समाचार सुने । राजा राज्य, सरदार और राजधानी सब से मुँह मोड़ स्त्री सेवन कर रहा है, तथा प्रबल शत्रु उस पर काल की भौंति चढ़ा चला आ रहा है और इसकी राजा का कोई खबर है न चिन्ता यह सब सुनकर राजर्षि समरसिंह दुःखित भी हुए और चिन्तित भी हुए । रावल जी पृथ्वीराज के पूज्य बहनाई थे । उनके परम शुभ-चिन्तक, धीर वीर और महामना । अपने राज्य वर्गियों में वे योगिराज प्रसिद्ध थे । उन्होंने अपने कर्तव्य को विचार कर दिल्ली आने की ठान ली ।

दूसरे ही दिन उन्होंने भरी सभा में सब भायातों, सरदारों, जागीरदारों और मन्त्रियों के समक्ष यह इच्छा प्रकट की कि हम राजकुमार रतनसिंह को राज्य गद्दी देकर निगमबोध जाया चाहते हैं । रतनसिंह के पाठ बैठने का सुदिन शोधा गया । आबूगढ़, जालौर, बृन्दी, गोरगढ़, धार, उज्जैन, और रणथम्भोर के राजाओं को निमन्त्रण भेजे गये । सब राजाओं के समक्ष धूम धाम से राजगभिषेक का महोत्सव मनाया गया—फिर देवराज को चित्तौर के किले का भार सौंप कर सबल जी ने अपनी रानी प्रथा सहित दिल्ली की और कूँच बोल दिया । पहिले दिन दस कोस पर डेरा दिया, यहाँ तक रावलजी के साथ सत्तर हजार सवार और सब छोटे बड़े सरदार उन्हें पहुँचाने आए ।

यहाँ से आगे रावलजी ने केवल एक हजार चुने हुए सवार और

५० हाथी साथ रख तथा कुछ चुने हुए सरदारों को ले शेष सबको भेंट भलाई देकर चित्तौर को खाना कर दिया ।

रावल जी कूच दर कूच करते हुए जुवनगढ़ आ पहुँचे । इस यात्रा में रावल जी सब सेना सहित आगे तथा पीछे सौ सवारों के बीच महारानी का डोला चलता था । इस प्रकार चलते और पड़ाव डालते हुए रावल जी दिल्ली की सीमा में आ पहुँचे ।

रावल जी की अवाई का समाचार सुनकर संयोगिता का प्रधान दस कोस आगे बढ़कर पेशवाई करने गया तथा पाँच कोस आगे बढ़कर सब सामन्तों ने पेशवाई की । सब लोगों ने साथ जाकर निगमबोध पर रावल जी के डेरे डलवाए । रानी प्रथाकुमारी रानी राकी इच्छुनी के महलों में आ पधारी ।

निगमबोध पर रावल जी के डेरे लगते ही संयोगिता की ओर से भाट वरदाई तथा चना चन्दी की जिन्स भेजी गई । इसके बाद रनवास की दासियाँ कलेऊ की जिन्स लेकर गई । ये दासियाँ ऐसी वैसी नहीं, सब स्वयं लावण्यवती, नख शिख से सजी धजी और रत्न-मणि जटित वस्त्र भूषण धारण किए हुए मान और ठाट से डोलियों में बैठकर निगमबोध पहुँचीं । इनके सङ्ग पच्चीस भाव पूरी, साठ भाव मिठाई, बत्तीस भाव थाना पापार, अचार, पान मसाला आदि और कई प्रकार का बना हुआ मँस, फल-फलाहार आदि था ।

सबने दूर ही से सवारी त्याग दी और उक्त सामग्री हाथों में लेकर रावल जी की सेवा में पेश की । रावल जी उच्च सिंहासन पर विराज मान थे । दासियों ने सब सामग्री आगे रख दी तथा हाथ बाँध सिर नीचा कर हटकर खड़ी हो गई । उनकी प्रधाना ने कुछ आगे बढ़ हाथ जोड़ विनय से निवेदन किया—श्रीमानों की अवाई सुन महारानी संयोगिता को अत्यन्त आनन्द हुआ है तथा उन्होंने हम लोगों को श्रीमानों के चरणों में भेंट भलाई लेकर भेजा है ।

रावल जी ने हँस कर संयोगिता को आशीर्वाद दिया। इनमें से अनेक रावल जी की पूर्व परिचिता थीं। उनसे रावलजी ने हँसकर कहा—“अच्छा, यह शिष्टाचार तो हुआ। अब कहो असल समाचार क्या है ?”

प्रधान दासी ने हाथ बाँध आँखों में आँसू भर गद्गद् वाणी से कहा—

“महाराज क्या कहें, संभरीनाथ चौहान तो संयोगिता के घेरे हुए बैठे हैं, रात दिन वहीं बिताते हैं, राज काज की कौन कहे उन्हें अपने बेगाने का भी होश नहीं है। सब सरदारों के हाल चाल तो महाराज को भी विदित होंगे। हम्मीर रूठ कर घर बैठ रहे, चामुण्डराय के राजा ने बेड़ियाँ डलवा दी हैं, धीर पुण्डरी को सौदागरों ने मार डाला। कन्नौज में दिल्ली के रत्नक सूर सामन्त सब कट मरे। सब कुछ उल्टा सीधा हो रहा है और क्या कहें।”

सब सुनकर रावल जी चिन्ता में बड़ी देर तक बैठे रहे। फिर दासियों को पान दिए और संयोगिता के लिये कपूर देकर सबको विदा किया।

दूसरे दिन संयोगिता की ओर से पहुनाई हुई। अगले दिन जैतराव ने रावल जी को न्योता दिया। उसने आटा, मैदा, बेसन, घी, चीनी, साग, तरकारी, दूध, दही, आम, पापड़, मसाला आदि सब पाँच सौ मन जिन्स डेरों पर पहुँचा दी। और पीपरे स्वयं उपस्थित होकर सत्कार किया। इसी प्रकार चामुण्डराय दादिमान, बलभद्र कल्लुवाहा, रामदेवराय खींची, जामराय यादव, सलख प्रमार आदि ने बारी-बारी से रावलजी का सत्कार किया। सबकी बारी पूरी हो चुकने पर रेनकुमार की तरफ से गोठ रची गई। इसमें गुरुराम पुरोहित चन्द-वरदाई, और सब सामन्त निगमबोध पर एकत्रित हुए। विविध पकवानों और मेवा मिष्ठानों से सहभोज हुआ। भोजन के बाद दरबार जुटा।

पहिले गुरुराम पुरोहित ने पुराणवार्ता कही फिर वरदाई ने कवित्त कहे जिनमें रावल जी की स्तुति थी। फिर इधर-उधर की बातचीत होने पर दरबार बर्खास्त हुआ। पीछे से दो हाथी, एक सजा हुआ घोड़ा, एक तलवार और ज़रतारी पोशाक रावल जी ने कवि चन्द के घर भिजवाई। और एक हथिनी, एक मोतियों की माला, तथा दो अंगूठी रावलजी ने अटाले के अध्यक्ष बनवीर हारे को दी। फिर सूर्य संक्रान्ति के दिन रावल जी ने एक लाख रुपया नकद और रत्नाभरण तथा कारुंडौ ग्राम पुरोहित गुआराम को दिया। इसके सिवा रावलजी प्रतिदिन डेढ़ सौ मुहर चारणों को दान देते, उनकी आज्ञा थी कि जो आवे उसी को उनके अटाले से भोजन मिले।



२६

गजनी के दल बादल दिल्ली की ओर बढ़े चले आ रहे थे। पंजाब में भगदड़ मच गई थी। नगर गाँव लूटे और आग की भेंट किए जा रहे थे, यह त्रासदायक समाचार दिल्ली आ पहुँचा। लोगों के दिल धड़कने लगे। सबको अपनी-अपनी पड़ी। राजा तो रङ्गमहलों में रस रङ्ग में मस्त है फिर कौन प्रजा की रक्षा करेगा? सभी को यह चिन्ता लगी थी। नगर के सब बनिये, महाजन, नगर सेठ श्रीमन्तशाह के पास एकत्रित हुए। बड़े सुकुमार सेठ जो कभी घर से बाहर पाँव भी न देते थे सभी एकत्रित हुए। सबने विचार किया कि इस अवस्था में हमारी जान माल की रक्षा कैसे होगी। कैसे अपनी पुकार राजा तक पहुँचाई जाय? जिन्हें प्रजा की हीर पीर थी—वे तो सब तीन तेरह हुए। चामुण्डराय बेड़ियों में पड़े हैं, कैमास बुरी तरह मारे गये, मधु-

शाह प्रधान तो दरबार ही से निकाल दिया गया। राजकुमार रेनसी लड़के हैं। अब हम कहाँ जायँ, किससे कहें ?

नगर सेठ ने कहा—क्या कहें बड़ा टेढ़ा समय है, खबर पहुँचाना तो दूर मर्द बच्चा तो राजा का मुँह देख ही नहीं सकता। आठों पहर द्वार पर लठैत दासियों का पहरा पड़ा रहता है। राजकुमार रेनसी ने ४ मास से पिता का मुँह नहीं देख पाया है। अब एक बात मेरी समझ में आई है। चलो हम सब गुरुराम पुरोहित के घर चलें। वे महाराज का पूजन कराने रोज जाते हैं; वे कुछ करें तो करें।

सबने यही तय किया। वे गुरुराम पुरोहित के घर पहुँचे। सब हाल सुनकर गुरुराम ने कहा—क्या कहें—चित्तौरपति रावल समरसिंह आज बांस दिन से यहाँ दिल्ली में आए हुए हैं पर राजा ने अभी तक उनकी बात भी नहीं पूछी। इससे चलो हम भी चलते हैं, कवि चन्द के घर चलो। यह उन्हीं की बाई विप्रबेल है। वही कुछ हेसनेस कर सकते हैं।

सब लोग पीनस, चंडोल, हाथी, घोड़े, पालकी, नालकी, आदि सवारियों पर चढ़ कर चन्द कवि के द्वार पहुँचे। और सब विथा कह सुनाई। सब सुनकर कवि चन्द सबको साथ लेकर राजप्रसाद की ओर चले। पीछे २ मैकड़ों नगर निवासी भी चले।

इन लोगों के द्वार पर पहुँचते ही द्वार रसिका स्त्रियाँ मार करती अपने की हाथ की लाल लकड़ियाँ लेकर इन महाजनों पर दूट पड़ीं। इस मार से घबराकर सब सेठ महाजन सिर पर पाँव रख पत्ता झाड़ भाग खड़े हुए।

परन्तु गुरुराम पुरोहित और कविचन्द ने हिम्मत नहीं हारी। इन के सिर पर सैकड़ों लाठियाँ छा गईं पर वे बढ़ते ही गये। जब प्रथम पौर पर पहुँचे तो हल्ला गुल्ला सुन इच्छनी रानी ने दासी से पूछा—देख कौन है, क्या है ?

दासी ने लौट कर कहा—कवि चन्द और पुरोहित गुरुराम आए हैं। तब रानी ने आज्ञा दी कि इन बाँदियों को रांक और कवि से पूछ कि क्या आज्ञा है।

परिचारिका ने आकर उन्हें आदर से बैठाया और कहा—कहिए क्या आज्ञा है। तब कविचन्द ने एक पुर्जा लिखकर दिया और कहा—यह पुर्जा राजा तक पहुँचा दो। पुर्जे में लिखा था—

कगार अप्पह राज कर, सुप जंपह इह वत्त ।
 गौरी रतौ तुअ धरनि, तू गौरी रस रत्त ॥
 नहि कन्ह चौहान, धीर पुड्डीरन निडुर ।
 नहि सुमन्त कैमास, राय गोइन्द अपं डर ।
 नहि सुलोह लङ्गरिय, अत्तताई सुभङ्ग भर ।
 नहि पजन पँवार, सलख लष्पन बघेल नर ।
 भौहान भूप बन्धुन वरन । सरन जाहिढिल्लिय नयर ॥
 घर नयर राय रावर समर । सक सहाव गोरी वयर ॥



२७

राजा ने पुर्जा पढ़ा तो वह क्रोध से लाल हो गया। पुर्जा उसने फाड़ कर फेंक दिया। और क्रुद्ध स्वर में कहा—ठीक है अब भाट और ब्राह्मण ही राज्य की रक्षा करेंगे।

संयोगिता राजा का क्रोध देख सन्न रह गई। राजा ने कहा—बहुत हुआ। मैं अभी दरबार में जा राज काज देखूँगा।

राज सभा मण्डप जो महीनों से सूना पड़ा था, सजने लगा।

सैकड़ों नकीब और हरकारे दरबार की सूचना देने चारों ओर को दौड़ पड़े। देखते-ही-देखते हाथी घोड़े सेना, सामन्त सज धज कर राज द्वार पर एकत्रित होने लगे। राज कर्मचारी अपने-अपने स्थान पर उठ कर बैठ गये। बाँकी मूँछों वाला राजा गद्दी पर बैठा।

सब से पहले मधुशाह दीवान ने रावल जी के आने की सूचना दी और कहा—उन्हें आए आज बीस दिन हो गए। यह सुनकर राजा सोच सागर में डूब गया। वह कहने लगा हाय मैं बड़ा अभाग हूँ, पूज्यपाद रावल जी को आए बीस दिन हो चुके और मुझे खबर भी नहीं। खैर अब ऐसा उपाय होना चाहिए जिससे वे चित्तौर को चले जायें—क्योंकि समय टेढ़ा है। कुछ और विचार सलाह कर राजा दरबार से उठ सब रानियों के महलों में जाकर सब से मिला।

दूसरे दिन भोर ही नित्य कर्म से निवृत्त कर राजा ने सिर पर कुसुमल पाग बाँधी। सुगन्ध सेवन की, दो लाख मूल्य की कुन्डल की जोड़ी कानों में पहनी, वागा पटका आदि पोशाक धारण कर बाहर आ रावल जी की भेंट को चला। नए पुराने सब सामन्त घोड़ों पर सवार राजा को कुण्डलाकाल घेरे चले, पीछे सेना। रावल जी ने सुना तो घोड़े पर सवार हो आगे बढ़ आये रास्ते पर दोनों सम्बन्धी आ मिले और प्रेम से भुज भर भेंट की। पीछे सब मिलकर निगमबोध पहुँचे। यथा स्थान बैठ लौकिक शिष्टाचार के बाद दिल खोल अपनी बीती राजा ने सुनाई। पीछे सामन्तों की भेंट हुई। इधर-उधर की हँसी दिल्लगी की बातें हुई। इसके बाद राजा ने रावल जी से महलों में पधारने का अनुरोध किया।

साले बहनों महलों में आए। संयोगिता के महलों में खास कमरे में दरबार सजाया गया। उसमें कन्नौज से आया दहेज का सब सामान सजा। रावल जी के साथ राजा जड़ाऊ मसनद पर बैठे। नीचे कश पर अपनी-अपनी मिसल से सब सरदार। रावल जी सहित

सब सरदारों का टीका और इत्र पान हुआ। फिर बनवीर परिहार ने निवेदन किया कि रसोई तैयार है तब सब सरदार सहित दोनों राजा अटाले पर पहुँचे। षड्रस व्यञ्जन थालों में परसे तैयार थे। सब लोग अपने-अपने थालों पर बैठ गये। कर्कूट, नकुल, हिरण, कौंच, हँस, सुआ, मोर आदि जन्तु अटाले में उपस्थित किए गए कि जिससे भोजन में दिनाई या विष का लेश हो तो पता लगे।

भोजन के बाद सब लोग फिर उसी कमरे में बैठे। पान इलायची हुई और सबसे मिल भेंट कर रावल जी अपने डेरों को खाना हुए।

दूसरे दिन भोर ही राजा ने जैतराव रामराव बड़ गुजर, प्रसंगराय खींची, जामराय जादव, कवि चन्द वरदाई और गुरुराम को बुलाकर सलाह की अब सबसे पहिले रावल जी को विदा करने की तदवीर लगाओ जिसमें ये यहाँ से चले जायँ। कौन जाने घोड़ा छूटे हाथी विचले। ऐसे में सगे सम्बन्धी को शामिल करना ठीक नहीं।

राजा की आज्ञा से जैतराव ने कन्नौज से दहेज में आए हाथी घोड़े सजाकर प्रस्तुत किए और बहुत से बहुमूल्य मोती माला तथा नक्दी के थाल प्रस्तुत किए, फिर सब दर्वारियों को संग ले राजा विदाई का सामान ले रावल जी के पास पहुँचा।

शिष्टाचार सम्पन्न होने के बाद चन्द कवि ने रावल जी से कहा—महाराज, इस समय हमारे ऊपर कुसमय आया है इसलिए हम आपको सादर विदा करते हैं, क्योंकि उधर भी आपके बिना हानि होता होगी। कृपा पूर्वक चित्तौर पधारिए और हमारे ऊपर सदा कृपा भाव बनाए रखिए।

यह सुनते ही रावल जी क्रोध में भर कर बोले—“वाह, क्या कहते हैं, तुमने हमारी बड़ी मर्यादा रक्खी। शत्रु सिर पर चढ़ा आ रहा है और हम विदा हो जायँ। ऐसे सुअवसर पर हमारे

जैसा दानग्राही सुपात्र तुम्हें भला कहाँ मिलेगा ? सो हम दान लेकर कायर की भाँति चित्तौर चले जायँ और तुम शत्रु से लोहा लो । अरे, धर्म जाय तो धन किस काम का ? क्या ऐसा ही सम्बन्ध हमारा तुम्हारा है ?

कवि चन्द ने विनय से कहा—मरजी हुई तो ठीक है, आपका बल प्रताप जग जाहिर है । पर इस समय जो फल पान है लेकर कृपा कीजिए । आपकी दया से इधर कई मुकट बन्ध राजा सहायक हैं और सब शूर सामन्त हैं । इधर की कोई चिन्ता न कीजिए ।

तब रावल जी की भाँह क्रोध से चढ़ गई और मुँह लाल हो गया । उन्होंने कहा—ठीक है जो करतूत की है—वह मैं जानता हूँ । जो कुछ कमाई की है उसका फल मिलेगा । आज हमें हठ करके विदा करते हो कि लोग मनमानी करें और हमें कहें कि मौका देख खिसक गये । सच है इस दरबार में अब ऐसे ही लोग रह गए हैं ।

रावल जी का यह सांस्त्विक रोष देख राजा उनके पैरों लग गया और हाथ जोड़ कर बोला—अपराध क्षमा कीजिए अब आप जैसा कहेंगे वही करूँगा ।

रावल जी ने कहा—हम क्या जानें, हमें तो विदा करदो और अपने सामन्तों की सलाह लो ।

पृथ्वीराज ने नीची निगाह से कहा—आप हमारी हीर पीर के जानकार हैं, शुभ चिन्तक हैं । हम वही करेंगे जो आपकी आज्ञा होगी । अब जो अपराध बन पड़ा वह क्षमा कीजिए ।

रावल जी ने कहा—तुमने कैमास को क्यों मार डाला ? और बादशाह को पकड़ कर उसका मान भङ्ग करके उसे छोड़ किस लिए दिया ? आपस में लड़कर शब शूर सामन्त कटा दिए । जो कुछ रहे सो

भी सत्यानाश कर दिए ? चामुण्डराय जैसे महावीर को बेड़ी भर कर डाल दिया ? अच्छा जो हुआ सो हुआ अब चामुण्ड की बेड़ियों उतारो । तुम्हारे दरबार में यादव क्रूरम्भ, बड़ गुजर, रघुवंशी और पुण्डार, राठौर पडिहार, चालुक्य चहुआना बड़े-बड़े सरदार हैं पर तुम्हारे राज्य की ढाल चामुण्डराय है वे जैसे डीलडौल वाले हैं वैसे ही युद्ध निपुण हैं उन्हें संतुष्ट करो ।

राजा ने स्वीकार किया और एक कुसुमानीपाग और तलवार गुरुराम के हाथ चामुण्डराय के पास भेजनी चाही । पर रावल जी ने कहा—नहीं, इस संभर राजा को स्वयं उनके घर चलना चाहिए ।

१८

सब सामन्तों और कविचन्द को लेकर पृथ्वीराज और रावल समर-सिंह चामुण्डाराय की पौर पर जा पहुँचे । परन्तु सङ्कोच से चामुण्डराय के सम्मुख न जा सका । कवि चन्द और सामन्तों को भेजा कि तुम जाकर बेड़ियों उतरवा दो । तब मैं मिलूँ ।

सबने भीतर जाकर देखा-देव के समान देह धारी चामुण्डराय चुप नीचा सिर किए बैठा है । पैरों की आहट पा उसने सिर उठाकर देखा । कवि ने आशीर्वाद देकर कहा—महाराज पृथ्वीराज की आशा है कि आप बेड़ियों उतार डालिए ।

चामुण्डाराय ने कहा—तनिक सी बात पर मेरे पैरों में बेड़ियों डाल दीं और कन्नौज में सबस्व सत्यानाश कर लाए, अब राजा को मुझसे क्या प्रयोजन है'

कवि ने कहा—

हे वीर, आप दिल्ली राज्य की ढाल हैं, शत्रु बढ़ा चला आ रहा है। अब बीती बातों को भूल कर क्रोध त्याग बेड़ियाँ उतार तलवार ग्रहण कीजिए। राजा ने इसीलिए आप को बेवस कर रखा था कि सङ्कट के समय काम आवेंगे। यह राज्य आप ही की भुजाओं के भरोसे है। पूज्यपाद रावल जी तथा महाराज आपकी पौर पर पधारे हैं और पौर पर खड़े हैं। पर राजा लज्जावश आपके सामने नहीं आ रहे हैं। इससे मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि बेड़ियाँ उतार डालिये।

चामुण्डाराय ने कहा—हैं तो सब लोग प्रमार, यादव, खींची, पुण्डीर, कूरमा, सलख, आदि सामन्त सूरमा ? न हुआ अब चामुण्ड तो क्या ?

कवि ने कहा—राव जी, ऐसा मत कहिए। इस समय धन, देश तथा मान पान का हिस्सा नहीं बंट रहा है, तलवारों से शरीर के बटवारे का प्रश्न है। इससे मनका मैल दूर कर यह कुसुम्वानी पाग बाँधिये और राजा की तलवार ग्रहण कीजिए। यह कुसुम्वानी पाग या तो विवाह के समय बाँधी जाती है या राज सम्मान के समय। सो आप शत्रु से यह युद्ध करने को पाग बाँधते हैं, आपकी यह बात अमर रहेगी। रावजी, आप तो अद्वितीय वीर पुरुष हैं, आपने हमारे से होड़ की, चालुभ्यों का दर्प कुचला, और बादशाह को पकड़ा, आपके समान योद्धा और कौन है। सो कृपा कर बेड़ी उतार कर वीर वेश धारण कीजिए तथा अपने पूज्य के पूज्य रावल जी से भुज भर मेंटिए।

कवि ने इतना कहा था कि पृथ्वीराज ने आकर अपनी कमर से तलवार खोलकर चामुण्डाराय के बाँध दी।

चामुण्डाराय ने यह देखकर कहा—जब मेरा स्वामी मुझ पर दयालु है तो फिर क्या ? यह कह उसने बेड़ियाँ उतार डालीं और राजा को प्रणाम किया। पृथ्वीराज ने डेढ़ हजार घोड़े, सोलह हाथी,

दस मोतियों की माला, बहुत से पाटम्बर, जागीर तथा सिरोपा दिया । चन्दवरदाई ने विरदावली गाई । फिर चामुण्ड ने रावल जो तथा राजा का सत्कार किया । सब हँसी खुशी मिले ।

सामन्तों ने कहा—चामुण्डराय जी अब बँधे अच्छी तरह से । अभी तो आपके पैरों में लांहे के कड़े थे जिन्हें आप एक झटके से तोड़ सकते थे । पर अब तो स्वामी स्नेह से तन मन बँध गया ।

अब चामुण्डराय सज धज कर जय बरसों बाद राजा के दिए घोड़े पर सवार होने लगा तो उसने विधिवत घोड़े के पैर, मस्तक कन्धा नेत्र और पूँछ की पूजा कर और शीश नवाकर सवार हुआ तथा तलवार घुमाकर राजा की जय जयकार की । चामुण्ड राय के छुटने से घर २ आनन्द छा गया । और सब लोग मिलकर फिर निगमबोध रावल जी के डेरों पर आ पहुँचे ।



२६

निगमबोध में युद्धमन्त्रणा हुई । मन्त्रणा सभा में राजा पृथ्वीराज, रावल समरसिंह, जैतराव, प्रसंगराय, जामराय, रामराय, बलभद्रराय, चामुण्डराय, सिंह प्रमार, लोहाना, अजान वाहु, देवराज गगरी, मल्हवराय, रामदेहराय, प्रसंगराय, देवराय, आदि सामन्त सरदार गुरुराम पुरोहित और कवि चन्द्र सम्मिलित हुए । प्रारम्भ में कवि चन्द्र ने सबकी विरद बखानी । अन्त में कुछ युद्ध की चर्चा चली । भिन्न २ सामन्तों ने अपनी २ सम्मतियाँ दीं । अन्ततः सम्मुख बढ़कर युद्ध करने का निर्णय हुआ ।

राजकुमार रेणुसी को दिल्ली के रक्षण का भार सौंपा गया। उसकी सहायता के लिये कान्ह के पुत्र ईश्वरदास निड्डुरराय के पुत्र, कैमास पुत्र प्रताप, जैतपुत्र करनसिंह, सामन्तसिंह, प्रतापसिंह, जैसिंह आदि मन्त्रा सामन्त नियुक्त किये गये। रावल समरसिंह ने अपने भतीजे वीरसिंह को अपने सात सौ सवार लेकर और सब ऊँच नीच समझाकर रेणुकुमार की रक्षा का आदेश दिया, पृथ्वीराज ने एक एक घोड़ा और एक एक हाथी सब सामन्त कुमारों को और एक हाथी राजकुमार को दिया। राजा ने अपने गले की मोतियों की माला राजकुमार को पहनाई और अपनी तलवार उसकी कमर में बाँधी। इस पर सब सामन्तों ने जय जयकार किया और गुरुराम ने आशीर्वाद दिया। कवि ने विरद बखानी। राजकुमार हाथी पर सवार हो राजधानी की ओर फिरे।

राजा और सब सामन्त भी घरों को फिरे। रातों रात दिल्ली में सेना की तैयारियाँ हुईं। पृथ्वीराज संयोगिता के शयन कक्ष में पहुँचे परन्तु आज की मिलन रात्रि भी वियोग रात्रि से बुरी थी। पृथ्वीराज और संयोगिता दोनों की आँख से नींद गायब थी। पृथ्वीराज कभी प्रिया का मुख देखते कभी युद्ध के स्वप्न देखते, इसी प्रकार वीर और शृंगार रस में डुबकियाँ लेते उनकी रात कटने लगी। संयोगिता उल्टी साँसें लेती ऐसी पड़ी थी मानो उसके शरीर में प्राण हैं ही नहीं, राजा उससे तनिक भी छेड़-छाड़ करता तो वह हाय हाय करके रुदन करने लगती। सारी रात राजा को समझाते मनाते तसल्ली देते बीती। इतने में कुक्कुट ने बाँग दी। जिस सुख में वर्षों लिप्त रहकर भी तृप्ति नहीं होती उसके लिये अब घड़ी पल की बाट जोहना क्या? यह सोचकर राजा शैया त्याग उठ खड़ा हुआ। इसी समय राजद्वार पर जंगी बाजे बज उठे। भेरी, नफीरी, नौबत, नगारे, रणतूर सिंगी, शहनाई, नरसिंहा, आदि बाजों का शब्द सुन शरीर में सनसनाहट होने

लगी। हिंसते, ठिनकते, फुदकते और औरख से खुरी करते घोड़े एक तरफ नट की सी कला बाजियों खाते थे। दूसरी ओर धुआधार कारे कारे बहर से मतवाले हाथियों की भीड़ जुड़ी थी। बीचोबीच पैदल सिपाहियों का जमघट था।

अभी सूर्योदय में देर थी। नव यौवन मदीनियों ने राजा को सुगन्धित तेल लगाकर अंग मर्दन किया। फिर राजा को उष्ण जल से स्नान कराया। केशर रलित चन्दन का लेप किया। अब गुरु राम पुरोहित ने आकर श्राद्ध तर्पण कराया। फिर राजा ब्राह्मणों की सेवा के लिये आसन पर बैठा। पाँच वेदपाठी ब्राह्मणों ने राजा को तुलसी दल दिया। उसने उसे सिर पर धारण कर तलवार से अपनी मौत माँगी। फिर ब्राह्मणों का चरणोंदक ले अपने आसन पर बैठा। खुरों में चोदी और सींगों में सोना मढ़ाई हुई सौ गायें लाई गईं उन्हें राजा ने ब्राह्मणों को दान दिया। फिर सिर से पैर तक शृंगारित ६ कन्याएँ आईं। उन्हें राजा ने नवग्रह का दान दिया। फिर हजार ब्राह्मणों को स्वर्णदान कर राजा ने पोशाक धारण करी। और सूर्योदय से प्रथम ही राजा एक दीर्घकाय दंतारे दुरद पर सवार हो गया।

जिस समय पृथ्वीराज सज-धज कर चलने लगा संयोगिता चित्र लिखित पुतली-सी खड़ी देखती रह गई। ज्योंही सेना ने कूच का नकारा बजाया और पृथ्वीराज उसकी आँखों से ओट हुआ त्योंही संयोगिता थर-थर काँपती हुई पृथ्वी पर गिर पड़ी। यह देख दासियों ने उसे उठाकर पलंग पर लिटा दिया और उसे सचेत करने का यत्न करने लगीं। उस अचेत अवस्था में उसके मुँह और नाक से विष की सी ज्वाला गर्म श्वास निकलती थी और नेत्रों के कोयों में आँसुओं की बूँदें निकल-निकलकर इस तरह बिला जाती थीं कि जैसे आकाश से टूटे तारे बिला जाते हैं। उसे सचेत करने के लिये दासियों ने विविध उपचार किए। कोई धनसार घिसकर उसके हृदय पर लगाने

लगी, कोई गुलाब जल के छींटे मुख पर देने लगी। कोई हाथ पाँव में कपूर मलने लगी। इसी प्रकार प्रातःकाल हो गया। तब उसे कुछ चैन हुआ—परन्तु ऐसा नहीं कि कुछ चाले चाले। वह प्रिय पति का ध्यान कर अचल समाधि-सी लगा मौन बैठ रही। सेना के बाजों की ध्वनि उसके कानों में आ आकर हाहाकार कर रही थी। जो संयोगिता अब तक अपने को अत्यन्त सौभाग्यवती समझती थी, इस समय दुर्दैव की प्रेरणा से एक अनाथ अभागिनी की भाँति कलप रही थी। राजमहल में जो रस राम की सामग्री उसके सुख के लिये थी उसे देख-देखकर उसका दुख बढ़ा हो रहा था।

पृथ्वीराज के पयान के समय से संयोगिता ने भोजन करना बिलकुल त्याग दिया। वह केवल जल पीकर प्राणों पर खेलने लगी। उसने मन में कहा—अब तो सब बातें गई प्राणप्रिय के संग, वे यदि लौट कर दिल्ली आए तो ठीक, नहीं तो जिस लोक में जावेंगे वहीं उनके पीछे जाऊँगी।

राजा ने दिल्ली में दस कोस चलकर अपनी छावनी डाली।

३०

वीर सामन्त चन्द्रसेन पुण्डरीक कन्नौज में मारा गया था। तब उसके सत्रह वर्षीय पुत्र धीर पुण्डरीक को पिता की पाग बँधाई गई। धीर पुण्डरीक देवी जालपा का उपासक था। वह छत्तीस सेर की लोहे की साग उठाता था। और उसने वीर परीक्षा के दिन उसी साँग से एक हाथ में ही आठ मुठी मोटाई का अष्ट धातु का जैतखम्भ दो दूक कर दिया था। सम्मुख युद्ध में उसने नौ सौ हाथियों के घेरे में से एक

लाख मीरजादों की तलवार की मार के नीचे गजनी के शाह को पकड़ा था ।

इसी धीर पुण्डरीर के परिवार को कालान्तर में राजा ने लोगों के कान भरने से दिल्ली से निकाल दिया था । पुण्डरीर परिवार लाहौर चला आया । लाहौर उन दिनों दिल्ली का परगना था । जिस समय राजा ने यह आज्ञा दी, उस समय धीर काँगड़े में था । अपने परिवार का दिल्ली से निकल जाने का हाल सुनकर उसे बहुत दुःख हुआ । उसने कहा—राजा और वेश्या किसी के मीत नहीं ।

उसने सोचा—अब राजा के राज्य में नहीं रहना । सो वह सिन्धु पार कर गजनी शाह के शरण गया । शाह ने अपने पकड़ने वाले वीर का बहुत मान किया और साठ गाँव का परवाना और खिलअत देकर अपना उमगाव बनाने की इच्छा प्रकट की । परन्तु धीर ने वह स्वीकार नहीं की और शाह से नम्रता से निवेदन किया कि मैं महाराज पृथ्वीराज का सामन्त हूँ, किसी और का मुसाहिव नहीं हो सकता । आपसे मैं केवल बैठने को स्थान चाहता हूँ । शाह ने उसे फाटक के निकट ढिल्ला पहार की बैठक दी । धीर गजनी से ढिल्ला पहार चला आया । वहाँ से उसने अपने पुत्र पावरू पुण्डरीर को लाहौर पत्र लिखा कि तुम यहाँ चले आओ । पावरू ने पत्र पाते ही लाहौर में लूट मचा दी तथा राज का खजाना, तोशाखाना आदि सब लूटकर धीर के पास पहुँच गये । लूट का हाल सुन धीर को बहुत दुःख हुआ, पर जो हो चुका वह हो चुका था ।

कुछ दिन बाद राजा ने धीर को पत्र लिखा कि जो होना था, हो गया । मैंने तुम्हें क्षमा किया, अब तुम जल्द लौट आओ । इस सूचना पा धीर ने काँगड़े होकर दिल्ली जाने की तैयारी कर दी । इसी समय कुछ घोड़ों के सौदागर गजनी में आए । धीर ने २ हजार घोड़े राजा को भेंट करने के लिये खरीद लिये । परन्तु ये घोड़े शाह शहाबुद्दीन

की फर्माइश से लाए गये थे। जब शाह के पास बाकी घोड़े लेकर सौदागर गए तो शाह ने घोड़ों को नापसन्द कर दिया। तभी किसी ने शाह से कहा कि सिरों के घोड़े तो ये धीर पुण्डरीर को बेच आए हैं। यह सुनकर क्रुद्ध होकर शाहबुद्दीन ने सौदागरों के सब घोड़े छीन लिये और उन्हें कैद कर लिया। धीर ने यह सुना तो उसने शाह को लिख भेजा कि आप चाहें तो घोड़े मुझ से ले सकते हैं, इसमें सौदागरों का दोष नहीं है, उन्हें क्षमा कीजिए। शाह ने इस पर सौदागरों को छोड़ दिया। २० भी दे दिये। इस घटना से सौदागरों से धीर की घनिष्ठता हो गई। वे धीर के पास ही कुछ दिन के लिये मुकाम हो गये।

शाहबुद्दीन ने जब यह सुना कि धीर अब दिल्ली जाना चाहता है तो उसने ऐसे भयानक शत्रु को नष्ट कर डालना ही अधिक ठीक समझा। उसने उन सौदागरों ही के द्वारा, धीर को मार डालने का षड्यन्त्र रचा। धीर ने अपने परिवार को तो प्रथम ही खाना कर दिया था, अब वह सौदागरों के साथ काँगड़े की राह खाना हुआ। सौदागरों ने अटक पार होते ही अवसर पा धीर को विश्वाघात करके मार डाला और उसकी लाश गजनी भेज दी।

धीर के भाई बेटों ने जब यह सुना तो उन्होंने पठानों पर चढ़ाई करके उन्हें बोन २ कर परिवार सहित मार डाला। सब सूचनाएँ राजा ने भी सुनी, शाह ने भी सुनी। अन्ततः धीर के परिवार के लोग हिसार में आकर बैठ गये।

धीर पुण्डरीर के पुत्र पावस ने जब शाह की सेना की अवाई सुनी तो वह स्थिर नहीं रह सका। शाह की सेना चिनाव पार कर लाहौर से चालीस कोस पर मुकीम थी। और राजपूतों की सेना सतलज पार कर चुकी थी। पावस पुण्डरीर ने भाई बन्धों को एकत्र कर कहा—हम से घर में बिगड़ गई तो क्या हुआ? इस समय स्वामी की सेवा करना

हमारा परम धर्म है । यह कह अपनी सेना और भाई बन्दों को लेकर पुण्डीर पृथ्वीराज की सेना में आ उपस्थित हुआ । सब सामन्त उसे राजा के पास ले गये । पावस ने राजा को प्रणाम किया और पैर छूकर क्षमा चाही । पर राजा ने उत्तर तक न दिया । पावस पुण्डीर चार घड़ी तक राजा के सामने खड़ा रहा । तब राजा ने उसे बैठने की आज्ञा दी । बैठकर उसने कहा—“सामन्तों, यद्यपि मुझे स्वामी द्रोह का दोष लग चुका है परन्तु मैं आज आपके समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अपने इस शरीर को होम कर पुण्डीर कुल के कलंक की कालिमा धोकर बहा दूँगा ।”

इस वचन से राजा प्रसन्न हो गया । उसने उसे दान मान सिरोपाव से संतुष्ट किया और सब सामन्त भी प्रेम से उसे गले मिले ।

३१

हाड़ा हम्मीर राजा का एक सामन्त था । वह राजा से विरोधी हो काँगड़े में बैठा था । राजा ने कविचन्द से कहा—जाओ उसे तुम समझा बुझा कर मना लाओ । तथा माता जालन्धरी का दर्शन पूजन भी कर आओ । राजा हाडुलीराय हाड़ा को एक पत्र भी लिखा । उसमें लिखा—बाकी बात विचार कर स्वामी धर्म का विचार करे और युद्ध में आकर सम्मिलित होओ ।

कवि चन्द राजा का पत्र और संदेश लेकर काँगड़े आकर हाडुलीराय हम्मीर से मिला । राजा का पत्र दिया संदेश भी कहा ।

हाडुलीराय हम्मीर ने कवि की बड़ी आवभगत की । राजा का पत्र भी आदर मान से ग्रहण किया । तथा सबका कुशल क्षेम पूछा ।

कवि ने कहा, और तो सब कुशल क्षेम ही है, परन्तु इस समय शहाबुद्दीन ने दिल्ली पर चढ़ाई की है, सो सब सेना सहित महाराज तो पानीपत में जा पहुँचे हैं, अब उन्होंने मुझे आपको बुलाने भेजा है। सो चलकर क्षत्रिय धर्म पालन कर दोनों लोक में यश प्राप्त कीजिए।

हाडुलीराय ने कहा—कवि, किसलिये मैं पृथ्वीराज के पास जाऊँ और उसके लिये लड़ूँ मरूँ? उस शाह शहाबुद्दीन के पास न जाऊँ जिसने मुझे आधा पंजाब देने का वचन दिया है, जिसे मेरी पीढ़ी दर पीढ़ी भांगे विलसंगी?

कवि ने कहा—यह कैसी धिक्कार के योग्य बात है। रावलजी, तुम जाति धर्म को निलाञ्जलि देकर एक धर्म शत्रु के मित्र बनते हो? तुम्हें नरक का भय नहीं?

हम्मीर ने कहा—नरक स्वर्ग किसने देखा है। तुम्हीं कहो—पृथ्वीराज ने हमारा कैसा अपमान किया? हम क्या और सामन्तों से पद मर्यादा में हेठे हैं?

कवि ने कहा—अब यह समय इन बातों पर विचार करने का नहीं है। चलो स्वामी को शीश अर्पण कर सुकीर्ति कमाओ।

हम्मीर ने उत्तर दिया—पृथ्वीराज की सभा में जैतराव जैसे सूरमा हैं तो फिर हम्मीर की क्या आवश्यकता है? वह तो अपने को सिंह और मुझे सियार समझता था?

कवि ने क्रुद्ध होकर कहा—वास्तव में जैतराव सिंह ही है। वह वास्तव में गोरी की सेना को छिन्न-भिन्न करेगा और तुम्हें भी धूल चटावेगा। इस समय दाव और डासा हुआ है, जो चाहे कह डालो।

राव ने हँसकर कहा—अच्छा तो चलो देवी जालपा के मन्दिर में, वहाँ शाह के पक्ष की और राजा के पक्ष की चिट्ठियाँ छोड़ी जायँ, जो चिट्ठी उठे उसी के अनुसार करूँगा।

कवि ने कहा—सच है। जब राजा सत छोड़ता है तब वह प्रनीति का आचरण करने लगता है। स्त्री सत छोड़ती है तो पराए पर जा बैठती है। जब जोगी सत छोड़ता है तो स्त्रियों के माया जाल में जा फँसता है। और जब शूर सत छोड़ता है तब मरने से डरने लगता है। सच्चा शूर तो वही है जो आड़े समय पर स्वामी का साथ दे। पामर पुरुषों की इस लोक में अपकीर्ति होती है तथा परलोक में उन्हें नर्क मिलता है।

हम्मीर—हमारा स्वामी सेवक का सम्बन्ध तभी टूट चुका जब राजा के सामने जैतराव ने हमें श्चान बनाया।

कवि—रावजी, आप कन्नौज के अपने पराक्रम को कैसे भूल गये।

हम्मीर—कवि, यहाँ तुम्हारी चतुराई न चलेगी। तुम जैतराव जामराय जैसे योद्धाओं की कीर्ति बखान करो। और जो जी में आवे आज कह लो। कल जब शाह को चढ़ा लाऊँगा तब सब आपकी कलाई खुल जायगी।

कवि—रावजी, बातों से बड़े हेर-फेर हो जाते हैं। जिस निर्लज्ज को बात ही न लगी तो वह मनुष्य ही क्या? परन्तु खैर, चलो जालपा देवी के मन्दिर में।

दोनों मन्दिर में पहुँचे। मन्दिर के दुर्ग को मात करने वाले ऊँचे कोट थे, बीच में बड़वानल से ज्वाला ज्योति की लौ निकल रही है। ऊपर मोतियों का छत्र आच्छादित है। दोनों ने बाहर वाले बगीचे में स्नान किया, और धूप दीप नैवेद्य आदि पूजन सामग्री ले दोनों मन्दिर में गये। कवि ने विधिपूर्वक देवी का पूजन किया। पूजन के बाद उसने हाथ जोड़ देवी की स्तुति की—हे अन्तर्यामिनी, इस समय हिन्दू मुसलमानों में संग्राम उपस्थित है, मैं राजा पृथ्वीराज की तरफ से हाँहुलीराय को रण निमन्त्रण देने आया हूँ। सो आप इन्हें राजा के पास जाने की आज्ञा दीजिए।

हाहुलीराय ने हाथ जोड़कर कहा—हे देवी भगवती, यह कवि-चन्द आपका सेवक है, न राजा का न शाह का। इसे किसी की तरफदारी से क्या ? किन्तु मैं संसारी जीव हूँ। मानापमान में मेरा सर्वस्व है।

इतना कह वह एकाएक मन्दिर से बाहर निकल गया। और द्वार बन्द कर कुण्डली बाहर से चढ़ा दी। द्वार पर सेना के पहरे बैठा दिये। इस प्रकार कवि को मन्दिर में बन्दी बना हम्मीर सेना सहित शाह के पास चला गया। कवि के अनुचरों ने भागकर सब वृत्तान्त राजा से कहा—राजा ने क्रोध से उन्मत्त हो पावस पुण्डरीर को बुलाया। उसे पान का बीड़ा देकर कहा—हे वीर तू इसी समय अपने भाई बन्दों सहित जा और उस विद्रोही हम्मीर का सिर काट ला।

हाहुलीराय अपने चालीस हजार पैदल और पाँच हजार सवारों की सेना लिये दौड़ा दौड़ मुलतान की ओर भागा जा रहा था। पावस पुण्डरीर अपने तीन हजार भाई बेटे और ५०० सवारों को सङ्ग लेकर पाँच पहाड़ों के रास्ते मीरागाँव होकर तावड़तोड़ डबल कूँच करता उसके पीछे दौड़ा।

जब तब हम्मीर चिनावे के घाट पहुँचे, तब तक पुण्डरीर ने उसे धर दबाया। हमीर की लगभग आधी सेना चिनाव पार कर चुकी थी। कुछ नदी में और कुछ इस पार थी। पावस पुण्डरीर ने चढ़ी सवारी मार काट प्रारम्भ कर दी। घनघोर युद्ध हुआ। हम्मीर उस पार जा चुका था, पर उसके दो भाई इस पार थे। दोनों को पुण्डरीर ने घेर कर उनका सिर काट लिया। यह देखकर हम्मीर की सेना भाग खड़ी हुई। अब पुण्डरीर ने पानी में घुस कर उन्हें मारना प्रारम्भ कर दिया। पाँच सौ पुण्डरीर जल में हल पड़े। नदी का जल लाल हो गया। इस युद्ध में १८० पुण्डरीर खेत रहे। स्वामीद्रोही को इस प्रकार दण्ड देकर जब पुण्डरीर लौट कर राजा के निकट आया तो आनन्द र्क

बधाइयों बजने लगी । सब सामन्त पावस पुण्डरी से गले मिले । राजा ने उसे गले लगा कर अपने हाथ से तलवार बँधाकर सब पुण्डरीों को चार चार तलवार बाँधने की आज्ञा दी ।

हमीर ने शाह के पास जाकर केसर, कस्तूरी, मेवे और ६ घोड़े नजर किये । शाह ने नजर कबूल कर उसे अप्रना मुसाहिबा बनाया ।



३२

शाह ने हमीर और अपने सेनापतियों से राय मिलाकर अपनी सम्पूर्ण सेना को इस प्रकार विभक्त किया । ४ लाख सेना पीछे मुलतान में छावनी डालकर पड़ी । चार लाख सेना के दो टुकड़े करके उन्हें आक्रमण के लिये सन्नद्ध किया गया । सौ चुने हुए सरदारों को इसमें से एक लाख सेना बाँटकर युद्ध क्षेत्र के बाहर चारों ओर बखेरने का निश्चय किया । इस प्रकार सेना को ब्यूह बद्ध किया गया । सेनानायकों को आवश्यक बातें समझा दी गईं और सूचनाएँ दे दी गईं । इसके बाद उसने धीरे-धीरे कूच प्रारम्भ किया । कुछ पड़ाव चल कर उसने कमाल खाँ सरदार को सतलज की राह एक लाख सेना देकर आगे रवाना किया । उसे आदेश दिया कि भूमि का उतार चढ़ाव तथा राजपूती सेना की संख्या आदि देख भाल कर सब भेद ले आवे । इस लिये एक संधि पत्र भी उसके साथ भेजा । शाह का यह सेनापति दूत के रूप में बेधड़क पृथ्वीराज की सेना के पास तक चला आया । और राजा के दरबार में उपस्थित हो शाह का खरीता महाराज पृथ्वीराज को दिया । खरीते में लिखा था—“हिन्दुओं के राजा पृथ्वीराज को

मुसलमानों के बादशाह शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी का सलाम मालूम हो। आगे मालूम हो कि इस तरफ हम और उस तरफ तुम दोनों एक एक कौम के सरताज हैं। दोनों की बादशाहत की सरहद मिलती है। इससे हमेशा मुल्की भगड़े दरपेश रहते हैं। ये रोजाना के फसाद हमें पसन्द नहीं। लिहाजा बजरिये रोबकार आपको इत्तला दी जाती है कि या तो आप पंजाब का आधा सूबा जहाँ तक मुसलमानों का ज्यादा सरोकार है हमारे ताबे कर दो और अपने लड़के रेनसी को मेरी खिदमत में भेज दो, या जङ्ग लो।

पत्र पढ़कर राजा तो मौन साध बैठा। परन्तु चामुण्डराय से न रहा गया। उसने कहा, गजनी का यह शाह बड़ा ही निर्लज्ज है। यह सासूडा और मदनपुर की खबर भूल गया। अथवा घक्कर नदी की लड़ाई में मुसलमानी सेना का एक पुतला भी जीता न बचा था, यह भी उसे याद न रहा। जब उसे अजमेर में बाँध कर बन्दी किया गया था और उसने तलवार सिर पर रख पीर पैगम्बर और कुरान की कस्में खाई थीं, उसे भूल गया।

राजा ने चामुण्डराय को रोककर कहा—अब इन बातों से क्या लाभ है, उसकी करनी उसके साथ, हमारी हमारे साथ। इसके बाद राजा ने दूत से कहा—शाह की बातों का उत्तर हम युद्ध भूमि में देंगे। उसे सादर बिदा किया।

कमाल खां दरबार का रंग ढंग देख सहम गया था। वह राजा को प्रणाम कर वहाँ से चला। इस बीच शाह चार लाख सेना को खानखाना तातार खाँ, रुस्तम खाँ, हाजी खाँ, और फीरोज खाँ की आधीनता में लिये बढ़ता आ रहा था। पांच दिन कूच करके तातार खाँ दिल्ली चहार गाँव में शाह से जा मिला, तथा राजपूतों के सब हाल सुनाए। सुनकर शाह ने सब सरदारों को बुलाकर सलाह की।

दूसरे दिन ब्यूवद्ध होकर शाह का लश्कर आगे बढ़ा । चार लाख कटक के चलने से जो धूल उड़ी उससे सूर्य आच्छादित हो गया । रण बाघों के रव से दूर २ आतंक छा गया । मार्ग के नगर गांववासी घर बार छोड़कर भागने लगे । चारों ओर आतंक का राज्य छा गया । इस प्रकार मुकाम करते हुए शाह ने सतूलपुर के पास पड़ाव डाला ।

३३

राजपूत सेना की संख्या कुल तिरासी हजार थी । श्रावण अमावस्या का दिन था, शनिवार की रात थी । जब शत्रु सेना को सम्मुख देख राजपूत सेना में रण सज्जा होने लगी । रण वाद्य मेघ गर्जना की भाँति गर्जने लगे । हाथियों की भूलों की टनटनाहट और घोड़ों की ठीके कर्कशशब्द मुन कर पृथ्वी थर २ काँपने लगी । समस्त सेना को व्यूह बद्ध किया गया । सेना के चार भाग कर तेतीस हजार सैनिकों के साथ रावल समरसिंह बाईं बाजू पर जमे । जामराय जादव, बल-भद्र, कूरम्भ, पावसराय पुण्डीर, मदनसिंह परिहार ये चार सदाँर उनके सहायक सेना नायक रहे । उन्नीस हजार सैनिकों को लेकर जैतराव प्रमार दाहिनी बाजू के नेता हुए । उनकी सहायता पर अरजराज राठौर, अचलीश राय भार्ठी, जामराय जादव, वैकटराय और धीरराव प्रमार, चन्द्रसेन बड़ गुज्जर, वीरसिंहराय चहुआन, विजैराज वाघेला, और तेजलराय डोंपिया ये नौ सरदार नियत हुए । उन्नीस हजार सेना लेकर चामुण्डराय हरावल में जमे । उनकी पीठ पर भारथराय, तियाराय परिहार, जगलीराय दाहिमा, ठंठरराय हॉंका, पुंजपहार और

भीमराय सोलंकी ये पाँच सरदार जमे । शेष १० हजार सवार लेकर राजा सेना के पृष्ठ भाग में गुरुराम पुरोहित, चंचिराय गहलौत, पंचानदराय आदि सरदारों के साथ आसीन हुए । इस प्रकार व्यूह बद्ध हो भरी राजपूत सेना ने जंगी सलामी दी ।

जामराय जादव ने राजा के कान में कहा—समय टेढ़ा है । रावल जी अपने पूज्य हैं, जहाँ तक हो उन्हें बचाना चाहिए । यह सुन राजा ने बलभद्रराय कूरंभ, पावसराय पुण्डरीर और मदन सिंह परिहार को इशारा किया और घोंड़ा बढ़ा कर रावल जी के निकट आ निवेदन किया कि आप व्यूह में सम्मिलित मत हूजिए । पीछे सेना के नेता होकर सेना की चाल और दाव पेच परखते रहिए । सुनकर रावल जी ने हँस कर कहा—यह समय स्नेह विचार का नहीं है, यहाँ सब सामन्त सिपाही बराबर हैं । फिर उन्होंने राजा को संग ले सारी सेना का चारों ओर घूम कर निरीक्षण किया । फिर सेना के मध्य भाग में आकर एक मोंतियों की माला रावल जी को पहनाई । इसके बाद सब कोई यथा स्थान स्थित हुए ।

शाह ने अपनी सेना का व्यूह इस प्रकार रचा । एक लाख सेना के साथ शाह का भाई उसमान खॉं दाहिने पक्ष पर रहा, उसके साथ चिमन खॉं, समी खॉं, सहमूद खॉं, रुस्तम खॉं, सुरेस खॉं, हाजी खॉं, गाजी खॉं, काजी हुजाव, हुसेन खॉं, सादी मातेक, अलोमान खॉं, हाहुली राय हमीर और तत्तार खॉं थे । एक लाख सैनिकों के साथ ईसव खॉं, अलील खॉं, याकूब खॉं, हवीव खॉं, सुलतान खॉं, महमूद खॉं, मीरन सेख खॉं, कमाल खॉं, सुलेमान नौरोज खॉं, सैकअली, मीर अबदुल्ला, मीर आजा आदि सरदारों के सहित सरदार खुरासान खॉं बाँए पक्ष पर जमा । मासूफ खॉं, फीरोज खॉं, पीरन मीर, उमीद खॉं, नैकट राव आदि सरदारों के सहित शाह पीठ पर एक लाख

सैनिकों सहित, तथा एक लाख सैनिकों के साथ अनेक प्रमुख सरदार हरावल में।

दो घड़ी दिन चढ़ते २ दोनों दल आगे बढ़े। और देखते २ दोनों दल वेग से एक दूसरे में धँस गये। वर्षा ऋतु होने के कारण जम्बूर और बन्दूकें नहीं चलीं, तलवार, कटार, विछुआ, बरछा, सेल, साँग, की मारा मार होने लगी। योद्धा कट २ कर गिरने लगे। पृथ्वीराज के सैनिक बाण वर्षाने लगे। राजा की बाण वर्षा अच्छी थी।

पहर भर के युद्ध में मुसलमानों की सेना के दो भाग हो गये। राजपूत उसे बीच से चीर कर भीतर धँस गये। और दोनों ओर मारकाट प्रारम्भ कर दी। तीसरे पहर दोनों सेनाएँ अपने अपने पड़ाव को हट गईं। आज के युद्ध में चामुण्ड राय घायल हुए। और उनके ५५० सैनिक हत हुए। देवराय बगारी, साखुलाराय, भाटी मालहनसिंह परिहार, भूनिंग राय राठौर तथा मोनिंगराय ६ सौ कूरंभ राजपूतों सहित खेत रहे। जैतराव प्रमार घायल हुए तथा रावल जी के ५०० सैनिक हत हुए।

शाह की सेना के २५ हजार सैनिक हत हुए।

३४

दूसरे दिन रविवार को भोर के तड़के ही दोनों ओर की सेना आमने सामने हुई। रावल जी ने जामराय जादव की सलाह से गरुड़ ब्यूह रचा। एक पक्ष पर बलभद्र राय, दूसरे पर जामराय जादव चौंच

और कंधे कान्ह पाँव और पिण्ड पर रावल जी पूछ पर मदनसिंह और बीच में उदर स्थान पर राजा पृथ्वीराज रहे ।

शाह ने चन्द्र व्यूह रचा । उसका आधा भाग तातार खों के आधीन तथा आधा खुरासान खों के तहत में रहा । रुस्तम खों मारुफ खों डाकवटों की सेना सहित हरावल में रहे । हाहुलीराय हम्मीर के साथ शाह पीठ पर ।

युद्ध प्रारम्भ होने से प्रथम पावस पुण्डरी ने राजा से हाथ जोड़ कर कहा—“क्या आज्ञा है ? आज बादशाह को बाँध लाऊँ या हम्मीर का सिर काट लाऊँ ? राजा ने कहा—“धीर के सपूत, आज तू हम्मीर का सिर काट लावे तो बात है ।”

देखते ही देखते दोनों दल भिड़ गये, पुण्डरी धकापेल करते हुए हम्मीर की तलाश में मुसलमानी सेना को विदारने लगा । मारुक खों ने हम्मीर की रक्षा की और व्यवस्था की । पर पुण्डरी मतवालों की भोंति प्राणों का मोह छोड़ धँसते ही चले गये । घड़ी भर में वे हम्मीर के पास जा पहुँचे । पहिले उन्होंने हम्मीर के भाई नारेन को घायल किया । अब तक बैजला खवास और बहत्तर पुण्डरी काम आ चुके थे । पर हम्मीर पर नजर पड़ते ही पावस ने हॉक लगाई कि “खड़ा रह नमक हराम जाता कहाँ है ?” उसने भीम वेग से उस पर आक्रमण किया, उसे बचाने को दस हजार सैनिक पावस पर टूट पड़े पर पावस तनिक भी न हिचका । उसने घोड़ा उड़ाया और हम्मीर के सिर पर जा पहुँचा । खूब तलवारें चलीं । अवसर पा एक हाथ ऐसा मारा कि हम्मीर का सिर धड़ से जुदा हो गया । उसे भाले में छेद कर पावस वेदाग अपने लश्कर में लौट आया । हिम्मत बहादुर पावस ने एक लाख शत्रु सेना के बीच यह अलौकिक कृत्य कर राजा पृथ्वीराज को अर्पित कर प्रणाम किया । राजा यह देख गद्गद् हो गया । पावस को

बहुत शाबाशी दी। फिर कहा—धन्य बेटा, अब चार-चार तलवारें बाँधकर उस निर्लज्ज शाह को बाँध लाओ।

इस समय तक दोपहर दिन चढ़ चुका था। तथा युद्ध बहुत घमासान हो गया था। रक्त की नदी बह रही थी। लोथों का अम्बार लगा था। हम्मीर का सिर काट लेने पर शाह क्रुद्ध होकर हाथी पर श्वेत वस्त्र पहन सवार हुआ। और सेना को उत्साहित करता आगे बढ़ा। मुसलमान भी दूने आवेश में अल्लाह अकबर कहते आगे बढ़े। पृथ्वीराज अब भी अपने स्थान पर अचल था। मुसलमानों का बल बढ़ा देख रावल समरसिंह ने तेरह हजार वीरों के दल के साथ मुसलमानों पर धँसारा किया। उन्होंने कहा—वीरों, मरने मारने की ठान लो, जीतने की आशा छोड़ दो।

इस पर वीर प्राणों का मोह छोड़ भूखे सिंह की भोंति शत्रुओं पर भीम वेग से टूट पड़े। रुएड-मुएडों के ढेर लग गये। बड़ा ही भयानक युद्ध हुआ। इसी समय-समय हजार डाकवरों सहित शाह का एक भतीजा मारा गया। यह देख नुसरत खाँ से न रहा गया। वह अपने खुरासानी सवारों को लेकर समरसिंह पर टूट पड़ा। यह देख कान्ह कुमार अपने सैनिकों सहित खुरासान खाँ से भिड़ गया। और ऐसा चिकट युद्ध किया कि नुसरत खाँ का एक भी सैनिक जीता न लौटा। नुसरत खाँ भी खेत रहा। यह देख शाह ने क्रोध से फुफकारते हुए सरदार दीन मुहम्मद को ललकारा कि इस छोकरे को लेना। उस समय कान्ह के साथी दस पाँच ही बचे थे। निदान दीन मुहम्मद और कान्ह दोनों भिड़ गये। लड़ते-लड़ते दोनों लोहू लुहान हो गये। अन्त में दीन मुहम्मद दो दूक होकर गिर गया। तब हम्मा खाँ और कमाल खाँ उसके छोटे भाई कान्ह पर झपटे, दोनों ने कान्ह पर बच्छे चलाए, जो कुमार कान्ह की छाती को फोड़कर आर-पार निकल गये। परन्तु गिरते-गिरते कान्ह ने दोनों के सिर उतार लिये। इस प्रकार यह

वीर भारी पराक्रम दिखाकर गिरा। रावल जी ने हर्ष शोक के आँसू गिराए। वे कठिन मार कर रहे थे। अपने चार-चार सरदारों को हजारों सैनिकों के साथ मारा जाना सुनकर शाह ने मुस्तफा खाँ और भिया मान खाँ को कहा—देखो तातार खाँ को पूरी मदद करो। दोनों सरदार तीन हजार सवारों को ले समरसिंह की ओर मुड़े। यह देख जैतसिंह, अरिसिंह, तेजसिंह, सामन्तसिंह, नरसिंह, रतनसिंह आदि नौ सरदार ढाल बनकर रावल जी के आगे अड़ गये। पर शाह के दोनों सरदारों ने सामने का रुख काटकर बगल से आक्रमण किया। वहाँ भी बाजू पर रावल जी के अच्छे-अच्छे वीर मौजूद थे। इस समय ऐसा युद्ध हुआ कि रक्त की नदी बह निकली और किसी को अपने पराये की सुध न रही। अन्त में राव सामन्तसिंह ने मुस्तफा खाँ के सामने जा उसे ललकारा। और दोनों ने एक दूसरे पर साँग छोड़ी। फिर दोनों एक दूसरे से जुट गये। दोनों ने कटार एक दूसरे की छाती से पार कर दी और दोनों साथ ही भू-शायी हुए।

मुस्तफा खाँ के गिरते ही मुसलमानी सेना पस्त हिम्मत हो भागने लगी। तब ग्यारह अरब सरदार अपने सवारों के साथ समरसिंह पर पिल पड़े। उनको समरसिंह के नौ सरदारों ने रोका। एक बार फिर खूब गहरी कटाकटी मची और एक घण्टे के युद्ध में वे ग्यारह अरब कटकर गिर गये। उधर रावल जी के भी सात सरदार खेत रहे।

उधर हाडुलीराय का सिर काट लाने के बाद राजा की आज्ञा से पावस पुण्डरी शाह को बाँध लाने के लिये घोड़ा बढ़ाना ही चाह रहे थे कि बलभद्रराय ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—भैया, एक बाजी तुम मार लाये—अब शाह को बाँध लाना मेरे जुम्मे है। मैं आक्रमण करता हूँ, तुम मेरी पीठ पर रहना। ये बातें ही कर रहे थे कि जामराय जादव मोर्चे पर जा जमा।

उधर निशानों के अफसर सिवान खाँ ने शाह से कहा—मैं इस काफिर पृथ्वीराज को पकड़ने जाता हूँ। शाह ने उसे आज्ञा दी। सिवान खाँ नंगी तलवार हवा में घुमाता हुआ अपने पठान सैनिकों को ले वेग से पृथ्वीराज की ओर बढ़ा। यह देख जामराय व जादव अपने भाई बेटों को सङ्ग ले गर्जता हुआ उसके सम्मुख आ अड़ा। दोनों वीर भिड़ गये। पहिले साँग फिर तलवार लेकर दोनों का ऐसा रोमाञ्चकारी युद्ध हुआ कि दोनों ओर के वीर हाथ रोक यह युद्ध देखने लगे। लड़ते-लड़ते दोनों वीर भूमि पर गिर गये, गिरकर फिर उठे और भिड़ गये। कुछ देर दोनों का मल्ल युद्ध हुआ, फिर अवसर पा सिवान खाँ ने जामराय को पछाड़ दिया और उसके कलेजे में कटार भोंक दिया। कटार लगते ही एक बार 'राम' कहकर जामराय ने प्राण त्याग दिये।

अब सिवान खाँ घनघोर निशान बजाता आगे बढ़ा तो बलभद्रराय कुरंभ उसके सामने आ अड़ा। पीछे से पृथ्वीराज का इशारा पा समरसिंह, सेवजसिंह सांखुला, पूनराय परिहार, पहारपति सारंग, बैनराय बघेला, देवराय सारंग, हरदेवसिंह खींची, डोड़राय सोलंकी और समरसिंह तोवर नौ सरदार बलभद्रराय की सहायता को चढ़ दौड़े। जब इन जबर्दस्त सरदारों को धसारा करते शाह ने देखा तो उसने हूक दी। जिससे सत्तार खाँ का भाई जलाल जलूस बाण बर्साता हुआ आगे बढ़ा। उसके वाणों की आन न मानकर बलभद्रराय सीधा उसके सिर पर जा धमका और एक ही हाथ में सिर धड़ से जुदा कर दिया। यह देख बगली से कमाल खाँ ने घोड़े को तिरछा मोड़ कर बलभद्र पर साँग फेंकी। जो बलभद्र के कलेजे के आर पार हो गई। पर बलभद्र ने उसी हालत में घोड़े को उछाला और कमाल पर बुर्ज का ऐसा हाथ मारा कि कमाल वहीं ठौर हो गया। इस पर उसका भांजा ताजखाँ बलभद्र पर झपटा और एक ही हाथ से बलभद्र का सिर धड़ से जुदा कर दिया। सिर

कटने पर भी बलभद्र के कवन्ध ने दो घड़ी तलवार चलाई। बलभद्र की रक्षा के प्रयत्न में अपने सब सिपाहियों सहित राव समरसिंह भी खेत रहा।

अब इस मोर्चे पर वीर वर पावस पुण्डरि ने दल बल से धसारा किया। हम्मीर का सिर काट लाने में पावस ने जो पुरुषार्थ प्रकट किया था, उससे मुसलमानों में उसका आतंक फैल गया था। मरते कटते इस समय उसके पास कुल एक हजार पुण्डरी शेष थे। उसे बढ़ता देख उधर से गाजीखॉ दो हजार सवारों को ले आ धमका। गाजीखॉ एक विशालकाय दैत्य था। उसका लाल चेहरा, काली डाढ़ी और मशाल सी जलती आँखें देख साक्षात् यम मूर्ति सा प्रतीत होता था। पावस के शरीर की ताल बराबर तो उसकी साँग थी। पावस उसे देखते ही सम्मुख आ अड़ा। दोनों ने एक ही काल में साँग फेंकी—जो दोनों के कलेजे में पार हो गई। इस पर भी दोनों तलवार ले भिड़ गए। और दोनों ने एक साथ ऐसा वार किया कि दोनों के सिर कटकर धूल चाटने लगे। यह अलौकिक युद्ध देख अपने पराये सब स्तम्भित हो गये। इस प्रकार वीर श्रेष्ठ पावस ने वीर गति पाई।

पावस के गिरते ही शाही सेना में नगारे बजने लगे। अब दिन नाम को शेष था। रक्त की नदी बह रही थी। रुण्ड मुण्डों के अम्बार लगे थे। माँस मज्जा की कीच हो गई थी। शूरों के कटे अव-यव मछली के समान तड़फ रहे थे। इतने में सूर्य अस्त हो गया, तारे चमकने लगे। दोनों ओर के योद्धा मलिन मुख पीछे फिरे। युद्ध स्थल में केवल घायलों की हाय हाय ही सुनाई देने लगी। ज्यों-ज्यों रात गम्भीर होती गई, पशुओं के कर्कश स्वर उस आर्तनाद में आ मिले।

रात कठिन बीती। प्रभात होते ही दोनों दल फिर आमने सामने

हुए। राजपूत सेना का मुखिया जैतराय प्रमार श्वेत पोशाक धारण कर के एक हाथी पर सवार हुआ। हाथी भी श्वेत साज से सजा हुआ था। यह हाथी विशालकाय बड़े-बड़े दाँतों वाला और बड़े-बड़े युद्धों में विजय पाए हुए था। जैतराय चौहान सेना के दाहिने बाजू पर, चामुण्ड राय बाँए बाजू पर और हरावल में रावल समरसिंह थे। शाह की सेना का आज का मुखिया खुरासान खॉं था।

मुसलमानों ने जैतराय को ही राजा पृथ्वीराज समझ लिया और शाह की सारी ही सेना उस पर टूट पड़ी। इस विकट सङ्कट से जैतराय तनिक भी न घबराया, उसने शत्रु की सेना में अपना हाथी हूल दिया। शत्रुओं ने उसके हाथी को चारों ओर से गोंस लिया। तब वह हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हुआ और दोनों हाथों से तलवार चलाने लगा। उसके भीषण वेग से शत्रु सेना काई सी फट गई। वीर पवार ने प्राणों का मोह छोड़ ऐसा कठिन संग्राम किया। शत्रु मित्र सभी दाँतों में उङ्गली दबा बैठे। जैतराय का जहाँ हाथ पड़ जाता, मय सवार घोड़े के दो टूक हो जाते। हाथियों के सँड कटकर हाथी चिंघाड़ते। परन्तु एकाको युद्ध कब तक चलता। एक पक्की घड़ी तक शमशीर चला कर लोथों पर लोथों का अम्बार लगा कर अन्त में जैतराय कट कर गिरा। सिर कटने पर भी उसके कवच ने पाँच सौ शत्रुओं को काटा।

जैतराय पर ऐसी सङ्कट की घड़ी देख चामुण्डराय ने चार हजार चुने हुए दायमा वीर लेकर बड़े वेग से धँसारा किया। जिस समय चामुण्डराय ने धावा बोला, उस समय दोपहर हो गया था। शाहने वीर चामुण्ड को इस वेग से टूटते देख उस पर अग्निवाण, जम्बूके और भोका घाले जिससे दाहिना वीर कुलाटें खा खाकर गिरने लगे। युद्ध प्रारम्भ होते ही शाह के भानजे ताजम खॉं ने अपने चुने हुए बलूची सवार लेकर पृथ्वीराज को पकड़ने के इरादे से सीधा राजा पर

धसारा किया। और मारकाट करता हुआ राजा तक जा पहुँचा। यह देख राजा की आँखों में खून बरसने लगा। उसने अपने पीलवान को ललकारा। पीलवान के ओकुल लगाते ही राजा के हाथी ने ताजन खों के हाथी को ऐसा धक्का दिया कि ताजन खों हाथी से नीचे आ गिरा। उसके गिरते ही राजा के हाथी ने उस पर पैर रख सूंड से चीर कर दो फाँक कर दी। यह देख उसका भाई राजन खों नौ हजार पठानों का दल बादल ले राजा पर छा गया। राजा का हाथी चारों ओर से शत्रुओं से घिर गया। राजा ने बड़ा भारी पराक्रम दिखाया। पर मौका बेढव गंस गया था।

राव जैतराय प्रमार ने राजा को बड़े ही संकट में देखा तो वह अपने सवारों को लिये हाथी बढ़ाता हुआ राजा के पास आ पहुँचा। और आनन फानन राजा के माथे का छत्र उच्चक कर अपने माथे पर लगा लिया। राजा को विरोध का या रोकने का अवसर ही न मिला। राजा का छत्र अपने माथे पर लगा कर उसने राजा को धकेल कर पीछे किया।

परन्तु चामुण्डराय शत्रु सेना में धँसते ही गये। अब इन पर मिया मंसूर और मकदर खों दो रुहेले सरदार चौदहसौ, रुहेलों के साथ दूट पड़े। ये घाड़ों से उतर कर पैदल लड़ने लगे। इसी समय चामुण्डराय का पैरोंद कट गया। इसलिये उसे भी घोड़े से उतरना पड़ा। इसी समय मकदर खों ने सामने आकर उसे ललकारा। चामुण्डराय ने ललकार सुनते ही उस पर साँग छाड़ी। पर वार इकंगी हो गया। उसने जो वाण मारा सो चामुण्ड के ठीक धुक-धुक में जाकर बैठा। उसी दम मियाँ मंसूर ने उछल कर तलवार का एक हाथ दिया जिससे चामुण्डराय का सिर धड़ से जुदा होकर दूर जा गिरा। परन्तु सिर कटते २ चामुण्डराय ने दोनों रुहेलों को टार कर दिया। चामुण्डराय के कवन्ध ने ऐसी तलवार चलाई कि शत्रु मित्र सब भयभीत होकर भागने लगे। चौहद सौ रुहेलों में एक भी जीवित नहीं बचा।

जैतराव के मरने पर प्रसंगराय खींची ने पीला चौर और छत्र सिर पर धारण किया। जैतराव को मार कर मुसलमान समझने लगे थे कि राजा पृथ्वीराज मारा गया। परन्तु अब जो उन्होंने दूसरे छत्रधारी को देखा तो सब अचम्भे में रह गये। शाह ने क्रुद्ध होकर गाजी मीरन और खानखाना मीर मान को सम्मुख भेजा। घड़ी भर कटाकटी के बाद दोनों सरदार और प्रसंगराय तीनों ही धराशायी हुए।

अब मुसलमानी सेना फिर पृथ्वीराज का चारों ओर से दबाने लगी। तब देवराव बगरी ने बिल्ली खोली और प्रबल वेग से शत्रुओं को काटने लगा। इसकी सवारी में नौ घांड़े मारे गये। दसवें पर सवार होते समय हजारों तलवारों ने उसके टुकड़-टुकड़ कर डाले।

इस प्रकार वीर वरों को मरकर गिरते देख पृथ्वीराज की आँखों में आँसू आ गये।

शाह की सेना में नगाड़े और रण हूरे बजने लगे। शाह ने हाथ उठा कर कहा—वह राजा है, पकड़ी, जाने न पावे। समूची शाही सेना राजा पर पिल पड़ी। तब सिंहराय प्रमार ने राजा का प्रणाम कर घोड़ा बढ़ाया। जिस मीर मण्डली में पकड़ो पकड़ो मची थी, उस में हाय हाय मच गई। इस वीर ने ऐसा पराक्रम प्रकट किया कि शत्रुओं की सेना में भगदड़ मच गई। तब शाह ने अपनी जलेब के पन्द्रह सरदारों को सिंह प्रमार पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उन्होंने पैदल होकर तलवारें सूत लीं। और प्रमार को चारों ओर से घेर लिया। शाह ने भी अपना हाथी उसकी ओर बढ़ाया। प्रमार ने उछल कर उसकी सूँड़ काट ली। इसी समय हजारों तलवारें उस पर पड़ीं और वह तिल-तिल कट के गिरा। अब जुट्ट के जुट्ट सिपाही राजा के चारों ओर घिरने लगे। दो कदावर मुसलमान सदाँर नङ्गे हाथ पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए

आगे बढ़े। यह देख अजानबाहु लातों और हाथों ही से उन पर पिल पड़ा और उन्हें देखते ही देखते मार डाला। परन्तु उधर चारों ओर से उस पर तलवारें छा गई और वह टुकड़े-टुकड़े हो कर गिरा।

अब आरजसिंह राठौर खड्ग हस्त हो आगे बढ़ा। उस समय शहाबुद्दीन घोड़े पर सवार हो आगे बढ़ा चला आ रहा था। आजरसिंह ने डेढ़ घड़ी कठिन मोर्चा लिया। उसने बढ़ कर शाह के घोड़े को मार गिराया। पर उसी समय उसका रुण्ड-मुण्ड पृथ्वी पर आ गिरा।

इस प्रकार एक-एक करके इस दिन पृथ्वीराज के सात सौ सामन्त सरदार और बारह जलेब सरदार सब काम आए। इन्होंने शत्रुओं को काट-काटकर ढेर लगा दिया था। सबने एक से बढ़ कर एक वीरता दिखाई। समय की बलिहारी, जिन सरदारों के सिर सुख सेज पर सुख से पड़े रहते थे। जिनके मुख सदा केसर, कपूर, कस्तूरी आदि सुगन्धित वीड़ों से भरे रहते थे, जो आँख उठाकर कभी सीधे नहीं देखते थे, आज वे सिर तलवारों से कट-कटकर लातों में लुढ़क रहे थे।

अब पृथ्वीराज के पास न कोई सदार था न सामन्त। इने-गिने सौर पचास सिपाही थे सो सभी घिरे हुए बेवस थे। राजा ने अपने चारों ओर देखा। तीन तरफ तो बात के जाने का भी योग न था। चौथी तरफ कुछ उदासी देख राजा ने समरसिंह की सेना में जा जुटने के लिए घोड़े की बाग मोड़ी। पर दुर्भाग्य कि घोड़ा अड़ गया। राजा ने बाग का इशारा किया, चाबुक भी मारा, पर घोड़ा उस से मस न हुआ। इस समय मुसलमानी सेना में खुशी के नगाड़े बजने लगे और मुसलमान सैनिक पकड़ो-पकड़ो कहकर राजा पर चढ़ दौड़े।

उधर बाएँ बाजू पर रावल समरसिर कंदहार खों से कठिन मोर्चा

ले रहे थे। जब उन्होंने पकड़ो-पकड़ो का शब्द सुना तो कंदहार को चाल देकर मारते काटते पृथ्वीराज के पास आ गये। उन्होंने भीमराय सौलंकी रणधीरराय दलिणी, परिहार हरसिंह राठौर अचलसिंह, भाटी विजय राज आदि दस सरदारों को आज्ञा दी कि वे मुसलमानों के जमघट को हटावें। उनकी कठिन मार से मुसलमानों के पैर उखड़ गये। यह देख शाह ने साठ मीरजादों को इन सरदारों से लोहा लेने को आगे बढ़ाया।

अब सारी सेना चुप खड़ी होकर इनका युद्ध देखने लगी। इनमें एक-एक की वरनी का युद्ध होने लगा। उन्होंने सोम, तलवार, सेल, शक्ति, फरसा आदि लच्छ मरे हथियार दूर फेंक दिए। केवल कटार, बिछुआ, छुरी, वरगुदा, घुसा आदि मुठ मार हथियारों से युद्ध होने लगा। एक एक के शरीर में सौ स घाव हुए। जब शरीर और हाथ बे काम हो गए, तब एक दूसरे के गले में गोफा मार कर गिर पड़े।

अब स्वयं शाह ने सेना को ललकार कर घोड़े को ँड़ दी और अपने भानजे को नौ हजार सैनिकों के साथ रावल समरसिंह के सामने हूल दिया। रावल जी ने जीवन की आशा त्याग दी और मरने मारने का इरादा करके संग्राम करने लगे। अबसर पाकर खानखाना ने रावल जी पर सॉंग चलाई। वह रावल जी की दोनों जाँघें फोड़ती हुई घोड़े के आर-पार हो गई। उसी समय रावल जी ने खानखाना का सिर धड़ से अलग कर दिया। इसी समय जमानखॉ ने पीछे से आकर रावल जी की कमर में तलवार मारी और उन्हें घोड़े से खींच कर नीचे गिरा दिया। रावल जी मूर्छित हो गये। इसी समय जमानखॉ ने कटार उनके कलेजे में भोंक दी। इस प्रकार रावल जी को गिरते देख राजा शोक सागर में डूब कर जोर-जोर से साँसें लेने लगा। रावल जी के गिरते ही उनके साथ के सीसोदिया वीर जूरु मरने के इरादे से

आगे बढ़े और शत्रुओं की लाशों का अम्बार लगाकर तिल-तिल होकर कट मरे।

अब शत्रुओं ने चारों ओर से राजा को गोंस लिया। उनकी सेना में डफ, ढोल, शहनाई और नगारे बज उठे। शाह से बढ़ावा पाकर मुसलमान दबादब बढ़ते चले आए और राजपूत बेवस सिमटते गए। राजा ने जान लिया कि अब जीने की कोई आशा नहीं है। उसने गुरुराम पुरोहित से कहा—अब आप दिल्ली चले जाइये और राजकुमार की देखभाल रखकर राजकाज चलाइये और मेरी तरफ से निश्चित हो जाइये। मुझे अब मरना होगा।

यह सुनकर गुरुराम ने मन्त्र पढ़कर आशीर्वाद दिया। राजा ने दो लाख मूल्य के कुण्डल कानों से उतार कर उन्हें दिये। कुण्डल हाथ में लेकर और स्वस्ति कहकर गुरुराम ने घाड़े की बाग मोड़ी। परन्तु उन्हें कुण्डल लेते एक पठान ने देख लिया। उसने पीछे से गुरुराम की गर्दन पर तलवार का एक ऐसा हाथ मारा कि उनका सिर कटकर दूर जा पड़ा। पठान ने कूदकर कुण्डल छीन लिये।

पृथ्वीराज ने पुरोहित का इस प्रकार मरण आँखों से देखा तो उसने आँखों में आँसू भरकर कहा—हाय मेरा दान ही गुरु के मरण का कारण हुआ। आज मैंने जाना कि कैमास मर गया है और काका कान्ह और गोयन्द निडुर सब स्वर्ग सिधार गये हैं। अब मैं किससे सलाह लूँ! किससे पूँछूँ! पर अब सलाह कैसी? मेरे सौ सामन्तों में से आज एक भी न रहा। तो अब मैं ही जीकर क्या करूँगा। इतना सोचते-सोचते राजा का मुँह क्रोध से लाल हो गया। उसने ज्वाला मय नेत्रों से शाह की ओर देखा। रामराय बड़ गूजर, सिलहदार पञ्चाइन, सारङ्गराय राजा, राय प्रसङ्ग आदि चार सरदार और सौ पचास सिपाही जो बचे थे, वे भी मरन मूठ होगये।

एक बार फिर मार काट मच गई। एक-एक कर सब कट मरे,

चोर वाला खवास और सईस भी जीता न बचा। उस रण क्षेत्र में अकेला पृथ्वीराज अपना धनुष वाण लिये खड़ा था और उसके चारों ओर डेढ़ लाख शत्रुओं का दल बादल था।

जिस समय पृथ्वीराज के चारों सामन्त, बारह पासवान, और सागिर्द पेशा सब मारे जा चुके और मुसलमानों ने उसे गौस लिया तो वह शत्रुओं पर अकेला ही बाण वर्षा करने लगा। राजा का साहस देख शाह भी दङ्ग रह गया।

अब सात सौ मजबूत सिपाहियों को लेकर सेना नायक खुरासानखों और शाह शहाबुद्दीन दोनों पृथ्वीराज के सम्मुख जा पहुँचे। खुरासानखों ने कहा—‘अय, हिन्दुओं के सरताज, मुल्क हिन्द के बादशाह, तू कमान जमीन पर रखदे, क्या कि तू शाहंशाह शहाबुद्दीन गोरी का कैदी हो चुका है। इस पर राजा ने कमान तो न रखी—पर वाण चलाना बन्द कर दिया। शाह ने अपने पासवान उजवक से कहा—कि कमान छीन ले।

उजवक शाह की सेना में फर्द सिपाही था। उसकी १८ भार को तो केवल कमान ही थी और उसके तरकस में तेरह सौ तीर रहते थे। वह १८ भार की लुहॉंगी बाँधता था। वह खाली हाथ पृथ्वीराज के सामने चला। पृथ्वीराज उसकी नजर से नजर मिलाकर डटा खड़ा रहा। जब उजवकखों निकट आ गया तब राजा ने उसके ऐसा मर्मभेदी वाण मारा कि वह वहीं गिर कर मर गया।

इस पर शाह ने दूसरे सद्दारों को आज्ञा दी कि राजा को पकड़ कर बन्दी बनावें। उन्होंने आकर राजा को घेरकर कहा—“कम्बख्त ! काफिर ! शाह का हुक्म नहीं मानता, रखदे कमान, नहीं तो टुकड़े-टुकड़े कर दिया जावेगा।”

राजा के तन बदन में आग लग गई। उसने अन्धाधुन्ध तीर चलाए। अन्त में उसका तरकस खाली हो गया। तब कमान फेंक

तलवार ली। बड़ी देर काट की, वह भी टूट गई। तब कटार निकाली। इस पर शाह के इशारे से इकत्तीस मीरजादे राजा से लिपट गये और उसे बेवस करके बन्दी बना लिया।

इस प्रकार नौलाख अश्वों का अधिपति, जिसका आतंक भारत भर में छाया था, जिसने बड़े-बड़े समर जीते—और जिसने सात बार गजनी के शाह को पकड़-पकड़ कर उसे हँसकर छोड़ दिया, आज सब तेज गँवाकर बन्दी हुआ।

राजपूतों की सेना तो सब कट ही मरी थी। उनकी छावनी लूटकर उसमें आग लगा दी गई। उस रात शाह ने वहीं मुकाम किया और एक सरदार फिरोज ख़ाँ को दिल्ली का राज्य सौंप और उसे कुछ सेना दे उसने दूसरे दिन भोर ही कैदी को लेकर गजनी को कूच किया।

३५

एकादशी बुधवार को दिल्ली में युद्ध समाचार पहुँचा तो रानी संयोगिता ने सुनते ही प्राण त्याग दिए। रावल जी की मृत्यु का समाचार सुन रानी शान्त रस की मूर्ति बन गई। उसने प्रधान को बुला कर चिता चुनने की आज्ञा दी। रानी प्रथा कुमारा के साथ पाँच हजार दामाणियों ने चिता रोहण की तैयारी की। उन्होंने केश सम्हारे, सेंदूर से मांग भरी, सिर से पैर तक सोरह शृङ्गार और बारह आभूषण धारण किए। रंग विरंगे वस्त्र पहने मोतियों की माला गले में पहने। ऊपर पुष्प मालाएँ भी धारण करीं। फिर सब पीनसों में सवार हो चिता भूमि पर पहुँची। वहाँ पर छोटी

बड़ी लकड़ियों के अम्बार लगे थे तथा सब के लिए चन्दन के मन्दिर रचे हुए तैयार थे ।

एक तरफ मृत राजपूतों के वस्त्र गहने आदि रखे थे । सब सतियों ने अपने अपने पति की सम्पत्ति उठाली और उसे गोद में लेकर चन्दन के मन्दिरों में आसन मार कर बैठ गईं । वेद विधि से हवन पूजन करके चिता में आग लगादी गई और कुछ ही देर में आग की लपटें आकाश को छूने लगीं । इस प्रकार बिना आँसू गिराए पाँच हजार राजपूत बालाएँ अग्नि रथ पर बैठ अपने वीर पतियों के निकट सूर्यलोक में पहुँच गईं ।



३६

शाह शहाबुद्दीन तावड़ तोड़ कूच दर कूच करता सीधा गजनी जा पहुँचा । उसने पृथ्वीराज को अपने महल के दक्षिण पार्श्व के एक प्रशस्त खंड में डेरा दिया । हुजाब खाँ को उसने राजा का निरीक्षक नियत किया । तथा बेणीदत्त ब्राह्मण की निगरानी में दस हिन्दु सेवकों को राजा की सेवा के लिए नियत कर दिया ।

वहाँ रहते राजा को तीन मास व्यतीत हो गये । इस बीच छुटकारे के बहुत प्रयत्न किए । तब अत्यन्त शोकाकुल क्लान्त होकर उसने भोजन करना त्याग दिया । वह दिन-दिन दुर्बल होने लगा । बेणी-दत्त ने राजा से बहुत विनती मिनती की, पर उसने एक न सुनी । तब ब्राह्मण ने डर कर हुजाब खाँ से कहा—कि आज डेढ़ पखवारे से राजा ने भोजन नहीं किया । जब शहाबुद्दीन ने यह सुना तो वह पृथ्वीराज के पास गया और उसे भोजन करने को समझाने बुझाने

लगा । इस पर राजा ने क्रोध से आँखें तरेर कर उसकी ओर देखा । शाह से कैदी का इस तरह देखना सहन नहीं हुआ । उसने हुजाबखॉ और मीर कालमखॉ को आज्ञा दी कि तुम इसकी आँखें निकाल कर मेरे सामने हाजिर करो । शाह यह आज्ञा देकर चला गया और मीर कालम की आज्ञा से सिपाहियों ने राजा की मुश्कें बाँध उसकी आँखें निकाल लीं । भाग्य हीन राजा तड़प कर रह गया ।

नेत्रहीन होकर शत्रु के बन्धन में पड़े हुए राजा अब पश्चात्ताप के सागर में डूबने उतराने लगा । एक-एक कर उसे जीवन की भूलें याद आ रही थी । जिसके नाम से पृथ्वी काँपती थी, उसके लिये आज संसार अन्धकारपूर्ण हो गया था । संसार की गति ऐसी ही है । राजा उस बन्दीखाने में पड़ा हुआ बहुधा प्राणाधिक प्रिया सुकुमारी रानी संयोगिता के सहवास सुख को याद कर सिर धुनता, कभी सोचता हाय, मैंने एक दासी के पीछे बालसखा और वॉर बुद्धिमान मन्त्री कैमास को मार डाला । हाथी के लिये चामुण्ड जैसे वीर को बेड़ियों में डाल दिया । कान्ह काका जैसे नर नाहर की आँखों पर पट्टी बाँधवा दी । बिना अपराध धीर पुण्डरी को देशनिकाला दिया, और शिकार की धुन में तपस्वी का आप लिया । अरे मेरे विषय लिप्सा और कामान्ध बुद्धि ने ही मेरा सर्वनाश किया । सुजन सम्बन्धी और कवि चन्द के रोकने पर भी कन्नौज गया । सब सामन्त कटा डाले । संयोगिता के रूप पर मोहित हो सब राज पाट विसार दिया । छड़ी उठाकर हम्मीर जैसे वीर का निरादर किया । न मैं ये अनहोनी अनुचित बातें करता, न आज यह अनहोनी मेरे सिर पड़ती । धन्य-प्रभु धन्य जगदीश्वर, तुम ही गर्वहारी हो । मैं ही वह राजा पृथ्वीराज हूँ, जिसकी दृष्टि से अच्छे-अच्छे छत्रधारियों का तेज भस्म हो जाता था, और आज शत्रु ने बेवस कर करके मेरी आँखें निकाल लीं । इसमें किसी को क्या कहूँ, जैसा किया वैसा ही पाया !

अपने जीवन के अमूल्य दिन मैंने मूर्खता में खोये ? जिसे मैंने दमत्त हो अपनी सम्पत्ति समझा, वही मेरे सर्वनाश का कारण बनी । ब कहों हैं वे राजसी ठाठ, हाथियों का हेल्ला, और सामन्तों का ज्ञा ? मेरे सब सामन्त सूर पासवान, सगे सम्बन्धी भाई बन्दी सहित ही आँखों के देखते काल के गाल में समा गए ? अब न यमुना के महलों की चित्रसारी है, न महल दुमहले और अटा अटारी हैं ।

उन महलों के वे देव दुर्लभ सुख साधन, गिलम गलीचे, मौथी न्धियाँ, वाग बगीचे, विविध सुख साधन इन अन्धी आँखों में भूम हैं, हाय, मेरी प्यारी संयोगिता, इस समय तेरी क्या दशा होगी ? ते कुमुम कोमल, तूने कैसे सहा होगा । अरे, मैं निष्ठुर उसे उसामें छोड़ आया—पलट कर देखा भी नहीं । जिसके लिये चौंसठ मा कटाए, प्राणों पर प्राणों का होम किया, कमध्वज पञ्चराज से बैर था, उसे अनायास ही छोड़ आया । अरे निर्भय, निष्ठुर पृथ्वीराज, भोग अपनी करनी का फल ।

वह सोते समय पाँव दबाने वाली सुन्दरी दासियाँ कहों ? कथा गा कहकर मेरा मनोरञ्जन करने वाले कथक कहों हैं ? अब तो मधुर केला कंठियों के आलाप के स्थान पर सायं प्रातः मुसलमानों के श स्वर ही इस शत्रु पुरी में सुनाई देते हैं ।

धन्य प्रभु तेरी माया । धन्य गर्व-प्रहरी गोवर्धनधारी । अब मेरी तर सुनिए । मैंने जन्म भर कुकर्म किए । क्षत्री धर्म को बिसराया । र्म में रत रहा । परन्तु आज मैं वह अभिमानी पृथ्वीराज नहीं हूँ । दीनहीन अनाथ आपका शरणागत हूँ । प्रभो, मेरे ऊपर कृपाकर अपनी शरण में लीजिये ।

राजा शोक समुद्र में डूबा हुआ इसी प्रकार का प्रलाप करता और धुनता । अन्ततः हुआब खाँ और वेणीदत्त के बहुत समझाने ने हठ करने पर राजा ने भोजन करना स्वीकार किया । सेवकों

ने राजा को गर्म जल से स्नान कराया, उत्तम नवीन पोशाक धारण करवाई और राजा ने जो माँगा वही पदार्थ प्रस्तुत किया। तब राजा ने सन्ध्या पूजन कर भोजन किया और शैया पर जा विश्राम किया। इसी प्रकार दिन पर दिन व्यतीत होने लगे।



३७

देवी जालन्धरी के मन्दिर में वन्द कवि चन्द भूखा प्यासा रह कर मूर्छित हो गया। अन्त में मन्दिर के पट खुले। कवि को होश आया। उसे दिल्ली की दुर्दशा और राजा के वन्दी होने के समाचार भी मिले। कवि धुन बौंध कर दिल्ली की ओर खाना हुआ। दिल्ली पहुँचने की धुन में उसे भूख-प्यास, ऊँच-नीच, धूप-छाया जल-थल का भी ध्यान न रहा। वह ऐसा आपे से बाहर हुआ कि उसे और की तो बात ही क्या, अपने विचारों पर भी ध्यान देने की फुरसत न रही। वह रात दिन दौड़ता दिल्ली की ओर पाँव प्यादा जा रहा था। न सेवक, न साथी। पन्द्रह दिन लगातार यात्रा करता हुआ कवि दिल्ली आ पहुँचा। आकर देखा—वह जगमगाती शोभा-सम्पन्न दिल्ली सूनी पड़ी थी। बाजार सुनसान थे। नगर घाट गली घरों में लोग बसन विहीन, शुष्क और लुटे पिटे बैठे थे। सबका सब कुछ नष्ट हो चुका था। राजद्वार पर ओंधे नगाड़े पड़े थे। सब लोग स्त्री पुरुष आँखों से जार-जार आँसू बहा रहे थे। सबके हृदय दुःख, वेदना निराशा से चूर-चूर थे। प्रत्येक का दुःख पृथक् था। यह सब देख कवि का हृदय हाहाकार कर उठा। एक तन दो शरीर

राजा पृथ्वीराज के दुःख की कल्पना से कवि व्याकुल हो गया। कवि जार-जार रोया, फिर उसने आत्म-हत्या का विचार किया। फिर सोचा नहीं, नहीं, प्राण रहते उपाय करना उचित है। शत्रु को मार कर मित्र का उद्धार करूँ।

यह सब सोच विचार करता हुआ कवि घर आया और आते ही पागल की भाँति स्त्री से पूछा—राजा कहाँ है? कवि की स्त्री ने कहा राजा को बादशाह पकड़ ले गया और उसकी आँखें निकाल ली हैं, यह सुनने में आया है। पृथ्वीराज का नेत्रहीन होने का समाचार सुन कवि कटे वृक्ष की भाँति भूमि पर लटपटा कर गिर पड़ा। कवि की यह दशा देख उसके परिजन एकत्र हो रोने पीटने लगे।

कुछ देर बाद कवि को होश हुआ। उसने आँखें खोली और उठ बैठा। बैठकर उसने कहा—संसार के सब सुख सपने की सम्पत्ति हैं।

फिर उसने विह्वल होकर कहा—हे अदृष्ट शक्ति, तू धन्य है। मुझे मन्दिर में बन्द कराया, राजा को बन्दी और अन्धा करा दिया। जिसकी हाँक से सिंहों के कलेजे टूकते थे, उसे हिरण लातों से मारे !! धन्य देवी, जगन्माया, अब इस वरदायी का दुःख दूर कर, अब तो जीवन जंजाल हुआ। बीते दिनों की याद से कलेजा टूक-टूक होता है। जिन सौ सामन्तों के साथ सदा हिले मिले रहे, वे सब काल के गाल में समा गये। मेरा बाल मित्र, जन्म सङ्गाती राजा, जो जीवन में एक-पल भी अलग न हुआ था, शत्रु के बन्धन में बेवस होकर अन्धा कर दिया गया और मैं उसका कुछ भी साथ न दे सका। वह कह कर कवि मौन होगया। फिर लेखनी ले अपने ग्रन्थ को पूरा करने में जुट गया। और दो मास पन्द्रह दिन में ग्रन्थ पूरा करके अपने पुत्र जल्हन के मुपुर्द किया। और उसे सब आगा पीछा समझा बुझाकर अब कवि ने गजनी की तैयारी की।

कवि की चलाचली का विचार देख उसकी स्त्री ने समझाया कि सुख दुःख में घर ही में रहिये । कवि ने कहा — किसका घर, किसका द्वार, यह सब तो माया है । मुझे मनकी करके कीर्ति लाभ करने दो । होनी अमिट है पर करनी से क्यों चूकूँ ? मुझे राजा के अन्न से उन्नत होना है । कवि ने सिर पर जटा जूट बाँधा, अङ्ग में भभूत रमाई, हाथ में चिमटा लिया । इस प्रकार अवधूत बन, सब माया मोह त्याग घर से निकल गजनी की राह पकड़ी । वह गाँव, नगर, नदी, नाले, जङ्गल, पहाड़, पार करता, भूख प्यास सहन करता, अन्ततः गजनी जा पहुँचा । वहाँ जा कर देखा, गजनी नगर के बाहर कोसों तक कटक पड़ा है । हाथी घोड़े प्यादों का अन्त न था । कोई नमाज पढ़ रहा था, कहीं सईस घोड़ों की दलाई मलाई कर रहे थे । लाल लाल बर्दों पहने शूतर सवार ऊँटों पर चढ़े सरकारी फर्मान उधर से इधर ले जा रहे थे ।

वह आगे बढ़कर नगर में घुसा । शाही महलों के कंगूरों पर उस की दृष्टि गई । नगर की चहल पहल देखता कवि आगे बढ़ता चला गया । बहुतों ने कवि को पहुँचा दुआ दर्जे का समझ पास बुलाकर कुछ देना चाहा । पर कवि ने आँख उठा कर भी किसी की ओर नहीं देखा । वह सीधा राज महलों की सिंहपौर पर जा पहुँचा । वहाँ देखा— बहुत से सफेद लम्बी डाढ़ी वाले मुस्लिम कुरान पढ़ रहे हैं और तसवीह घुमा रहे हैं । हजारों सिपाही नङ्गी तलवारें लिए मुस्तैदी से पहर पर तैनात हैं । लोगों ने कवि को औलिया समझ कर घेर लिया । वे भाँति-भाँति के प्रश्न करने लगे । कवि ने कहा—हिन्दू फकीर हूँ, शाह को अपने इल्म का जौहर दिखा कर दुआ देना चाहता हूँ ।

एक ड्यौदीवान ने कवि को पहचान कर कहा—मैंने तुझे पहचान लिया । तू कविचन्द है, और यहाँ कोई फसाद वर्पा करने के लिये आया है ।

कवि यह सुनकर वहाँ से ग्विसक आया। वह दिन भर महलों के चारों ओर चक्कर काटता रहा। तीसरे पहर हृदय खेलने के लिये शाह की सवारी निकली। कवि चन्द अवसर पा एक गली के मोड़ से निकल शाह के हाथी के सामने जा गड़ा हुआ। पेशवान, सोटेवरदार और बल्लमवरदार उसे हटाने को दौड़े। पर शाह ने उन्हें रोककर कवि को पास बुलाया। निकट आकर कवि ने हाथ उठाकर कहा—हे राजाओं के तेज को भ्रष्ट करने वाले शहंशाह, तुझे यह पृथ्वीराज का दरबारी कवि चन्द आशीर्वाद देता है।

शाह ने हँसकर कहा—“मैं तुझे पहचानता हूँ। अब कह, यहाँ किस इरादे से आया है?”

“केवल अपने स्वामी को कैद करने वाले शाहंशाह को एक नजर से देखने के लिये सो देख चुका। अब जाना हूँ, वद्रिकाश्रम में जाकर तप करूँगा। शाह ने हुक्म दिया—नहीं, तू ठहर, मैं तुझ से बातें करूँगा। इसके बाद उसने हुजाब खों को कवि की पाहुनाई की आशा दे सवारी आगे बढ़ाई।



३८

हुजाब खों ने कवि को भीम खत्री के घर ले जाकर कहा—ये शहंशाह के मिहमान हैं। इन्हें मैं तुम्हारे सुपुर्द करता हूँ, इनकी मुनासिब खातिर होनी चाहिए। जिस चीज की जरूरत हो मुझ से कहना।

हुजाब खों के जाने पर भीम उसे एक सुसज्जित कमरे में ले गया। और अमीरी रीति पर उसकी बहुत खातिरी की। रात होने पर विविध

पक्वान् थालों में सजा कर कवि के सामने लाया। कुछ सूक्ष्म भोजन करके कवि ने कहा—मुझे एक ऐसा घर दे दो, जहाँ मेरे सिवा कोई न हो। भीम कवि को ऐसे एक घर में ले गया। कवि ने कुछ सामग्री मँगाई और वेदी रच होम करने बैठा। घी, मेवा—मिश्री सुपारी, कपूर नारियल का साकल्य ले कवि ने विधिवत होम कर देवी का पूजन कर देवी से वरदान लिया।

प्रभात होते ही भीम सौदागर ने आकर हाथ जोड़ कर निवेदन किया—हे वरदायी, आप त्रिकालदर्शी महा कवि और दिल्ली पति के मन्वा हैं। आपके शरीर पर यह भस्म शोभा नहीं देती, फिर आज आपको शाह के दरबार में भी जाना है। इससे मेरा निवेदन है कि आप स्नान से शुद्ध हो राजोचित वस्त्र धारण करें।

कवि ने भीम का वचन मान्य किया। उन्होंने स्नान कर सुन्दर सुवेश धारण किया और शाह के बुलाने की बात देखते बैठे। थोड़ी ही देर में हुजाव ग्यों उन्हें लेने का आया और कवि शाह शहाबुद्दीन के दरबार में जा पहुँचा। साधारण शिष्टाचार के बाद कवि और शाह में इस प्रकार बातें हाने लगीं।

शाह—तुम दुनियावी भूगड़ों से अलग हो गये हो, फिर मेरी मुलाक़त को क्यों आए ?

कवि—हमारे मजहब में पकीर को तीर्थयात्रा करना जरूरी है, परन्तु बादशाह में सब तीर्थों का समावेश है, इससे मैं आपके दर्शन से सब तीर्थों का पुण्य प्राप्त करने आया हूँ।

शाह—यह बात नहीं। तुम बेखौफ़ कहो कि क्यों मेरे पास आए हो ?

कवि—मैं एक वस्तु माँगने आया हूँ। वचन दें, तो माँगू ?

शाह—माँगो, जो माँगोगे पाओगे। मगर पृथ्वीराज की रिहाई की बाबत खामोश रहना।

कवि—राजा को छोड़ने को नहीं कहता । परन्तु वचन में एक बार राजा ने एक बाण से सात घड़े फोड़कर दिखाने की प्रतिज्ञा की थी । पर राजा वह वचन पूरा नहीं कर सका । मेरी शाह से आरजू है, कि पृथ्वीराज से वह वचन पूरा करा दीजिए ।

शाह—मगर वह तो अन्धा है, तीर चला ही नहीं सकता ।

कवि—आप वचन दे चुके हैं ।

शाह—(हँसकर) वेवकूफी की बात है । खैर, मेरा क्या हरज है, जा, अपने राजा से कह, वह मंजूर करे तो मुझे उग्र नहीं ।

कवि—वह क्षत्री होगा तो वचन पूरा करेगा । शाह ने हुजाब खाँ को आज्ञा दी कि वह कवि को राजा के पास ले जाय । पर खबरदार रहना कि दोनों एक दूसरे के पास न आने पावें, तथा जो बात हुई है, उसके सिवा दूसरी बात न हो ।

हुजाब खाँ कवि को राजा के पास लिवा ले चला, द्वार के पास जा कवि को वहीं रोक भीतर गया; थोड़ी देर बाद वापस आ कवि चन्द का हाथ पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाया । कवि ने कहा—जो हुक्म हो चुका है, उसके खिलाफ मैं हरगिज कोई कार्यवाही न होने दूँगा । इसलिये मेरा हाथ न पकड़ो ।

हिजाब खाँ ने फिर हठ नहीं की । वह कवि को राजा के पास ले गया ।

शोक उत्साह से भरा हुआ कवि राजा के सामने पहुँचा तो उस वीर शिरोमणि को नेत्रहीन मन मलीन साक्षात् करुणा मूर्ति के समान बैठा देख कवि का हृदय हाहाकार कर उठा । उसने हाथ उठा और अपना नाम कह राजा को आशीर्वाद दिया । पर राजा ने सिर नहीं उठाया । तब कवि ने कहा—हे, भीमदेव, चालुक्य को परास्त करने वाले और जैचन्द के यज्ञ को बिगार कर पञ्च सुता को हरने वाले सोमेश सुत सम्भरी नाथ यह कवि चन्द्र आपको आशीर्वाद देता है ।

यह सुन राजा क्रोध से थर-थर काँपने लगा । कवि ने कहा—

राजन, मेरा अपराध नहीं है, आपने मुझे हठ पूर्वक काँगरे भेजा था, वहाँ हमीर ने छल से मुझे मन्दिर में बन्द कर दिया। महाराज, भावी प्रबल है।

यह सुनकर राजा का रुख कुछ नर्म हुआ तो कवि ने फिर कहा— महाराज, उस रात का स्मरण करो, जब अँधेरा होने के कारण हाथ को हाथ नहीं सूझता था और आपने उल्लू का शब्द सुन एक ही बाण से उल्लू को मार गिराया था। तभी आपने शब्दवेधी बाण से सात घरियार फोड़ दिखाने की प्रतिज्ञा की थी, वह प्रतिज्ञा आपने आज तक पूरी नहीं की। सो आज उसे पूरा कर क्षात्र धर्म निवाहिए। शाह का हुक्म हो चुका, अब आपका वरदान चाहता हूँ।

राजा ने कवि के वचन का रहस्य समझ कर कहा—पर आज वह दिन नहीं है, मैं उपवास से दुर्बल हूँ।

“राजन् आप परमार्थी पुरुष हैं, ऐसे दीन वचन आपको नहीं सोहते।”

यह सुन राजा शोक से अधीर हो उठा। उसकी आँखों से टप-टप आँसू भरने लगे। फिर उसने ठण्डी साँस खींचकर कहा—‘कवि पौरुष और कृपि समय पर ही होते हैं सो अब समय नहीं है, मेरी फजीहत मत करो, और जो माँगो सो दूँ।’

कवि ने उमड़ते हृदय को रोककर कहा—महाराज, साहसी जनों के लिये सदा समय है। शरीर के सुख दुःख का क्या? आज है, कल नहीं। बात का विचार करना चाहिए, जो अमर रहती है। राजन्, शोक त्याग सावधान हो जाइये और मुझे वरदान दीजिए। राजा ने कहा—कवि तुम्हारी यही इच्छा है तो यही सही। पर एक शर्त है। मैं दूसरे का हुक्म नहीं मानूँगा। शाह स्वयं तीन बार कहे कि ‘बाण छोड़’ तभी मैं बाण छोड़ूँगा।

कवि ने मन-ही-मन प्रसन्न होकर कहा—महाराज, ऐसा ही होगा।



शाह को उसके मन्त्रियों ने बहुत रोका, पर शाह ने नहीं माना । उसने रङ्गशाला तैयार करने की आज्ञा दी । और सब दर्वारी और नगरवासियों को यह कौतुक देखने को बुलाया । महल के ऊँचे छज्जों पर शाह मुसाहिबों सहित आ बैठा । और उसी के नीचे दाहिने खंभे सात धरियार एक दूसरे की सीध में सजा दी गई ।

रङ्ग भूमि में राजा कवि का हाथ पकड़ कर जा पहुँचा । हुजावखों ने एक कमान उसके हाथ में दी । वह राजा ने टटोलते हुए योंही तोड़ दी । फिर दूसरी दी गई—वह भी तोड़ दी । इस प्रकार सात कमान जब राजा ने तोड़ दी तब मीराखों ने अपने बाप की कमान देते हुए कहा—देखूँ तू कैसा ताकतवर है । राजा उस कमान को पाकर कुछ सन्तुष्ट हुआ और उसका गोसा चढ़ाया ।

मीराखों ने कहा—अगर राजा ने एक तीर में सात धरियार फोड़ दिये तो जहाँपनाह उसे इसी समय रिहा कर देंगे ।

शाह ने कहा—अपनी मुराद से भी ज्यादा पावेगा ।

कवि ने मौका ताककर कहा—हुजूर, यदि चोट देखा चाहते हैं तो राजा को उसकी ही अपनी कमान दी जाय ।

मीरन ने भी इसका समर्थन किया । इस पर शाह ने आज्ञा दे दी ।

अपनी कमान हाथ में आते ही राजा ने उसे बिछुरे हुए प्रियतम की भाँति छाती से लगा लिया । उसे चूमा और आँखों से लगाया । उसके मुख मण्डल पर क्षात्र तेज आ विराजा । भरजोर कमान को

तानकर तीर मोंगा । कालग्रस्त शाह ने तीर देने की आज्ञा दे दी । कवि ने तीर राजा को पकड़ाते हुए कहा—हे शत सामन्त नाथ, सम्भरी नरेश, पृथ्वीराज, निश्चल चित्त हो वाण ग्रहण कीजिए । सत्त न छोड़ एक सर से सत्य लक्ष्य कीजिए । जो कीर्ति बड़े-बड़े पुरुषार्थी वीरों को रच पच कर पराक्रम करने पर नहीं मिली वह आपको एक वाण में मिलती है, सावधान एक से दूसरे की इच्छा न रखना । गिरनार से लेकर गौड़वाना तक देश दवा लेने वाले जयचन्द का यज्ञ विध्वंस करने वाले, शाह को पकड़ कर बार-बार छोड़ देने वाले संभरी नाथ, सावधान !

एक वान चहुआन । राम रावन डथपे ।

एक वान चाहुआन । क्रन्न सिर अर्जुन कपे ॥

एक वान चहुआन । त्रिपुर सिर शंकर विद्धिय ।

एक वान चहुआन । भुमर लक्ष्मन पारद्धिय ॥

सां एक वान संभाई धनी । कियावान नह मुक्कियै ।

घरियार एक इक मुगिरिय । एक वान नृप चुक्कियै ॥

राजा ने कवि का संकेत समझ धनुष पर वाण रोपा और चारों ओर शत्रु से घिरी हुई उस संकीर्ण रंग भूमि में शाह की ओर मुँह कर शाह के हुक्म की प्रतीक्षा करने लगा ।

कवि ने शाह से करवद्ध प्रार्थना की कि हे राजाओं को बन्दी बनाने वाले शाह, पृथ्वीराज आपको छोड़ दूसरे का हुक्म नहीं मानेगा । अतः आप राजा को वाण छोड़ने की आज्ञा दीजिए ।

शाह ने घरियारों में ठाँकर लगवाई । सब लोग पृथ्वीराज की ओर देखने लगे । शाह ने पहिली हुँकार की तो राजा पैतरा बदल कर तन कर खड़ा हो गया । दूसरी हुँकार पर राजा ने कान तक धनुष खींचा । बादशाह के मुँह से तीसरी हुँकार निकली ही थी कि राजा ने वाण छोड़ा । वाण शाह के मुँह में लगा और दाँत जीभ को लेते

हुए तालू फोड़ पार निकल गया । शहाबुद्दीन जहाँ का तहाँ हाथ पैर छुटपटाने लगा ।

लोगों में हलचल मच गई । बहुत लोग भाग खड़े हुए । हाहाकार मच गया, बहुत लोग तलवारें सूत कर राजा पर भपटे । कवि ने अब विलम्ब न कर जूड़े से कटार निकाल धैर्य पूर्वक अपने पेट में बाँँ से दाँँ घुमा कर पेट चाक कर लिया, और दूसरे हाथ से आँतों को पकड़ कटार राजा को हाथ में देकर गिर गया । राजा ने भी गोविन्द का नाम लेकर कटार अपने पेट में भोंकली ।

इस प्रकार पृथ्वीराज और चन्द ने साका रच कर वीर यज्ञ की पूर्णाहुति दी । एक दिन एक ही नक्षत्र में जन्मे, साथ-साथ पले, खेले और मुख दुःख के साथी रहे, फिर एक साथ, एक ही क्षण में लाँहे की तीखी धार का रस पान कर अमर हुए ।

—इति—

नवीन प्रकाशन

३॥) रुदिन

२॥) वत्सराज

२॥) तान उपन्यास

१॥) समाज : धर्म : राजनीति

३) पूणाहुति

४) मिट्टी मीनार

४) बसन्तसेना *

४) जयकच्छ *

४) जयमेवाड़

४॥) अलख निरंजन

२॥) अन्धकार

२॥॥) अश्रुगङ्गा

१॥) नारी का मूल्य

१॥) बचपन की कहानियाँ

३॥) प्यार पैसा

२॥) रामभरोखा

२॥) छेड़छाड़

२) आत्मकथा (शरद०)

२॥) तथागत

२॥) विषकन्या

प्राप्ति स्थान—

चौधरी एण्ड सन्स

बनारस—१

